पीजीडीजीसी - 03

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

परामर्श के विविध आयाम

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. विनय कुमार पाठक

कुलपति

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

संयोजक/ समन्वयक एवं सदस्य

संयोजक

डॉ. रजनी रंजन सिंह

निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ

व.म.खु.वि.वि., कोटा

समन्वयक

डॉ. कीर्ति सिंह

सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ

व.म.खु.वि.वि., कोटा

सदस्य

1. प्रो. जे. के. जोशी
निदेशक, शिक्षा विद्या शाखा
उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी

2. प्रो. दिव्य प्रभा नागर
पूर्व कुलपति
ज.रा. नागर राजस्थान विद्यापीठ
विश्वविद्यालय, उदयपुर

3. प्रो. (डॉ) एल.आर. गुर्जर
निदेशक (अकादमिक)
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

4. प्रो. एच. बी. नंदवाना
निदेशक, सतत शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

5. प्रो. दामिना चौधरी
आचार्य,शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

6. डॉ. रजनी रंजन सिंह
निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

7. डॉ. अनिल कुमार जैन
सह आचार्य,शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

8. डॉ. कीर्ति सिंह
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

9. **डॉ. पतंजलि मिश्र**
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

10. **डॉ. अखिलेश कुमार**
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

संपादन एवं पाठ्यक्रम लेखन

सम्पादक

डॉ. कीर्ति सिंह
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

पाठ्यक्रम लेखन

1 **डॉ. सारिका मोहता (इकाई 6 एवं 11)**
सहायक आचार्य, मनोविज्ञान विभाग
एम.आई.टी.एस., लक्ष्मणगढ़ (सीकर) राजस्थान

2 **डॉ. प्रीति सिंह(इकाई 2 एवं 12)**
वरिष्ठ व्याख्याता, एस.ओ.ई.,
जे.एन.यू., जयपुर

3 **डॉ. योगेन्द्र पांडे (इकाई-3)**
सहायक आचार्य, शिक्षा विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तर प्रदेश

4 **डॉ. एस.सी. पाचौरी(इकाई 4 एवं 5)**
सहायक आचार्य,
श्रीगुरू राय पी.जी. कॉलेज, पथरी बाग, देहरादुन,
उत्तराखंड

5 **डॉ. अखिलेश कुमार(इकाई-8)**
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

6 **डॉ. कीर्ति सिंह (इकाई-1,9,13 एवं 15)**
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

7 **डॉ. सीमा सिंह (इकाई -10)**
सह आचार्य, इन्द्रप्रस्थ महिला
महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

8 **डॉ. पी.एस. पांडे(इकाई -7)**
निदेशक, ज्ञानदेव
इंस्टीटूयूट ऑफ मेनेजमेन्ट एंड साइंस
सागर, मध्य प्रदेश

9 **डॉ. पतंजलि मिश्र(इकाई -14)**
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. विनय कुमार पाठक
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

प्रो. एल.आर. गुर्जर
निदेशक (अकादमिक)
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

प्रो. करण सिंह
निदेशक
पाठ्य सामग्री उत्पादन
एवं वितरण प्रभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

डॉ. अनिल कुमार जैन
अतिरिक्त निदेशक
पाठ्य सामग्री उत्पादन
एवं वितरण प्रभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

उत्पादन ISBN

इस सामग्री के किसी भी अंश को व.म.खु.वि.वि., कोटा ,की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है। व.म.खु.वि.वि., कोटा के लिए कुलसचिव, व.म.खु.वि.वि., कोटा (राजस्थान) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

पीजीडीजीसी - 03

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

अनुक्रमणिका

इकाई सं.	इकाई का नाम	पृ.सं.
इकाई 1	विद्यालय में परामर्श	5
इकाई 2	जीवनवृत्ति परामर्श	36
इकाई 3	विशेष आवश्यकताओं वाले बालकों के लिए परामर्श	48
इकाई 4	माता - पिता और परामर्श	63
इकाई 5	परिवार और परामर्श	68
इकाई 6	संकट हस्तक्षेप में परामर्श	81
इकाई 7	पुर्नवास परामर्श	91
इकाई 8	मादक-द्रव्य दुरुपयोग एवं परामर्श	105
इकाई 9	मानसिक स्वास्थ्य और परामर्श	126
इकाई 10	खेल परामर्श	153
इकाई 11	परामर्श के आधुनिक क्षेत्र	168
इकाई 12	किशोरावस्था में परामर्श	181
इकाई 13	वैवाहिक परामर्श	191
इकाई 14	औद्योगिक परामर्श	207
इकाई 15	महाविद्यालय परामर्श	225

इकाई - 1

विद्यालय में परामर्श

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 प्राथमिक विद्यालय में परामर्श
1.3 माध्यमिक विद्यालय में परामर्श
14 उच्चतर माध्यमिक विद्यालय में परामर्श
1.5 परामर्श में कक्षा अध्यापक की भूमिका
1.6 कक्षा में परामर्श
1.7 परामर्श और पाठ्यक्रम
1.8 परामर्श और पाठ्य सहगामी क्रियाएं
1.9 विद्यालय में परामर्श कार्यक्रम की योजना
1.10 परामर्श में मनोवैज्ञानिक परिक्षणों का उपयोग
1.10 सारांश
1.12 बोध प्रश्न

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान सकेंगे कि :

- प्राथमिक विद्यालय में परामर्श की आवश्यकता।
- माध्यमिक विद्यालय में परामर्श की आवश्यकता।
- उच्चतर माध्यमिक विद्यालय में परामर्श की आवश्यकता ।
- कक्षा में परामर्श की आवश्यकता ।
- परामर्श और पाठ्यक्रम व पाठ्य सहगामी क्रियाओं में अन्त: संबंध
- विद्यालय में परामर्श कार्यक्रम की योजना एवं महत्व
- विद्यालयी परामर्श में उपयोग होने वाले मनोवैज्ञानिक परिक्षणों का महत्व

1.1 प्रस्तावना

मुदालियर एवं कोठरी शिक्षा आयोग ने माध्यमिक विद्यालयों के संगठन, संरचना एवं कार्यो में परिवर्तन हेतु अनेक महत्वपूर्ण सिफारिशें की हैं। इन सिफारिशों के आधार पर शिक्षा के उद्देश्यों और विधियों में परिवर्तन हुआ है। वर्तमान समय में औद्योगिक, विज्ञान एवं तकनीकी ज्ञान में विकास, व्यवसायों में विशिष्टीकरण तथा माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम के विविधीकरण के कारण शिक्षा का प्रारूप ही बदल रहा है। दूसरी ओर प्रत्येक बालक और बालिका को शिक्षित करने का प्रयास किया जा रहा है। शिक्षा के उपरान्त उन्हें उनकी योग्यताओं और क्षमताओं के अनुकूल व्यवसाय में लगा देना भी विद्यालय का आवश्यक कार्य हो गया है। प्रत्येक को उसकी योग्यता ओर अभिरूचि के अनुसार शिक्षा देना तथा व्यवसाय दिला देने के लिए प्रत्येक विद्यालय में संगठित शैक्षणिक एवं व्यावसायिक मार्गदर्शन एवं परामर्श सेवा केन्द्र की आवश्यकता है।

पाठयक्रम की विविधता तथा छात्र-छात्राओं की वैयक्तिक विभिन्नता के कारण उपयुक्त पाठ्यक्रम के चुनाव में सहायता देना परार्मशक का कार्य हैं अनेक छात्र तथा छात्राएँ एक विशेष शैक्षणिक पाठ्यक्रम को इसलिये चुन लेते है, क्योंकि वे अन्य पाठ्यक्रमों की उपयोगिता से भिज्ञ नहीं होते। बहुधा माता-पिता की महत्वाकांक्षा भी बालक की क्षमता के विपरीत विषयों के चुनाव का कारण होती हैं। इसलिये उचित मार्गदर्शन एवं परामर्श सेवा के द्वारा छात्र-छात्राओं को उचित विषयों के चुनाव में सहायता पहुँचाई जा सकती है।

शिक्षा में परामर्श का विशेष स्थान है। परामर्श सेवा शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक हैं। बालक-बालिकाओं के सर्वांगीण विकास-बौद्धिक, संवेगात्मक, सामाजिक, नैतिक और शारीरिक विकास के लिये उचित परामर्श की आवश्यकता पड़ती हैं समुचित संदर्शन के अभाव में छात्र या छात्रा को अभिवृद्धि और विकास में कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है।

1.2 प्राथमिक विद्यालय में परामर्श

परामर्श के मूल आधार इस प्रकार है

1. प्रजातान्त्रिकता :- प्रजातन्त्र में प्रत्येक व्यक्ति को आत्माभिव्यक्ति का पूर्ण अवसर मिलना चाहिए। आत्माभिव्यक्ति के लिये शिक्षा एंव सम्पूर्ण गुणों का पूर्ण विकास आवश्यक हैं। इसलिये परामर्श सेवा का मुख्य उद्देश्य प्रत्येक छात्र एवं छात्रा को शिक्षित करना तथा गुणों के विकास में सहायता देना है।
2. समानता :- परामर्श सेवा केवल असामान्य, विशिष्ट, असाधारण, कुसमायोजित ओर समस्यामूलक बालक-बालिकाओं के लिये नहीं हैं यह सेवा सब छात्र-छात्राओं के लिये उपलबध हैं क्योंकि इसका उद्देश्य प्रत्येक को उसकी योग्यताओं और अभिरूचियों के अनुसार प्रगति हेतु अवसर प्राप्त कराना है।
3. निरन्तरता :- यह सेवा केवल विद्यालयीन जीवन तक ही उपलब्ध नहीं रहती हैं इसका उद्देश्य बालक-बालिकाओं की जीवन पर्यन्त, अबाधगति एवं क्रमबद्ध सेवा करना है। बालक या

बालिका की प्रत्येक विकासावस्था जैसे- बाल्यावस्था, किशोरावस्था, प्रौढ़ावस्था आदि में आने वाली समायोजन एवं अन्य कइिनाईयों का निवारण करने में सहायता पहुँचाना है।

4. अनुरूपता :- वंशानुक्रम और पर्यावरण के प्रभाव से बालक-बालिकाओं में वैयक्तिक भिन्नता आ जाती हैं कोई भी दो बालक या बालिकाएँ अनुरूप नहीं होते। उनकी शारीरिक, मानसिक, सामाजिक क्षमताओं में अन्तर होता है। वे अभिरूचियों अभिक्षमताओं, अभिवृत्तियों, प्रतिभाओं में भी अलग-अलग होते है। इसलिये परामर्श सेवा का कार्य प्रत्येक की योग्यताओं, क्षमताओं , अभिरूचियों के अनुरूप प्रगति में सहायता देना है।

5. क्रियात्मकता :- प्राय: यह देखा गया है कि कुछ बालक-बालिकाओं की प्रगति किसी स्थान पर रूक जाती हैं। प्रगति रूकने के कारण वह अनेक कइिनाईयों का सामना करता हैं। यह सेवा उनकी प्रगति की कठिनाईयों को दूर कर उन्हें अधिक क्रियाशील बनाती है, जिससे वे अपने लक्ष्यों को प्राप्त कर सकें।

6. आत्मनिर्भरता :- इस सेवा का उद्देश्य प्रत्येक छात्र-छात्राओं को आत्मबोध कराना है, तथा उन्हें उनकी योग्यताओं और सीमाओं की जानकारी देना है अपनी योग्यताओं के अनुसार कार्य करने से उनमें आत्मविश्वास और आत्मनिर्भरता बढ़ती है। आत्मनिर्भरता के कारण उन्हें कहीं भी कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता।

7. सार्थकता :- इस सेवा का एक उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति के जीवन को सार्थक बनाना है। सामान्यत: प्रत्येक छात्र-छात्रा में व्यक्तित्व सम्बन्धी कुछ न कुछ कमजोरियाँ होती है। जैसे- चिन्ता, भय, हीनता की भावना, अकारण घबड़ाना, शर्माना, संवेग नियन्त्रण न कर पाना आदि। इसलिए इस सेवा के द्वारा उन्हें उनकी कमजोरियों पर विजय पाने का प्रयास कराया जाता है, जिससे वे सुखी और उपयोगी जीवन जीए और उसे सार्थक कर सकें।

1.3 माध्यमिक विद्यालय में परामर्श

प्राथमिक विद्यालय में परामर्श का मुख्य उद्देश्य बालक-बालिकाओं की शारीरिक,सामाजिक, संवेगात्मक और शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना है प्रत्येक बालक या बालिका को घर और विद्यालय में सांमजस्य की कइिनाई होती है। इसलिये परामर्श द्वारा उन्हें संतोषजनक सांमजस्य में सहायता पहुँचाई जा सकती है। परामर्श एक ऐसी सेवा है जो प्रत्येक बालक के लिए आवश्यक हैं। यह आवश्यक नहीं कि यह सेवा केवल व्यवहार की समस्या, पढ़ने की कठिनाई और संवेगात्मक अस्थिरता वाले बालक-बालिकाओं के लिये ही दी जावे। यह सेवा तो सब बालकों के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और व्यक्तित्व के विकास के लिए उपयोगी है। औसत से कम योग्यता वाले तथा औसत से अधिक योग्यता वाले बालक-बालिकाओं के लिये तो परामर्श लाभदायक है ही, औसत बालकों के लिये भी उपयोगी है। सब बालक-बालिकाओं की कुछ न कुछ आवश्यकताएँ होती है। कुछ समस्याएँ प्रारम्भिक आयु से प्रारम्भ होती है और फिर बड़ी आयु में जटिल रूप धारण कर लेती हैं इसलिय बालकों को अल्प आयु से ही उचित परामर्श देना चाहिए। विद्यालय में शैक्षिक प्रगति के लिये भी परामर्श एक आवश्यक तत्व है इसे पाठ्यक्रम के साथ-साथ चलाना चाहिए।

परामर्श की रूपरेखा :-

1. अभिविन्यास :- प्राथमिक विद्यालय में परामर्श कार्यक्रम के अन्तर्गत सबसे पहला कार्य अभिविन्यास हैं विद्यालय लगने के प्रारम्भिक दिनों में बालकों और उनके माता-पिता को विद्यालय की इमारत का भ्रमण कराना चाहिए। फिर प्रत्येक विभाग के कार्यों का परिचय देते हुए पूर्ण विद्यालय के कार्यक्रम, दिनचर्या एवं अन्य गतिविधियों से परिचय कराना चाहिए। इसके पश्चात् शाला परामर्शक और अध्यापकों को मिलकर विभिन्न गतिविधियों का आयोजन करना चाहिए। जिससे बालक-बालिकाओं को विद्यालय की कार्यप्रणाली और कार्यक्रमों के बारे में जानकारी मिल जाए। बालक-बालिकाओं को विद्यालय के समस्त कर्मचारियों और उनके कार्यों से भी अवगत करा देना चाहिए।

   अभिविन्यास कार्यक्रम द्वारा घर और विद्यालय के बीच की दूरी कम हो जाती है, तथा छात्र को विद्यालय में एक कक्षा से दूसरी कक्षा में जाने पर कठिनाईयों का सामना नहीं करना पड़ता, क्योंकि उसे प्रत्येक कक्षा का कार्यक्रम और पाठ्यक्रम की पूर्ण जानकारी होती है। अभिविन्यास का कार्य अध्यापकों द्वारा सरलता से किया जा सकता है। व्यक्तिगत परिचय, खेलों, प्रश्नावली, आत्मपरिचय आदि की सहायता से अध्यापक बालक-बालिकाओं के विषय में पूर्ण जानकारी मालूम कर उन्हें उनकी रूचि के अनुसार कार्यों में लगा सकते हैं। अभिविन्यास कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य नये प्रवेश पाने वाले बालक-बालिकाओं को विद्यालय के कार्यक्रम, कर्मचारियों और अन्य बालक-बालिकाओं से परिचित कराना है। यह कार्य सामूहिक परामर्श विधि से सरलता से किया जा सकता है।

2. शैक्षिक परामर्श :- प्राथमिक विद्यालय में बालक-बालिकाओं के लिये शैक्षिक परामर्श देना आवश्यक है। शैक्षिक परामर्श का तात्पर्य बालक-बालिकाओं की इच्छानुसार विषय समूह में रखना, उनकी योग्यतानुसार विषयों में उपलब्धि प्राप्ति के लिए प्रेरित करना तथा उनकी विषय सम्बन्धी सामान्य कठिनाईयों को दूर होना चाहिए। मन्द बुद्धि, तीव्र बुद्धि तथा शारीरिक न्यूनता वाले बालक-बालिकाओं को विद्यालय के पर्यावरण में सामजस्य में कठिनाई होत हो, जिन्हें कक्षा या विद्यालय के कार्यक्रम के अनुरूप चलने में कठिनाई हो तथा जो बालक कठिन प्रयास के बाद भी औसत शैक्षिक प्रगति करने में असफल रहते है, उन्हें परामर्श की आवश्यकता पड़ती है।

   प्राय: छोटे बालक-बालिकाओं को विषय वस्तु समझने में कठिनाई होती हैं वे स्वतन्त्र रूप से प्रश्न के उत्तर तैयार नहीं कर पाते। कभी-कभी विषय के प्रारम्भिक भाग को न समझने के कारण वे आगे के पाठों में पीछे हो जाते हैं कुछ समय बाद उन्हें उस विषय से आरूचि सी हो जाती हैं इससे कभी-कभी वे विद्यालय छोड़ने को बाध्य हो जाते है।

   (अ) विद्यालय परिवर्तन :- एक विद्यालय को छोड़कर जब छात्र नया विद्यालय में प्रवेश पाते हैं तब भी उन्हें शैक्षिक परामर्श की आवश्यकता पड़ती है। किन्हीं भी दो विद्यालयों के पाठ्यक्रम, गतिविधियों आदि में कुछ न कुछ अन्तर रहता ही है। नये

विद्यालय में छात्र को नये पर्यावरण, नये अध्यापकों और नये मित्रों का सामना करना पड़ता है। सबसे बड़ी कठिनाई होती है। इसलिये परामर्श द्वारा ऐसे छात्रों की उचित सहायता की जा सकती है। ऐसे छात्रों को नये शिक्षकों के स्नेह, और सहानुभूति की आवश्यकता हैं। पुराने विद्यालय और अध्यापकों की बुराई नहीं करनी चाहिए। परन्तु समय-समय पर प्रोत्साहित कर उन्हें अपना पाठ तैयार करने में सहायता देना चाहिए। सम्भव है कि बालक के पूर्व के विद्यालय का इस नये विद्यालय से स्तर कम हो। इसी स्थिति में बालक अवश्य पढाई में कमजोर होगा इसलिये उसकी कठिनाई को व्यक्तिगत रूप से हल करना चाहिए। थोड़े दिन के कठिन प्रयास से वह अपनी कमजोरी दूर कर लेगा इसके लिए अध्यापकों का सद्व्यवहार और स्वयं समय देकर उसे व्यक्तिगत रूप से पढ़ाना आवश्यक है।

(ब) विषय की कठिनाई :- कुछ बालक प्राय: सभी विषयों में कमजोर होते हैं और कुछ एक दो विषय में ही कमजोर होते है। उनके कमजोर होने के कारण हो सकते हैं जैसे- पढ़ाई में मन न लगना, पढ़ते समय ध्यान केन्द्रित करने में कठिनाई होना, किसी विषय से अरूचि होना, योग्यता से विषय का कठिन होना आदि। इन कारणों के देखते हुए यह आवश्यक है कि बालक के पढ़ने में कमजोर होने के कारणों का सही पता लगाया जाए। फिर उस कारण को दूर करने के लिए उचित परामर्श देना चाहिए। इसके लिये अन्य अध्यापकों और पालकों का सहयोग भी आवश्यक है।

3. समायोजन :- शैक्षिक प्रगति में बाधा का मुख्य कारण बालक की विद्यालयीन वातावरण में समायोजन की कड़िनाई है। एक छोटे पारिवारिक वातावरण से बालक विद्यालय के बड़े वातावरण में अनेक कठिनाईयों का अनुभव करता है। विद्यालय में वह नये व्यक्तियों को सम्पर्क में हीनता का अनुभव करता हैं। नये-नये बालक-बालिकाओं से वह घुल-मिल नहीं पाता। इसके सिवाय अपने आपको विद्यालय के दैनिक कार्यों के अनुकूल बनाने में भी कठिनाई होती है।

प्राय: देखा गया है कि जो बालक-बालिकाएँ बाल मन्दिर, मान्टेसरी या नर्सरी स्कूलों से आते हैं उन्हें समायोजन की अधिक कठिनाई नहीं होती। यदि प्रारम्भिक स्तर पर बालक-बालिकाओं को अध्यापकों और वरिष्ठ छात्र-छात्राओं द्वारा स्नेह और सहानुभूति मिले तो उन्हें समायोजन की कड़िनाई। अध्यापक को बालक की भूमिका देखना चाहिए। बालक की प्रत्येक आवश्यकता को समझकर उसे सन्तुष्ट करना चाहिए। बालक की अभिरूचियों को पहचानकर उन्हें विकसित करने का अवसर देना चाहिए। यदि अध्यापक बालक की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को पूरा करने में सफल हो जाते है। तो बालक को समायोजन में कोई कठिनाई नहीं होगी।

4. कक्षा में छात्रों की अधिक संख्या :- अधिक संख्या वाले बालकों की कक्षा में अध्यापक को प्रत्येक बालक से व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करने में अवश्य कठिनाई होगी। ऐसी स्थिति में अध्यापक को अपने छात्रों को छोटे-छोटे समूहों में बाँट देना चाहिए। इन समूहों के सम्पर्क में

आने में अध्यापक को अधिक कठिनाई नहीं होगी। बालक भी समूह में अपनापन का अनुभव करेंगे और अध्यापक को प्रत्येक बालक के सम्बन्ध में जानकारी मिल जावेगी।

5. सामूहिक क्रियायें :- समूह क्रिया के द्वारा बालक की शैक्षिक रूचि और कठिनाईयों का ज्ञान हो जाने पर अध्यापक उनकी शैक्षिक प्रगति में अपना सहयोग दे सकता है। बालकों को साहसी बनाने और उनकी झिझक को दूर करने के लिये एक कक्षा के छात्रों को दूसरे कक्षा के छात्रों से मिलने के अवसर देना चाहिए। विद्यालय के सब बच्चों को विभिन्न श्रेणियों में बाँटकर अनेक सामूहिक क्रियाओं का आयोजन अधिक लाभदायक होगा। इस प्रकार के प्रत्येक समूह में सब कक्षाओं के छात्र सम्मिलित रहेंगे और वे सब मिलकर समूह के कार्य में हाथ बटायेंगे। इससे नये छात्र पुराने और वरिष्ठ छात्रों के सम्पर्क में आ जावेंगे। इससे उनका विद्यालय के प्रति डर दूर होगा। तथा गतिविधियों में भाग लेने से उनकी अभिरूचि अधिक जागृत हो जायेगी।

6. शैक्षिक प्रगति अभिलेख :- प्रत्येक बालक का प्राथमिक विद्यालय से ही शैक्षिक प्रगति अभिलेख तैयार करना बहुत उपयोगी है। इस प्रकार के अभिलेख में बालक का परिचयात्मक वर्णन, स्वास्थ्य, व्यक्तित्व, चरित्र, आदतें, मानसिक एवं शारीरिक योग्यताएँ तथा शैक्षणिक प्रगति का विवरण रखा जा सकता है जिसका उपयोग उसके समय-समय पर परामर्श के काम में आता है।

7. पाठ्यसहगामी क्रियायें :- प्राथमिक विद्यालयों के बालक-बालिकाओं के लिये कक्षा के बाहर पाठ्य-सहगामी क्रियायें लाभप्रद हैं। छोटी आयु के होने के कारण इन बालक-बालिकाओं को रचनात्मक कार्यों में अधिक आनन्द होता है। सुनियोजित गतिविधियाँ उनके व्यक्तित्व विकास और अभिरूचि बढ़ाने में सहायक होंगी। जहाँ उन्हें एक दूसरे से सम्पर्क में आने से लाभ होगा वहीं वे परस्पर सहयोग की भावना, मिलकर काम करना, समूह के हित में काम करना, सामूहिक सफलता का महत्व आदि भी सीखेंगे।

   पाठ्य-सहगामी क्रियाओं द्वारा बालकों की मनोवैज्ञानिक आवश्यकतायें पूरी की जा सकती हैं। उनमें आत्मविश्वास की भावना का विकास हो सकता है। इस प्रकार की गतिविधियों के अन्तर्गत क्लब, जैसे-साहित्य क्लब, खेलकूद क्लब, ड्रामा क्लब आदि बनाये जा सकते हैं। इन गतिविधियों में भाग लेने से बालक की अभिरूचि विद्यालय की और बढ़ेगी तथा अपनत्व की भावना का भी विकास होगा।

8. आदतें डालना :- अधिकांश परिवारों में बालक-बालिकाओं की व्यक्तिगत आदतों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता, जैसे स्वच्छ कपडे पहनना, नाखून काटना, बाल काटना, जूते-मोजे पहनना, रोज स्नान करना, सुबह नियम से दिनचर्या करना आदि। इसी प्रकार खाना खाने का तरीका चलने-फिरने, बैठने, बोलने का तरीका, घर में आये मेहमानों से बातचीत करना, किसी वस्तु को देने-लेने का तरीका आदि कुछ नहीं सिखाया जाता। कुछ अभिभावकों का मत है कि यह सब सिखाना विद्यालय का कार्य है। विभिन्न स्तर वाले परिवारों से आने के कारण भी बालक -बालिकाओं की आदतों में एकरूपता नहीं होती। इसलिए अध्यापक को प्रत्येक छात्र-

छात्रा को व्यक्तिगत आदतें डालने में सहायता देना चाहिए। बार-बार के अभ्यास कराने से उनमें अच्छी आदतें डाली जा सकती है।

1.3 माध्यमिक विद्यालय में परामर्श

माध्यमिक विद्यालय का अपना महत्व है। बालक-बालिकायें किशोरावस्था के प्रारम्भ में माध्यमिक विद्यालय में प्रवेश पाते है। माध्यमिक विद्यालय का कार्य निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति करना है।

1. प्रारम्भिक किशोरावस्था के अनुकूल शैक्षिक वातावरण का निर्माण करना।
2. प्राथमिक विद्यालय से उच्चतर माध्यमिक विद्यालय में जाने की बीच की कड़ी का निर्माण करना।
3. प्राथमिक विद्यालय के बालक-बालिकाओं को और अधिक शिक्षित बनाने का कार्य करना।
4. बालक-बालिकाओं में शैक्षिक एवं व्यावसायिक प्रतिभा की खोज कर उनके विकसित होने में सहायता देना।
5. नैतिक एवं चारित्रिक विकास के लिए उपयुक्त वातावरण का निर्माण करना।

माध्यमिक विद्यालय के छात्र-छात्राओं में किशोरावस्था की प्रारम्भिक अवस्था के कारण मानसिक अस्थिरता रहती है। उन्हें अपने विचार व्यवस्थित ढंग से रखने में कइिनाई होती है। उनमें मानसिक, सामाजिक और संवेगात्मक अपरिपक्वता की स्थिति रहती हैं उनमें एक आनतरिक वेग उत्पन्न होता है जिसे वह मानसिक एवं शारीरिक रूप से प्रकट करते रहते है। इसी व्यवस्था में परिवार के सदस्यों, मित्रों विद्यालय ओर अध्यापकों के प्रति उनकी अभिवृत्तियों का निर्माण होता है। अपने लड़के या लड़की होने का उन्हें आभास होने लगता है। बालिकायें अपने कपड़ों के प्रति जागरूक हो जाती हैं और अपनी निकटतम सहेली के अनुरूप पोशाक पहनना पसन्द करती हैं बालों को नये-नये तरीके से काढ़ने में रूचि बढ़ जाती है। वे लड़कों से अलग अपना समूह बना लेती हैं तथा लड़कों को संदेह और उत्सुकता की दृष्टि से देखती है। इस आयु में लड़कों में स्वाभिमान बढ़ जाता है। वे स्वतन्त्र रूप से कार्य करना चाहते हैं लड़कियों से अलग अन्य लड़कों की टोली में रहना या खेलना पसन्द करते हैं।

माध्यमिक विद्यालयों के प्रत्येक अध्यापक को इन पूर्व किशोरावस्था के बालक-बालिकाओं के मनोविज्ञान का ज्ञान होना चाहिए। प्रतिदिन उन्हें व्यावहारिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इसलिए परामर्श का अध्यापक की सहायता करना आवश्यक है।

आत्मसंयम हेतु परामर्श : विभिन्न कार्यक्रमों द्वारा पूर्ण किशोरावस्था वाले बालक-बालिकाओं को आत्मसंयम का प्रशिक्षण दिया जा सकता है। आत्मसंयम के प्रशिक्षण से अनेक व्यवहार सम्बन्धी समस्यायें सरलता से हल हो सकती है। यदि बालक-बालिकाओं को संवेगात्मक नियन्त्रण का महत्व समझाया जाये तो उनके व्यवहार में काफी परिवर्तन आ जायेगा। आवश्यकतानुसार पाठ्यसहगामी क्रियाओं के माध्यम से संवेगात्मक नियन्त्रण सिखाया जा सकता है।

मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु परामर्श : प्रत्येक बालक बालिका की अपनी मनोवैज्ञानिक आवश्यकताएँ होती है। यदि ये आवश्यकताएँ पूरी नहीं हो पातीं तो अनेक मानसिक

समस्याएँ खड़ी हो जाती है। यह उनके विकास की अवस्था होती है। समाज की सामान्य आवश्यकताओं और वांछित व्यवहार के अनुरूप व्यवहार करने में कठिनाई होती है। वे अपनी इस कठिनाई के कारणों को स्वयं नहीं जानते। मानसिक तनाव, शर्मीलापन, दूसरे के सामने हीनता की भावना, अकारण भय, संवेगों पर अनियन्त्रण आदि कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है।

कुशल परामर्शक इस आयु के बालक-बालिकाओं की मानसिक, सामाजिक और संवेगात्मक आवश्यकताओं को समझकर उन्हें व्यावहारिक एवं सामजिक कार्यों में लगा दें जिससे उनका और उनके समूह का लाभ हो। इसके लिये खेल-कूद, कवायद (पी.टी.), स्काऊटिंग, नाटक, भ्रमण, हाकी क्लब्स आदि कार्य उपयोगी रहेंगे।

समायोजन :- प्रत्येक छात्र के लिये विद्यालय जाना एक आनन्ददायक अनुभव होना चाहिए। एक विद्यालय से जब छात्र दूसरे नये विद्यालय जाता है तब उसे सुखद अनुभूति होती है। उसकी इस सुखद अनुभूति को उचित परामर्श द्वारा बनाये रखना चाहिए। इसके लिये विद्यालय की कार्यप्रणाली, नियम, गतिविधियाँ, विभिन्न विभाग, पाठ्यक्रम, साहित्यिक और सांस्कृतिक कार्य, प्रतियोगिताएँ, आदि के बारे में विस्तृत जानकारी दे देना चाहिए। छोटे-छोटे समूह में विद्यालय का पूर्ण भ्रमण कराकर विभिन्न विभाग और उसकी कार्य प्रणाली से अवगत करा देना चाहिए।

नवीन प्रवेश प्राप्त विद्यार्थी को प्रारम्भिक अवस्था में सामयोजन की कठिनाई होती है। नवीन वातावरण और नये-नये छात्रों तथा अध्यापकों से बातचीत में झिझक महसूस होती है। अतएव सामूहिक आयोजन कर नये छात्रों का पुराने छात्रों के साथ सम्बन्ध स्थापित करा देना चाहिए। प्रत्येक अध्यापक को समय निकालकर नये छात्रों से सम्पर्क स्थापित कर उनके विषय में पूरी जानकारी ले लेनी चाहिए। इस प्रकार परिचय से नये छात्रों में भय और झिझक दूर हो जाती है।

हेगरसटाउन और मेरीलेंड ने माध्यमिक छात्रों के समायोजन के लिए निम्नलिखित विधि बताई है:-

उद्देश्य		**विधि**	
1.	नवीन विद्यालय के वातवरण में सामयोजन	1.	आपस में परिचय
		2.	विद्यालय का भ्रमण
		3.	अध्यापकों और कार्यकर्ताओं से परिचय
2.	विद्यालय की गतिविधियों का ज्ञान	1.	विद्यालय की गतिविधियों संबंधी पुस्तिका देना
		2.	वार्ता द्वारा गतिविधियों के संबंध मेंबताना
		3.	सम्बन्धित विभागों में ले जाकर कार्यविधि
3.	पाठ्यक्रम सम्बन्धी ज्ञान	1.	वार्ता द्वारा

		2.	पुराने विद्यार्थियों के सम्पर्क द्वारा
		3.	पाठ्यक्रम सम्बन्धी पुस्तकें देकर
4.	शैक्षिक प्रगति की विधि बताना	1.	वार्ता द्वारा-अध्ययन कैसे करें ? उत्तर कैसे लिखें ? परीक्षा की तैयारी कैसे करें ? आदि।
5.	व्यक्तित्व विकास	1.	साहित्यिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों में भाग लेने के लिये प्रोत्साहन।
		2.	योग्यताओं,अभिरूचियों, अभिक्षमताओं के विकास के लिये उपयुक्त
		3.	व्यक्ति के गुण, आत्म विश्वास और आत्म निर्भरता के अवसरों का निर्माण।

आत्म विश्लेषण हेतु परामर्श :- परामर्श का एक कार्य बालक में आत्म विश्लेषण की क्षमता का विकास करना है इससे बालक अपने आपको अच्छी तरह से पहचानने लगता है। आत्म विश्लेषण के लिये निम्नलिखित सुझाव हैं-

1. विभिन्न स्त्रोतों से अपने सम्बन्ध में साक्ष्य इकट्ठे कर उनके आधार पर अपने मूल्यांकन की क्षमता का विकास करना।
2. विद्यालय के पाठ्यक्रम के अन्तर्गत अपनी रूचि एवं क्षमता के अनुसार विषय चुनने की योग्यता का विकास करना।
3. पाठ्य सहगामी क्रियाओं में अपनी रूचियों के अनुसार भाग लेने का निर्णय लेना।
4. सामान्य समस्याओं के निराकरण हेतु अपनी योग्यता का उपयोग करने की आदत डालना।
5. अपने व्यक्तित्व की अच्छाई और बुराईयों के मूल्यांकन की क्षमता और उन्हें दूर करने का प्रयास करना।
6. परिस्थिति की आवश्यकताओं और अपनी योग्यताओं के तुलनात्मक विश्लेषण की क्षमता का विकास करना।
7. प्रत्येक समस्या को हल करने के लिये स्वयं अपनी योग्यताओं पर विश्वास करना।
8. अपनी प्रतिभाओं की पहचान ओर उनके विकास के प्रयास करना।
9. छोटी-छोटी बातों में दूसरों से राय लेकर निर्णय करने की अपेक्षा स्वयं अपना निर्णय लेने की क्षमता का विकास करना।

10. अपने बौद्धिक, शारीरिक, सामाजिक और संवेगात्मक विकास का मूल्यांकन करने की क्षमता।

सामूहिक परामर्श :- माध्यमिक विद्यालयों के छात्र-छात्राओं को निम्नलिखित विषयों पर सामूहिक परामर्श दिया जा सकता है।

1. समायोजन की व्यक्तिगत कठिनाईयों और उन्हें दूर करने के उपाय।
2. स्वयं की प्रगति के साधन एवं विधि।
3. अध्ययन में रूचि बढ़ाने की विधि।
4. अपनी योग्यताओं, अभिक्षमताओं, कौशल बढ़ाने के उपाय।
5. चरित्र निर्माण की विधि।
6. विभिन्न व्यवसायों के लिये आवश्यक विषयों की जानकारी।
7. सुखी जीवन के लिए आवश्यक आदतें और उनके अपनाने की विधि।
8. विभिन्न वातावरण को अनुकूल बनाने की क्षमता का विकास।
9. शैक्षिक,शारीरिक और मानसिक विकास के साधन।
10. जीवन के प्रति सही दृष्टिकोण का निर्माण।

व्यक्तिगत परामर्श :- किशोरावस्था के प्रारम्भ में बालक-बालिकाओं की अनेक व्यक्तिगत समस्याएं सामूहिक परामर्श से नहीं सुलझाई जा सकती। वैयक्तिक विभिन्नता के कारण कठिनाई स्तर और स्वभाव में अन्तर होता है। अतएव उनकी योग्यताओं व क्षमताओं के आधार पर व्यक्तिगत परामर्श द्वारा समस्या को सुलझाना लाभदायक होता है।

साक्षात्कार और परामर्श विधियों से बालक-बालिकाओं के सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी लेकर उनकी व्यक्तिगत समस्या के कारणों का अध्ययन किया जा सकता है, जैसे- कुछ छात्र-छात्राओं को व्यक्तित्व सम्बन्धी कठिनाई, कुछ को शैक्षिक, संवेगात्मक या सामाजिक विकास में कठिनाई होती है। अतएव व्यक्ति अध्ययन विधि द्वारा व्यक्तिगत परामर्श दिया जा सकता है।

परामर्श कक्षाएँ : प्रत्येक कक्षा में सप्ताह में एक परामर्श का पीरियड बहुत उपयोगी होगा। परामर्श के पीरियड में छात्रों की सामूहिक आवश्यकताओं को ढूँढ़ कर उनकी पूर्ति के साधन और सामूहिक समस्याओं के हल की विधि समझाया जा सकता है।

माता-पिता का सहयोग - विद्यालय के द्वारा दिए जाने वाले परामर्श के अलावा माता-पिता को घर पर अपने बालक-बालिका को उचित परामर्श देते रहना चाहिए। प्रत्येक घर में आवश्यक परामर्श साहित्य उपलब्ध हो तथा उनकी समस्या निवारण में माता-पिता सदैव सहयोग करें। बालक-बालिकाओं के चारित्रिक विकास एवं अच्छी आदतें डालने में माता-पिता से बहुत सहायता मिल सकती है। इसी प्रकार बालक की अभिरूचियाँ, व्यवहार, कमजोरियाँ, मनोरंजन के साधन, पसन्दगी ओर नपसन्दगी, अध्ययन की आदतें, अन्य भाई-बहनों से सम्बन्ध आदि की महत्वपूर्ण जानकारी परामर्शक को मिल सकती है। जिसकी सहायता से वह अपने परामर्श की रूपरेखा तैयार कर सकता है।

14 उच्चतर माध्यमिक विद्यालय में परामर्श

उच्चतर माध्यमिक विद्यालय में छात्र-छात्रा की आयु लगभग 15 से 18 वर्ष तक की होती है। इस आयु के प्रथम चरण में वह अपरिपक्व ओर अविकसित अवस्था में होता है। यह अवस्था उसके विकास की अन्तिम अवस्था होती है। किशोरावस्था की अन्तिम अवस्था तक वह शारीरिक एवं मानसिक विकास की अन्तिम दशा को पहुँच जाता है। वह अपने आन्तरिक वेगों और सामाजिक मान्यताओं से प्रेरित होकर व्यवहार करता हैं। आन्तरिक वेग उसे उसकी इच्छानुसार कार्य करने के लिए प्रेरित करते हैं। जबकि सामाजिक मान्यताएँ सीमा के अन्तर्गत कार्य करने के लिए बाध्य करती है। ऐसी स्थिति में उसे मानसिक संघर्ष का सामना करना पड़ता है। इसी प्रकार शारीरिक विकास की गति तीव्र होने के कारण शारीरिक तनाव भी अधिक रहता है। लिंगीय अंग भी अपनी पूर्ण अवस्था को पहुँच जाते है। वह स्वतन्त्रता चाहता है, अपने निर्णय स्वयं लेना पसंद करता हैं वह साहस एवं वीरतापूर्ण कार्य करने के लिए सदैव उत्सुक रहता है।

सामाजिक कार्यों में वह प्रौढ़ जैसा व्यवहार करता है। विपरीत लिंगी की और उसका ध्यान आकर्षित होता है। उसे घर परिवार की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति का ज्ञान हो जाता है। वह अपने व्यवसाय के सम्बन्ध में भी गम्भीरता से सोचने लगता हैं। परिवार एवं बाहरी चिन्ताओं का प्रभाव उसकी शैक्षणिक प्रगति पर पड़ता है।

इस आयु में छात्र या छात्रा अपने समवय वालों से सामाजिक मान्यता चाहता है। वह प्राय: समूह की सब गतिविधियों में भाग लेना चाहता है और दूसरों से अपने कार्यो के लिए प्रशंसा का अभिलाषी होता है। वह समूह के कार्यों में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका द्वारा विशेष स्थान बनाने का इच्छुक होता हैं। उसकी इस किशोरवस्था में उसके मित्रों की अभिव्यक्ति का उस पर बहुत प्रभाव पड़ता है। लेखक ने एक अध्ययन में पाया कि किशोरावस्था में अभिवृत्ति परिवर्तन में अभिभावकों से अधिक मित्रों का प्रभाव पड़ता है। एक किशोर अपने समवय के बालक-बालिकाओं के विचारों से शीघ्र सहमत हो जाता है। यहाँ तक कि वह बड़ों की बातों की उपेक्षा कर सकता है परन्तु समवय समूह के विचारों की कभी भी उपेक्षा नहीं करता। समूह के प्रति वह निष्ठावान रहता है।

किशोर बालक बहुत अधिक संवेदनशील होता है। वह अपनी शारीरिक पोशाक, बाल, वाणी, व्यवहार आदि के प्रति विशेष सजग रहता है वह छोटी से छोटी बातों का बड़ा ध्यान रखता है। वह अधिक भावुक होता है। उसी उत्तेजना के कारण ही किशोरावस्था में बालक या बालिका आतमहत्या कर लेते हैं उन्हें सवंगात्मक अस्थिरता के कारण ही विभिन्न परिस्थितियों में समायोजन में भी कठिनाई होती है।

परामर्श कार्यक्रम :- किशोरावस्था में परामर्श का उद्देश्य बालक को उसके विकास की अन्तिम अवस्था तक पहुँचाना हैं भिन्न-भिन्न बालक-बालिकाओं के विकास की स्थिति में भिन्नता होती हैं अतएव कार्यक्रम ऐसा होना चाहिए कि वह सबकी आवश्कताओं की पूर्ति कर सके। परामर्श कार्यक्रम को तीन भागों में बाँटा जा सकता है:-

1. व्यक्तिगत परामर्श :- व्यक्तिगत परामर्श का उद्देश्य बालक के समयोजन में सहायता करना है। किशोरावस्था के कारण उसे अनेक व्यक्तिगत और सामाजिक समस्याओं का सामना करना

पड़ता है। उसकी सबसे बड़ी समस्या उसमें सुरक्षा की भावना की कमी है इस कमी के कारण उसके मन में एक काल्पनिक भय बना रहता है। इसका प्रभाव उसके परिवार के सदस्यों, अन्य प्रौढ़ो और मित्रों के साथ सम्बन्धों पर पड़ता है। असुरक्षित और भयभीत किशोर कलहकारी, आक्रमणकारी, विनिवर्ती, शर्मीला हो जाता है। समायोजन के अभाव में इस आयु में बालक-बालिका के समायोजन के लिए व्यक्तिगत परामर्श देना चाहिए।

परामर्श को बालक या बालिका के समायोजन की कठिनाई को समझकर उसे दूर करने का प्रयास करना चाहिए। परामर्श देते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए :-

1. किशोरावस्था में मानसिक और शारीरिक तनाव होना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है।
2. शारीरिक विकास के कारण अंगों में हुए परिवर्तनों के विषय में समझाना।
3. छात्र-छात्राओं को उनके शारीरिक स्वास्थ्य और व्यक्तिगत कमजोरियों को समझाना।
4. सबसे अच्छे सामाजिक सम्बन्ध बनाने के विषय में समझाना।
5. स्वास्थ्य और दैनिक दिनचर्या के सम्बन्ध में समझाना।
6. अधिक से अधिक सामाजिक बनने के लिए प्रोत्साहन देना।
7. स्वयं प्रत्येक कार्य करने एवं अपने सम्बन्ध में स्वयं निर्णय लेने की क्षमता का विकास करना।
8. अपनी व्यक्तिगत अभिरूचियों और अभिक्षमताओं का विकास करना।
9. संवेगों पर नियन्त्रण रखना सिखाना।
10. लिंगीय ज्ञान और विपरीत लिंगीय से सद्भावना का व्यवहार करना सिखाना।

2. सामाजिक अभिवृत्ति का विकास :- किशोरावस्था में प्रत्येक बालक बालिका की सामाजिक अभिवृत्तियों का विकास हो जाना चाहिए। अतएव विद्यालय एक अभिवृत्ति विकास कार्यक्रम आयोजित कर सकता हैं इस कार्यक्रम में निम्नलिखित अभिवृत्तियों के विकास के लिए आवश्यक प्रशिक्षण दिया जा सकता है-

(अ) सामाजिक अभिवृत्ति :- सहयोग, नम्रता, प्रसन्न रहना, समानता का व्यवहार, सेवा भाव आदि।

(ब) पारिवारिक अभिवृत्ति :- माता-पिता के प्रति आदर की भावना, बड़ों के प्रति आदर, भाई-बहिनों से अच्छा व्यवहार, बाहर वालों से शिष्टाचार, घर के कार्यों में हाथ बँटाना, घर से मिले जेब खर्च के पैसे का उचित उपयोग, सोने उठने, नहाने आदि की अच्छी व्यक्तिगत आदतें डालना।

(स) नागरिक अभिवृत्ति :- अच्छे नागरिक के गुणों का विकास, सामान्य सर्वाजनिक स्थानों जैसे- स्टेशन, बस स्टैण्ड, सिनेमा हाल, पार्क आदि में अच्छा व्यवहार। बड़े और छोटों के प्रति समुचित दृष्टिकोण, मित्रों और विपरीत लिंगीय के प्रति सद्भावना, विद्यालय

तथा अन्य राष्ट्रीय इमारतों के प्रति आदर तथा समाज और देश के हित में कार्य करने की भावना का विकास।

(द) अनुशासन सम्बन्धी अभिवृत्ति :- बालक-बालिकाओं को किशारावस्था में अनुशासन के सम्बन्ध में सकारात्मक अभिवृत्ति विकसित करना आवश्यक है। शारीरिक एवं मानसिक तनाव के कारण अधिकांश बालक-बालिकाएँ उद्दण्ड हो जाते है। परिवार, विद्यालय या समाज के नियमों का पालन करना उन्हें अच्छा नहीं लगता। वे साहसपूर्ण तथा नये-नये कार्यो से दूसरे लोगों का ध्यान अपनी और आकर्षित करना चाहते हैं संवेगों के नियन्त्रण में उन्हें कठिनाई होती है। समूह का बल मिलने के कारण अवज्ञा, नियम तोड़ना, उ ण्डता आदि उनके साधारण कार्य हो जाते हैं ऐसी स्थिति में उन्हें अनुशासन का पाठ सिखाना कठिन कार्य है कुशल परामर्शक अनुशासन के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति विकसित कर उन्हें अनुशासन सिखा सकता है आन्तरिक अनुशासन की भावना उत्पन्न करने से उनमें अनुशासन स्थाई रूप से बना रहेगा। यदि छात्र-छात्राओं को खेल-कूद, स्काउट, पी.टी., एन.सी.सी., क्लब आदि का सदस्य बनने की प्रेरणा दी जाये तो इन गतिविधियों से अनुशासन की अभिवृत्ति सरलता से विकसित की जा सकती है। एक अध्ययन में पाया कि 'सह शिक्षा वाले विद्यालय में असहशिक्षा वाले विद्यालय के छात्र छात्राओं से अधिक अनुशासन होता है।

3. मनोरंजन हेतु परामर्श :- बालक-बालिकाओं के सर्वांगीण विकास के लिए मनोरंजन अत्यन्त महत्व रखता हैं अतएव विद्यालय की यह जिममेदारी होती है कि मनोरंजन की गतिविधियों के लिए उचित परामर्श दे। गतिविधियाँ ऐसी हों जो शारीरिक विकास के साथ सामाजिक ओर मानसिक विकास में भी सहायक हों तथा इनमें मनांरजन भी हो। प्राय: देखा गया है कि आज कल विद्यार्थी का शैक्षिक कार्य कम होता है। वह विद्यालय में केवल 4 से 5 घण्टे ही रहता है उसे घर का काफी समय मिलता है। इसलिए उसे अपने अवकाश का समय व्यवस्थित ढंग से व्यतीत करना चाहिए।

मनोरंजन हेतु परामर्श के लिए निम्नलिखित बातें महत्वपूर्ण हैं:-

1. अवकाश के समय बालक-बालिकाओं को मनोरंजक गतिविधियों में भाग लेने में सहायता करना।
2. मनोरंजक गतिविधियों से शैक्षिक विकास में सहायता पहुँचाना।
3. अभिरूचियों और अभिक्षमताओं के अनुसार गतिविधियाँ चुनना।
4. मानसिक एवं शारिरिक स्वास्थ्य का विकास करने में सहायता देना।
5. मनोरंजक कार्यक्रमों के माध्यम से किसी विशेष कौशल का विकास करना।
6. मनोरंजक गतिविधि से सामाजिकता सीखना।
7. गतिविधियों के माध्यम से अनुशासन सीखना।

4. लिंगीय परामर्श :- किशोर बालक- बालिकाओं को माता-पिता के अलावा विद्यालय मे नियमित लिंगीय परामर्श दिया जाता है।

परामर्श का कार्य बालक-बालिकाओं को समायोजन में सहायता देना शारीरिक अवयवों के बढ़ने के कारण किशोरावस्था में शारीरिक एवं मानसिक तनाव बना रहता है, साथ ही विपरीत लिंगी के प्रति आकर्षण होना भी सहज प्रक्रिया हैं ऐसी अवस्था में छात्र-छात्राओं को उचित परामर्श की आवश्यकता होती हैं परामर्श के अभाव में ये बालक-बालिकाएँ अनुचित कार्य करने लगत हैं, जिसका प्रभाव उनके शरीर ओर मन पर पड़ता है। स्वास्थ्य खराब होने लगता है, चिड़चिड़ाहट आ जाती है।

विद्यालय में परामर्श कार्यक्रम के अन्तर्गत किशोरावस्था के लड़के-लडकियों को लिंगीय शिक्षा एवं परामर्श देना चाहिए। सामूहिक रूप से वार्ताओं द्वारा परामर्श दिया जा सकता है। डाक्टर आदि की इस विषय पर वार्ताएँ आयोजित की जा सकती है।

सामूहिक परामर्श के अलावा लड़के-लड़कियों की व्यक्तिगत लिंगीय समस्याओं के निराकरण के लिये व्यक्तिगत परामर्श भी आयोजित करना चाहिए। हिलमैन का कथन है कि किशोर युवक-युवतियों को यदि मानसिक एवं शारीरिक श्रम में लगाये रखा जाए तो लिंगीय समस्याओं का सामना नहीं करना पड़ता।अतएवं परामर्शक को विद्यालय के छात्र-छात्राओं की लिंगीय कठिनाईयों को दूर करने के लिए सुनियोजित कार्यक्रम बनाना चाहिए।

2. **शैक्षिक परामर्श** :- भारतवर्ष में बहुत से बालक-बालिकाएँ उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के बाद अध्ययन समाप्त कर व्यावसायिक जीवन में प्रवेश करते हैं। उनकी शिक्षा का उद्देश्य उन्हें सफल पारिवारिक और सामाजिक व्यक्ति बनाना हैं शिक्षा का स्वरूप ऐसा होना चाहिए कि बालक के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास हो सके तथा वह सफल जीवन व्यतीत कर सके।

परामर्शक को उच्च्तर माध्यमिक विद्यालयों में परामर्श कार्यक्रम पाठ्यक्रम के माध्यम से क्रियान्वित करना चाहिए। परामर्श का उद्देश्य उच्च से उच्च शैक्षिक ज्ञान, पूर्ण बौद्धिक विकास तथा शारीरिक पूर्णता लोने वालो होना चाहिए। इसके लिए निम्नलिखित बातें ध्यान में रखना चाहिए :-

1. बालक-बालिकाओं की योग्यता, अभिरूचि, अभिक्षमता और भविष्य की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर पाठ्यक्रम तथा सह-पाठ्यगामी क्रियाओं का चुनाव करना।
2. अध्ययन और कार्य करने की आदत डालना। पढ़ाई में सतोषप्रद उपलब्धि प्राप्त करने का प्रयास करना।
3. अपनी अभिरूचि, प्रतिभाओं एवं कौशल के अनुसार विद्यालय के अलावा बाह्य क्षेत्र में भी कार्य अनुभव प्राप्त करना।
4. अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये विद्यालय की विभिन्न गतिविधियों में भाग लेना।
5. अपनी मानसिक और शारीरिक योग्यता के विकास के लिए प्रयास करना।
6. पाठ्यक्रम और विद्यालयीन जीवन में समायोजन करना।

परामर्श विधि

1. सामूहिक विधि द्वारा :- शैक्षणिक वार्ताओं द्वारा प्रगति में सहायता :
    1. विद्यालय की गतिविधियाँ
    2. पाठ्यक्रम
    3. पाठ्य-सहगामी क्रियायें
    4. वार्षिक समारोह,
    5. छात्रवृत्ति एवं अन्य सुविधाएँ
    6. वैकल्पिक विषय
    7. पुस्तकालय का उपयोग
    8. शैक्षणिक प्रगति बढ़ाने के साधन
    9. हम अध्ययन कैसे करें ?
    10. मानसिक स्वास्थ्य।
2. व्यक्तिगत विधि द्वारा :- व्यक्तिगत समस्यायें दूर करने में सहायता -
    1. समायोजन की कठिनाई
    2. किसी विशेष विषय में मन्द प्रगति
    3. मानसिक अशान्ति
    4. ध्यान केद्रि करने की कठिनाई
    5. लिखने, पढ़ने, स्मरण करने आदि की कठिनाई
    6. पारिवारिक कठिनाई
    7. आर्थिक कठिनाई
    8. अन्य अध्यापकों या मित्रों के द्वारा उपेक्षा
    9. मनोवैज्ञानिक कारण-हीनता की भावना, मानसिक तनाव, विनिवर्तीपन, असफलता का भय आदि।
    10. शारीरिक अंग विकृति के कारण निरादर।
3. व्यावसायिक परामर्श :- बालक-बालिकाएँ अपनी शिक्षा समाप्त करने के बाद व्यवसाय में जाना चाहते है। यदि उन्हें उचित शिक्षा मिली है तो व्यवसाय पाने में कठिनाई नहीं होती, परन्तु यदि उन्होने विषयों का चुनाव ठीक नहीं किया हो तो व्यवसाय प्राप्ति में कठिनाई हो सकती है। उच्चतर माध्यमिक विद्यालय में परामर्श का कार्यक्रम बनाते समय शैक्षिक परामर्श के साथ व्यावसायिक परामर्श भी सम्मिलित कर देना चाहिए।

    व्यावसायिक परामर्श का उद्देश्य व्यवसाय चुनने और चुने हुए व्यवसाय की प्राप्ति के लिये तैयारी करने में सहायता देना है। अतएव मार्गदर्शन देते समय निम्नलिखित बातें ध्यान में रखना चाहिए।

1. विभिन्न व्यवसायों सम्बन्धी जानकारी देना।
2. बालक-बालिकाओं को उनकी योग्यताओं और कौशलों को खोजने और उन्हें विकसित करने में सहायत देना जिससे वे अपनी योग्यता और कौशल के अनुरूप व्यवसाय पा सकें।
3. बालक-बालिकाओं में अभिरूचियों और अभिक्षमताओं के मूल्यांकन करने में सहायता पहुँचाना जिससे वे समाज के लिए उपयोगी बन सकें।
4. कार्य के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति विकसित करना तथा जिस प्रकार का व्यवसाय उन्हें प्राप्त हो उसमें समायोजन की क्षमता विकसित करना।
5. विद्यालय में विभिन्न व्यवसायों के कार्य अनुभव की सैद्धान्तिक और व्यावहारिक अनुभव देना।
6. अनुभव के आधार पर विभिन्न व्यवसायों के सम्बन्ध में आलोचनात्मक निणर्य लेने की क्षमता का विकास करना।
7. छात्र-छात्राओं के मन में यह विश्वास दिलाना कि अध्यापक और परामर्शक उनकी व्यवसाय सम्बन्धी समस्याओं के हल करने की योग्यता रखते हैं।
8. विभिन्न व्यवसायों से सम्बन्धित पूर्व-प्रशिक्षण प्राप्त करने के स्थान, प्रशिक्षण संस्थाओं में प्रवेश पाने के नियम, खर्च, अवधि आदि की पूर्ण सूचना देना।
9. विभिन्न परिस्थितियों में समायोजन का अभ्यास कराना जिससे व्यावसायिक जीवन में सफलता प्राप्त कर सकें।
10. व्यावसायिक जीवन से जीवन का सच्चा आनन्द उठाने की क्षमता का विकास करना।

विद्यालय का छात्र व्यवसाय जगत से अनभिज्ञ होता है। वह व्यवसाय के सम्बन्ध में चिन्तित भी नहीं रहता, इसलिए वह किसी भी व्यवसाय के विषय में गंभीरता से विचार नहीं करता। परामर्शक का कार्य है कि वह छात्र-छात्राओं में व्यवसाय के प्रति जागृति उत्पन्न करें। उन्हें भविष्य में आने वाली व्यावसायिक समस्याओं से अवगत करायें तथा उसका सामना करने की पूर्व तैयारी करा दें इसके लिए उन्हें मानसिक रूप से तैयार करना चाहिए। यदि छात्र-छात्राएँ किसी व्यवसाय के चुनाव के सम्बन्ध में निर्णय लेना चाहते हैं तो उसे निम्नलिखित बातों पर विचार करना चाहिए :-

1. स्वयं का मूल्याकन :- विभिन्न व्यवसायों के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार की शारीरिक और मानसिक योग्यताओं की आवश्यकता होती है।
2. अभिरूचि के अनुकूल व्यवसाय का चुनाव :- व्यवसाय में सफलता प्राप्त करने में अभिरूचि का विशेष स्थान है। अभिरूचियाँ एक प्रकार की भावनाएँ हैं जो हमें सदैव कार्य करने के लिये प्रेरित करती है। यदि कार्य में अभिरूचि है तो वह व्यक्ति उस कार्य को उत्साह पूर्वक करता है ओर यदि अभिरूचि के विरूद्ध कार्य मिलता है। तो वह उस कार्य को हताश मन से करता हैं इसलिए व्यवसाय का चुनाव करते समय अभिरूचियों को ध्यान में रखना चाहिए। अभिरूचि पूर्ण व्यवसाय मिलने पर उसमें उत्साह, दक्षता और आनन्द की प्राप्ति होती है और यही व्यावसायिक जीवन की सफलता का रहस्य है।

3. व्यवसाय की पूर्ण जानकारी :- किसी भी व्यवसाय के चुनने के पूर्व उसके सम्बन्ध में सब प्रकार की जानकारी होना चाहिए। व्यवसाय का कार्यस्थल, कार्यप्रणाली, प्रगति की विधि, आर्थिक लाभ, अन्य सुविधाओं आदि के बार में प्रत्येक बात पूर्ण रूप से ज्ञात होना चाहिए।

परामर्शक का कार्य छात्र-छात्राओं को उपरोक्त बातों को ध्यान में रखकर व्यवसाय के चुनाव में सहायता पहुँचाना होना चाहिए।

व्यवसाय चुनाव के मनोवैज्ञानिक कारक:- व्यवसाय के चुनव ओर व्यावसायिक सफलता के लिये कुछ मनोवैज्ञानिक लक्षणों की आवश्यकता होती है। इनमें से प्रमुख नीचे दिये गये हैं।

1. योग्यताएँ :- कोई भी व्यक्ति जब बिना किसी प्रशिक्षण के कोई कार्य सफलतापूर्वक कर सकता है तो वह उसकी योग्यता कहलाती हैं।

   किसी भी व्यक्ति के व्यावसायिक चुनाव में योग्यता और अवाप्ति का विशेष महत्व हैं । किसी व्यवसाय या प्रशिक्षण में जाने के लिये कुछ न कुछ योग्यता होना आवश्यक होता है। परामर्शक छात्र-छात्राओं की मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की सहायता से पूर्ण योग्यता का मूल्यांकन कर उचित परामर्श द्वारा उसकी क्षमता को बढ़ाने में सहायता कर सकता है।

2. अभिक्षमताएँ :- अभिक्षमता एक प्रकार का गुण या लक्षण है जो किसी व्यक्ति की कार्य कुशलता, दक्षता या कार्य को शीघ्र सीखने की क्षमता का द्योतक है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि अभिक्षमता होने पर कोई भी व्यक्ति किसी कार्य को कम समय और कम परिश्रम में सरलता से सीख सकता है।

   अभिक्षमता परीक्षणों के आधार पर छात्र-छात्राओं को अध्ययन हेतु विषयों के चुनाव अथवा व्यवसाय के चुनाव में सहायता पहुँचाई जा सकती है। अभिक्षमता परीक्षणों के अभाव में छात्र की हॉबी, अवकाश के समय में करने वाली गतिविधियाँ, अभिरूचि के अनुसार किये जाने वाले कार्य आदि से भी अभिक्षमता का पता लगाया जा सकता है। छात्र के विद्यालयीन प्रगति अभिलेख से भी अभिक्षमता का पता लग सकता है।

   1. भाषा प्रवीणता 2. अंक योग्यता
   3. चित्रकारी संगीत योग्यता 4. यांत्रिक योग्यता

3. व्यक्तित्व एवं स्वभाव :- व्यक्ति अपने व्यक्तित्व एवं स्वभाव के अनुकूल ही कार्य करना पसन्द करता है। उसका जिस प्रकार का स्वभाव होगा। उसी प्रकार का व्यवहार वह बाह्य जगत में करेगा। प्रत्येक प्रकार के व्यवसाय के लिये अलग-अलग व्यक्तित्व एवं स्वभाव वाले व्यक्ति की आवश्यकता होती है जैसे-बहिमुखी और मिलनसार व्यक्ति कार्यालय के बाहर कार्य करना पसन्द करता है।

   व्यवसाय सम्बन्धी परामर्श देने के पूर्व छात्र-छात्राओं के व्यक्तित्व एवं स्वभाव का मूल्यांकन कर लेना चाहिए। समुचित व्यक्तित्व के अभाव में व्यावसायिक क्षेत्र में असफलता होने की संभावना रहती है। व्यक्तित्व मापन की नीचे लिखी चार विधियाँ हैं :-

4. अभिरूचियाँ :- प्रत्येक व्यक्ति अपनी अभिरूचि के अनुसार ही कार्य करना पसन्द करता है। यदि अभिरूचि के अनुकूल कार्य मिलता है तो वह उसे उत्साह लगन और परिश्रम से करत है। अभिरूचि के अभाव में कार्य करने में मन नहीं लगता। अभिरूचि कार्य सीखने में भी सहायक होती है। अभिरूचि, अभिक्षमता से बिल्कुल भिन्न है।

व्यावसायिक परामर्श के लिए निम्नलिखित अभिरूचियों का ज्ञान आवश्यक है-

	अभिरूचियाँ	गतिविधियाँ
1.	यांत्रिक, भौतिक विज्ञान और तकनीक	रचनात्मक कार्य, सम्बन्ध आदि होने का कारण जानने की उत्सुकता।
2.	स्वास्थ्य और जीवविज्ञान	जीवन-स्वास्थ्य आदि के कारण जानने की इच्छा।
3.	शिक्षण-सामाजिक भलाई	समाज सेवा का भाव।
4.	प्रशासनिक	व्यवस्थित कार्य करना, प्रबन्ध आयोजन के कार्य करना।
5.	बिक्री, दुकानदारी	जन-सम्पर्क सामाजिक कार्य, वाकयपटुता समझाने की क्षमता।
6.	कला-संगीत	चित्रकला, संगीत में भाग लेना।
7.	बाह्य जीवन	भ्रमण, यात्रा, साहसिक कार्य करना।

कुशल परामर्शक को विद्यालय के छात्र-छात्राओं की अभिरूचियों का पता लगाकर व्यावसायिक परामर्श देना चाहिए।

कृषि विषय :- कृषि, बागवानी, पशुपालन, मछली पालन, डेयरी, मुर्गीपालन आदि की शिक्षा दी जाती है। कृषि विषय लेने वाले इन्हीं क्षेत्रों में नौकरी कर सकते है या अपना निजी व्यवसाय खोल सकते है।

तकनीकी :- छोटे-छोटे यन्त्र या उपकरण सुधारना।

ललित कला :- चित्रकला, पेन्टिंग, ड्राइंग, हस्तकला आदि।

महाविद्यालयों में छात्र-छात्राएँ उच्च शिक्षा के लिये जाते हैं। उच्च शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य हैं:-

1. व्यक्तिगत जीवन को नियमित बनाना।
2. नागरिक जीवन के उद्देश्य सीखना।
3. व्यक्तिगत,सामाजिक तथा आर्थिक कठिनाईयों को हल करने की क्षमता बढ़ाना।
4. समाज प्रिय और समाज का हितैषी बनाना।
5. भौतिक वातावरण में वैज्ञानिक विधियों का उपयोग करना सिखाना।
6. दूसरे के विचारों को समझकर स्वतन्त्रतापूर्वक अपने विचार रखने की क्षमता बढ़ाना।

7. स्वस्थ, और सुखी जीवन व्यतीत करना तथा समाज के अन्य व्यक्तियों को स्वस्थ बनाये रखने में मदद करना।
8. साहित्य, कला, संगीत और सांस्कृतिक कार्यों में आनन्द लेना।
9. पारिवारिक जीवन को सुखी बनाने हेतु ज्ञान और अभिवृत्ति विकसित करना।
10. अपनी योग्यता, अभिरूचि और अभिक्षमता के अनुकूल व्यवसाय चुनना।

महाविद्यालय में परामर्श कार्यक्रम की एक निश्चित रूपरेखा होना चाहिए। महाविद्यालय के समस्त कर्मचारियों को छात्र-छात्राओं के हित में मिलकर काम करना चाहिए। छात्र-छात्राओं की काफी बड़ी संख्या होने के कारण परामर्श को कार्य कई भागों में बाँट लेना चाहिए। कार्य की व्यवस्था इस प्रकार से की जाए कि सबकी आवश्यकताएँ पूर्ण हो सकें। परामर्श को निम्नलिखित क्षेत्रों में बांटा जा सकता है।

1.5 परामर्श में कक्षा अध्यापक की भूमिका

परामर्श कार्य में अध्यापक, अभिभावक से अधिक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर सकते है। विद्यालय में बालक काफी समय के लिये रहते है। अभिभावक समयाभाव के कारण बालक को अधिक समय नहीं दे पाते, परन्तु अध्यापक को बालक के समझने के लिये अधिक समय मिल जाता है। इसके अलावा अध्यापक को निम्नलिखित सुविधायें प्राप्त है-

1. व्यक्तिगत सानिध्य :- अध्यापक अपने छात्रों से अधिक सानिध्य प्राप्त करता है। इसलिये व्यक्तिगत सम्बन्ध स्थापित होने के कारण वह प्रत्येक छात्र को अच्छी तरह से समझा सकता है।
2. अधिक समय तक सम्पर्क :- विद्यालय में छात्र सुबह 10 से 4 बजे तक प्रत्येक दिन रहता है कक्षा अध्यापक ही एक ऐसा व्यक्ति है जिससे उसका सम्पर्क काफी समय का होता है इसका लाभ वह बालक के गुण, अभिक्षमता, अभिरूचि आदि समझने में उठा सकता है।
3. बालक के सम्बन्ध में निकट से और अधिक ज्ञान प्राप्ति का अवसर :- अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा कक्षा अध्यापक अपने छात्रों को अधिक निकट से जानता है। वह छात्र को दूसरों की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह से परखता है छात्र की कोई भी बात अध्यापक से छिपी नहीं रह सकती।
4. अध्यापक के प्रति आदर :- प्रत्येक छात्र के मन में अपने अध्यापक के प्रति आदर की भावना होती है। कुशल अध्यापक बालक की इस भावना को उपयोग कर बालक को सरलता से प्रभावित कर सकता है।
5. अध्यापक के प्रति विश्वास :- अध्यापक के प्रति आदर के कारण बालक के मन में उसके प्रति विश्वास जम जाता है। वह यह सोचने लगता है कि हमारे अध्यापक हमारे हितैषी हैं और सदैव हमारी भलाई ही करेंगे। वह मानना है कि ये ही वे व्यक्ति है जो हमारी समस्याओं को सही रूप से समझते हैं और वे उसका निराकरण करने में भी सक्षम है।
6. बालक का आत्म विश्वास :- अध्यापक के प्रति आदर और सानिध्य की भावना से बालक के मन में आत्मविश्वास जागृत हो जाता है। इस कारण वह अपने अध्यापक के समक्ष अपनी

समस्या सही ढंग से रख देता है। समस्या का रूप, शरू होने का समय, और कारण आदि सब बातें खुले हृदय और विश्वास से बता देता है। वह कोई बात छिपाता नहीं है।

7. अन्य व्यक्तियों से सहयोग :- बालक की समस्या, कारण और उसके निराकरण के लिये बालक के माता-पिता, भाई-बहिन, मित्रों, पास-पड़ोसियों तथा अन्य अध्यापकों से सहयोग लेना आवश्यक होता है। अध्यापक की स्थिति इतनी अच्छी होती है कि वह सरलता से दूसरों से सहयोग प्राप्त कर सकता है।

8. आदर्श प्रस्तुत करना :- अध्यापक को अपनी विशेष स्थिति के कारण सम्मान और विश्वास प्राप्त होता है। प्राय: देखा गया है कि बालक अपने माँ-बाप की अपेक्षा अपने अध्यापक का कहना अधिक मानता है। इसका लाभ उठाकर अध्यापक बालक को आवश्यकतानुसार प्रेरित कर सकता है। प्रेरित करने का सबसे सरल उपाय दूसरों के सामने अपने व्यवहार द्वारा उदाहरण प्रस्तुत करना है। बालक में अनुकरण की सुलभ आदत होती है। चूँकि अध्यापक उसका आदर्श होता है। इसलिये उसकी विचारधारा, व्यवहार का तरीका, आदतें आदि का वह सरलता से अनुकरण कर लेता है। जहाँ एक ओर अध्यापक को आदर्श उपस्थित करना होता है वहीं दूसरी ओर उसे सतर्क भी रहना पड़ता है। उसके गलत आदर्श, अनुचित व्यवहार या विचारधारा का उल्टा ही प्रभाव पड़ सकता है। सतर्क अध्यापक बालकों के सामने अपने व्यवहार से आदर्श उपस्थित कर उनके अनुकरण के लिये प्रेरित करने में सफल हो सकता है।

1.6 कक्षा में परामर्श

1. अधिगम में सहयोग :- कुशल अध्यापक कक्षा में अधिक अधिगम के लिये उपयुक्त वातावरण का निर्माण कर सकते हैं। वे बालकों के गुणों, क्षमताओं, कठिनाईयों, सीमाओं आदि के बारे में भली-भाँति जानते है।

2. व्यक्तिगत कठिनाईयाँ दूर करने में सहयोग :- आर. ऐलिस (R. Eillis)का कथन है कि अधिकांश सामान्य बालकों की उपलब्धि उनकी योग्यता से कम पाई जाती है। इसका कारण बताते हुए वे कहते है कि अनेक छात्र अपनी व्यक्तिगत कठिनाईयों के कारण आवश्यकतानुसार शैक्षणिक प्रगति नहीं कर पाते। व्यक्तिगत कड़िनाईयाँ उनके व्यक्तित्व से सम्बन्धित होती है, जैसे- हीनता की भावना, भय, शर्मीलापन, ध्यान केन्द्रित करने की कठिनाई, असुरक्षा की भावना, चिन्ताएँ, प्रेरणा की कमी आदि। इस प्रकार के मनोवैज्ञानिक कारणों से बालक की शैक्षणिक प्रगति में बाधा पहुँचती है ऐसे बालकों को समायोजन की कठिनाई होती है। वे घर या विद्यालय पर्यावरण में समायोजन नहीं कर पाते। इसका प्रभाव उनके शारीरिक, मानसिक , संवेगात्मक, नैतिक और सामाजिक विकास पर पड़ता है। सबसे पहले अध्यापक को बालक की व्यक्तित्व सम्बन्धी मूल समस्या को जानना चाहिए। इसके लिये वह मनोवैज्ञानिक परीक्षण या अपरीक्षण प्रविधियों से बालक के समायोजन या समस्या के कारण का सही पता लगा सकता है। कारण ज्ञात होने पर पहले उसे दूर करने का प्रयास करना चाहिए। सहानुभूति , प्रोत्साहन, स्नेह और अभ्यास से अनेक बाधा उत्पन्न करने वाले कारक दूर किये जा सकते हैं उसके अभिभावकों से

सहयोग लेकर सुरक्षा की भावना बढ़ाई जा सकती है। घर तथा विद्यालय में समायोजन में कठिनाई उत्पन्न करने वाले कारकों को दूर किया जा सकता है। उसे छोटे-छोटे महत्वूपर्ण कार्य देकर उसमें आत्मविश्वास की भावना उत्पन्न की जा सकती है। यदि अध्यापक बाल की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताएँ पूरी करने में सफल हो जाते हैं तो उसके समायोजन में उसे काफी सहायता मिल सकती है। विद्यालय के पर्यावरण मेंपूर्णरूप से समायोजित बालक को व्यक्तित्व सम्बन्धी या मनोवैज्ञानिक कठिनाईयों का सामना नहीं करना पड़ता। कुशल अध्यापक विभिन्न प्रकार की पाठ्य सहग्रामी क्रियाओं से बालक के समायोजन में सहायता पहुँचा सकता है। बालक की अभिरूचि और अभिक्षमतानुसार विभिन्न कार्यों में लगाने से उसे अपना कौशल प्रदर्शित करने का अवसर मिलता है। इससे उसमें हीनता की भावना कम हो जाती है और लोग उसका सम्मान करने लगते है।

3. उद्देश्य निर्धारित करना :- प्राय: देखा गया है कि बालक-बालिकाओं के कोई उद्देश्य नहीं होते। उत्तेश्विहीन जीवन होने के कारण उसे कार्य करने की प्रेरणा नहीं मिलती। कुशल अध्यापक अपने छात्र-छात्राओं में छोटे छोटे लक्ष्य निर्धारित करता है और फिर उनकी प्राप्ति के लिए प्रेरित करता है। इसलिए छोटे-छोटे प्राप्त हो जाने योग्य लक्ष्य ही निर्धारित करने में विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करना चाहिए। अनी क्षमता या योग्यता से अधिक लक्ष्य निर्धारित करने में असफलता मिलने की सम्भावना होती है। असफलता से निराशा उत्पन्न हो सकती है। अतएव छात्रों की सीमाओं को दृष्टि में रखकर उद्देश्य निर्धारित कराने में सहायता देना चाहिए। इस तरह के छोटे-छोटे उद्देश्य शिक्षा के क्षेत्र के अलावा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में निर्धारित करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। इन उद्देश्यों को एक-एक करके पूरा करने का प्रयास करना चाहिए।

4. व्यक्तिगत ध्यान देना :- सामान्यत: प्रत्येक अध्यापक कक्षा में एक ही विधि से सब छात्र-छात्राओं को पढ़ाता हैं। वैयक्तिक विभिन्नता के कारण प्रत्येक छात्र पाठ्य-वस्तु को समान रूप से समझ नहीं सकता। इस प्रकार अनेक क्षमताओं वाले बालकों को अलग-अलग तरीके से समझाने पर समझ में आता है। इसलिए अध्यापक को चाहिए कि प्रत्येक छात्र की समझने या सीखने की क्षमता और विधि को जाने और फिर व्यक्तिगत ध्यान देकर उन्हें उसी विधि से सिखाये।

5. प्रतिदिन के अधिगम में परामर्श :- प्राय: प्रत्येक छात्र के सामने यह समस्या होती है कि वह क्या पढ़े ? कैसे पढ़े? किस प्रकार अपने पढ़ने का टाइमटेबिल तैयार करे ? कैसे उत्तर लिखे ? कैसे स्मरण करे ? अधिक अंक पाने के लिये किन-किन बातों पर ध्यान दें ? अपनी लिखने, पढ़ने, याद करने आदि की समस्या पर समय-समय पर परामर्श देते रहें। विशेषकर पिछड़े बालक और प्रतिभाशाली बालक की प्रगति हेतु परामर्श की विशेष आवश्यकता होती है।

6. विकास में सहयोग :- माध्यमिक विद्यालयों में बालक-बालिकाएँ प्राय: 1-12 वर्ष में प्रवेश पाते हैं और 16-17 वर्ष की आयु तक रहते है। यह आयु उनके शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक, नैतिक और सामाजिक विकास में काफी सहायता दे सकती है। अध्यापक को बालक-

बालिकाओं की योग्यताओं, अभिरूचियों, अभिक्षमताओं आदि का मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की सहायता से पता लगाकर उनके विकास के लिए अवसरों का निर्माण करना चाहिए। इसी प्रकार विभिन्न पाठ्य-सहगामी क्रियाओं द्वारा शारीरिक, सामाजिक और संवेगात्मक विकास के लिए उचित सहायता पहुँचायी जा सकती है। जैसे-पी.टी., खेल-कूद, भ्रमण, एन.सी.सी., स्काउट गाइड, आदि से शारीरिक ओर सामाजिक विकास होता है तथा नाटक, वाद-विवाद, भाषण प्रतियोगिता आदि से बौद्धिक और संवेगात्मक विकास में सहायता मिलती है। इसी प्रकार कार्यक्रम आयोजन करने का कार्य, समूह के कहीं भ्रमण हेतु ले जाने का कार्य आदि से नेतृत्व के गुणों का विकास होता है। अध्यापक को आवश्यकतानुसार गतिविधियों का आयोजन और छात्र-छात्राओं को भाग लेने के लिए प्रेरित करना चाहिए।

7. चरित्र निर्माण में सहयोग :- किशोरावस्था नैतिक विकास , चरित्र निर्माण और अच्छी आदतें डालने के लिये उपयुक्त अवस्था हैं। इस आयु में बालक-बालिकाएँ भावुक होते हैं उनमें जिज्ञासा और उत्सुकता अधिक होती हैं चेतन और अचेतन अवस्था में वे अनुकरण से बहुत कुछ सीख लेते हैं इसलिये अध्यापक को आदर्श प्रस्तुत कर उनके नैतिक विकास और चरित्र निर्माण में सहायता देनी चाहिए। समय-समय पर उनके व्यवहार, कार्य विचारधारा, आदतों आदि पर दृष्टि रखनी चाहिए। अवांछनीय आदतों को शीघ्र छुड़ाने का प्रयास करना चाहिए। महापुरूषों के जीवन चरित्र, सत्यकथाएँ, कहानियाँ, कविताएँ आदि से नैतिक विकास और चरित्र निर्माण में काफी सहायता मिलती हैं आवश्यकतानुसार दण्ड और पुरस्कार का भी उपयोग किया जा सकता हैं। चरित्र निर्माण में मित्र जगत का भी विशेष महत्व हैं इसलिये छात्र-छात्राओं को ''कैसे मित्र चुनना'' पर भी वार्ता-आयोजित की जा सकती है। लेखक ने अपने एक अध्ययन में पाया कि सह-शिक्षा प्रणाली में अध्ययन करने वाले बालक-बालिकाओं में अलग-अलग अध्ययन करने वाले बालक-बालिकाओं की अपेक्षा अच्छा चरित्र निमार्ण होता है।

8. आत्म-विश्वास उत्पन्न करना :- प्रगति के लिये आत्म-विश्वास आवश्यक है। आत्म-विश्वास के अभाव में योग्यता और क्षमता होते हुए भी सफलता प्राप्त करना असम्भव है कक्षा में अनेक छात्र-छात्राएँ आत्म-विश्वास की कमी के कारण अपनी प्रतिभाओं का समुचित उपयोग नहीं कर पाते। प्राय: देखा गया है कि अधिकांश बालक-बालिकाएँ स्वयं अपनी योग्यताओं, क्षमताओं और सीमाओं का सही मूल्यांकन नहीं कर पाते। कुछ अपने आपको अधिक ओर कुछ कम अनुमानित करते हैं। उनकी अधिकांश समस्याएँ इसी से उत्पन्न होती हैं। यदि छात्र-छात्राओं को अपनी योग्यताओं का सही मूल्यांकन करना सिखा दिया जाये, तो वे अपने असफलताओं से बच सकते हैं स्वयं सही मूल्यांकन करने पर आत्म विश्वास जागृत हो जाता है। आत्म-विश्वास के साथ स्वयं के मूल्यांकन की क्षमता का विकास करना चाहिए तथा उनमें आत्म-विश्वास की भावना दृढ़ करना चाहिए।

9. शैक्षणिक समस्याओं का निराकरण :- विद्यालय में छात्र-छात्राओं को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। जैसे - ध्यान केन्द्रित करने के उपाय, विषयों का चुनाव, उपयोगी

सम्बन्धित पुस्तकों का चुनाव, पुस्तकालय का उपयोग, पाठ्य सहगामी क्रियाओं का चुनाव, स्वास्थ्य अच्छा बनाये रहने के नियम, परीक्षा के उत्तर लिखने की विधि, अध्ययन करने की विध, छात्रवृत्ति मिलने के तरीके, उच्च अध्ययन हेतु संस्थाएँ आदि। इन समस्याओं का निराकरण तथा सामान्य सूचना समूहिक परामर्श विधि से दी जा सकती है। समय-समय पर विभिन्न विषयों पर वार्ताएँ आयोजित की जा सकती है। वार्ताओं के माध्यम से बालक-बालिकाओं को उपयोगी जानकारी दी जा सकती है।

10. व्यावसायिक परामर्श :- माध्यमिक विद्यालयों में व्यावसायिक परामर्श का उद्देश्य बालक-बालिकाओं में विभिन्न व्यवसायों के प्रति चेतना जागृत करना है। विभिन्न व्यवसायों की जानकारी देकर उनके प्रति अभिरूचि उत्पन्न करने से वे अपने भावी जीवन की व्यवसाय सम्बन्धी एक योजन बनाने लगते हैं इस योजना के अनुसार ही वे अपने वैकल्पिक विषयों का चुनाव करते हैं और उसी के अनुरूप उच्च शिक्षा प्राप्त करते हैं। अतएवं अध्यापक को छात्र-छात्राओं की भावी व्यवसाय की तैयारी में सहयोग देना चाहिए।

11. समस्यामूलक बालक को परामर्श :- कुछ अध्यापकों की धारणा होती है कि केवल विषय का ज्ञान सफल शिक्षण के लिये आवश्यक है। वह बात केवल कक्षा में विषयवस्तु के प्रस्तुतीकरण के लिये सम्य हो सकती है। परन्तु प्रभावशाली अध्यापन के लिये बालक की समस्याओं का ज्ञान आवश्यक है। यदि अध्यापक समस्यामूलक बालकों की समस्याओं को हल करने में कुशल है, तो वह उन्हें सफलतापूर्वक पढ़ा सकता हैं अध्यापन की विशेषता केवल पाठ को विभिन्न ढंग से प्रस्तुत करने भर से ही नहीं हो जाती बल्कि यह देखना भी आवश्यक है कि छात्रों को जो कुछ पढ़ाया जा रहा हैं उसमें कारण क्या है ? अतएव प्रत्येक अध्यापक यह जानता है कि बालक में शीघ्र ध्यान न होने के कारण दूसरों का अपनी ओर ध्यान खींचना हैं, सदैव विलम्ब से आने का कारण समय पर नाश्ता न मिलना है, दिवा स्वप्न का कारण दु:खद वातावरण को भूलने की इच्छा है, चोरी करने का कारण ईष्र्या है, दूवरों को तंग करने का कारण बदला लेने की भावना है, विद्यालय में पद प्राप्ति की अभिलाषा से अनुचित उपाय अपनाने का कारण घर में स्नेह और आदर की कमी हैं। यदि बालक की कठिनाईयों को दूर करने में अध्यापक सफल हो जाता है तो वह उनके पढ़ने में सहायक हो सकता है। इसलिए धैर्य, सहानुभूति और ज्ञान की आवश्यकता है।

प्रतिदिन बालक थोडे समय के लिए ही विद्यालय में रहता है। अतएव उसके व्यवहार को समझने के लिए उसके परिवार ओर पड़ोस को समझना चाहिए। इसके सिवाय बालक के पूर्व शैक्षिक इतिहास की जानकारी होना चाहिए।

प्राय: यह देखा जाता है कि समस्यामूलक बालक समस्यापूर्ण परिवार से आता है। परिवार में व्याप्त असुरक्षा, मानसिक तनाव और आपसी झगड़ों का प्रभाव बालक के विद्यालयीन जीवन पर भी पड़ता है। जो बालक दुखी, कुसमायोजित और मानसिक रूप से अस्वस्थ है वह कैसे

विद्यालय में शैक्षिक प्रगति कर सकता है ? ऐसे से अरूचि हो जायेगी। यदि उसे परिवार में स्नेह , आदर और सहानुभूति प्राप्त होती है तो वह अपनी उपयोगिता अन्य क्षेत्र में प्रदर्शित कर सकेगा।

अध्यापक को बालक के पारिवारिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करना चाहिए। उन्हें डाँटना, अपमानित करना, धमकाना, दोष देना, अनर्थ उपदेश देना या दण्ड देना, उनके शैक्षिक और सामाजिक विकास के लिए हानिकारक होगा। यदि बालक की संवेगात्मक कठिनाई को समझ कर समय पर सुलझा दिया जाता है तो वह समुचित शैक्षिक प्रगति कर सकता है।

बालक का सामाजिक और आर्थिक स्तर भी उसके जीवन पर प्रभाव डालता है। परन्तु अध्यापक को बालक के अभिभावकों से मिलकर बालक की सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति का प्रयास करना चाहिए। बालक में उसकी कमजोर पारिवारिक पृष्ठभूमि के कारण हीनता की भावना का विकास नहीं होना चाहिए। इसलिए अध्यापक को ऐसे छात्रों के साथ सावधानी से व्यवहार करना चाहिए।

कुछ समस्यामूलक बालकों की मानसिक ग्रंथियाँ जटिल होती हैं। ऐसे बालकों को परामर्श हेतु मनोचिकित्सक के पास भेजना चाहिए।

12. अभिवृत्तियों का विकास :- ब्राउन महोदय के अध्ययन से ज्ञात होता है कि पढ़ाने की विधियों का बालक-बालिकाओं की अभिवृत्तियों के विकास और बदलने में काफी प्रभाव पड़ता है।

1.7 परामर्श और पाठ्यक्रम

वर्तमान शिक्षा का उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति को उसकी योग्यताओं, क्षमताओं, प्रतिभाओं के विकास के लिए समान अवसर प्रदान करना है। अतएव पाठ्यक्रम इस प्रकार का होना चाहिए जो प्रत्येक बालक-बालिकाओं की आवश्यकताओं पूरी कर सके। पाठयक्रम के माध्यम से बालक-बालिकाओं के सर्वांगीण विकास में सहायता होता है। पाठ्यक्रम के माध्यम से बालक-बालिकाओं को उनकी योग्यताओं का उपयोग करने का पूरा अवसर मिलना चाहिए, जिससे वे सफलतापूर्वक प्रत्येक जिम्मेदारी का कार्य निभा सकें।

पाठ्यक्रम का उद्देश्य शिक्षा के सिद्धान्तों को पूरा करना है। शिक्षा का एक उद्देश्य रचनात्मक जीवन का विकास करना भी है। बालकों में अपनी समस्याओं की पहचान और उन्हें सुलझाने की योग्यता आनी चाहिए, साथ ही सन्तोषजनक अभिव्यक्तियों का विकास तथा समायोजन की क्षमता उत्पन्न करना है।

पाठ्यक्रम का क्षेत्र केवल कक्षा तक ही सीमित नहीं है वरन वह इस प्रकार का होना चाहिए कि उसका प्रभाव खेलकूद के मैदान तथा छात्र के बाह्य जीवन से भी सम्बन्धित रहे। अतएव पाठ्यक्रम का कार्य केवल शिक्षा ही देना नहीं है बल्कि उसका सर्वागीण विकास करना है।

अच्छी तरह से नियोजित पाठ्यक्रम बालक-बालिकाओं की समस्त आवश्यकताएं पूरी कर सकता है। पाठ्यक्रम तैयार करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए।

पाठ्यक्रम परिवर्तनशील होना चाहिए। बालकों की अभिक्षमता और अभिरूचि के अनुसार उसमें परिवर्तन का प्रावधान होना चाहिए। पाठ्यक्रम प्रारम्भ करने की प्रक्रिया मनोरंजक हो। प्रारम्भिक अवस्था

में सरल बातों को पढ़ाना चाहिए। पाठ्यक्रम की सफलता के लिए परिणाम का ज्ञान, सफलता का अनुभव तथा सीखने की प्रेरणा बनी रहना चाहिए। कुशल अध्यापक छात्र-छात्राओं में प्रतिस्पर्धा की भावना बनाए रखते हैं उनकी प्रगति का मूलयांकन समय-समय पर करते रहना चाहिए।

ऐसा पाठ्यक्रम जो छात्रों की वैयक्तिक भिन्नता के सिद्धान्त पर बनाया गया हो, जिसको आवश्यकतानुसार घटाया या बढ़ाया जा सके वह अध्यापकों और छात्रों को सन्तोषप्रद होता है। जिस पाठ्यक्रम को अध्यापक पढ़ाने वाले हैं, उसमें उनका विश्वास होना चाहिए।

परामर्श और पाठ्यक्रम :- परामर्श का मुख्य कार्य पाठ्यक्रम के माध्यम से शिक्षा एवं पाठ्यक्रम के उद्देश्यों की पूर्ति करना है पाठ्यक्रम के अन्तर्गत विषय-वस्तु और गतिविधियाँ इस प्रकार से आयोजित की जायें कि सब उद्देश्य पूरे हो सकें तथा छात्र-छात्राएँ उससे अधिक से अधिक लाभान्वित हो सकें। परामर्शक को अधिगम की कइिनाईयाँ, बालक-बालिकाओं की मानसिक, शारीरिक योग्यताओं और सीमाओं का अधिक ज्ञान होता है, अतएव वह विषयवस्तु के पढ़ाने की विधि में आवश्यक परिवर्तन सुझा सकता है। इसी प्रकार किस बालक को कौन सी गतिविधि उपयोगी है इसकी सलाह दे सकता है। बालकों के विकास का रेखाचित्र तैयार कर हो रही प्रगति का ब्यौरा परामर्शक रख सकता है।

पाठ्यक्रम की सामग्री बालकों के संवेगात्मक एवं बौद्धिक स्तरकी होना चाहिए। अतएव परामर्शक को प्रत्येक बालक के पूर्व अनुभव, ज्ञान और बौद्धिक स्तर को पहचान कर अपने पाठ्यक्रम को विविध भागों में बाँट लेना चाहिए। परामर्शक की मुख्य भूमिका छात्र-छात्राओं के सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी इकट्ठी करना है। वह छात्रों की मानसिक और शारीरिक क्षमता के अलावा उसकी पारिवारिक पृष्ठभूमि-पिता का व्यवसाय, आर्थिक-सामाजिक स्तर, बालक की परिवार में स्थिति और उसकी सामान्य कठिनाईयों से सम्बन्धित जानकारी इकट्ठी कर उनकी आवश्यकतानुसार पाठ्यक्रम की योजना बनाने में सहयोग दे सकता है।

पाठ्यक्रम की सफलता के लिये प्राचार्य, अध्यापक और विद्यार्थी का आपसी सहयोग आवश्यक है। जितनी गहरी सहयोग की भावना होगी, पाठ्यक्रम उतना ही अधिक प्रभावशाली होगा। जिस पाठ्यक्रम में बालक की आन्तरिक और बाह्य आवश्यकताएँ पूरी होती हैं, वही पाठ्यक्रम सबसे अच्छा माना जाता है। पाठ्यक्रम की गतिविधियाँ बालक को विद्यालय के भीतर तथा बाहर दोनों स्थान पर समान रूप से प्रेरित करती रहें।

सामान्य गति से प्राय: सभी बालक-बालिकायें प्रगति करते हैं, पर यदि उन्हें उचित परामर्श दे दिया जाये तो उनकी प्रगति में गति आ जाती है। जो बालक पाठ्यक्रम में पिछड़ जाते हैं, उन्हें भी उचित दिशा दी जा सकती है।

1.8 परामर्श और पाठ्य सहगामी क्रियाएं

प्राय: प्रत्यक विद्यालय या महाविद्यालय में सामूहिक कार्यों का आयोजन होता रहता है। ये सामूहिक गतिविधियाँ परामर्श कार्यक्रम को क्रियान्वित करने के लिये बहुत उपयोगी हैं। सामूहिक कार्यक्रम में बालक-बालिकाओं को अपनी योग्यता और अभिरूचि के अनुसार कार्य करने का अवसर मिल जाता है।

यदि कार्यक्रम व्यवस्थित एवं नियमित रूप से आयोजित किया जाये तो प्रत्येक को अपनी योग्यता और अभिरूचि के विकास का अवसर मिल सकता है।

परामर्श कार्यक्रम को सुचारू रूप से चलाने के लिये पाठ्य सहगामी क्रियाएँ विशेष सहायक हैं। कक्षा के बाहर की ये गतिविधियाँ छात्र-छात्राओं के विकास में सहायक होती हैं। प्रत्येक छात्र या छात्रा स्वच्छन्द रूप से अपनी अभिरूचि के अनुसार इन क्रियाओं में भाग लेते है। ये पाठ्यक्रम अन्तर्गत नहीं आती। इन गतिविधियों के माध्यम से छात्र-छात्राओं के व्यक्तित्व की जानकारी मिल जाती है। इनमें समान आयु, गुण, योग्यता, अभिरूचि वाले बालक-बालिकाओं के स्वाभाविक समूहों की रचना होती है। प्रत्येक को अपनी प्रतिभा के प्रदर्शन का समान अवसर मिलता है। इससे बालक-बालकों के तथा अध्यापक-बालकों के आपसी सम्बन्ध और मधुर हो जाते हैं तथा उनमें साहस एवं नेतृत्व के गुण बढ़ते है।

परामर्श कार्यक्रम के उद्देश्य बालक-बालिकाओं की कक्षा और आयु के अनुसार भिन्न-भिन्न होते है। इन उद्देश्यों की पूर्ति पाठ्यसहगामी क्रियाओं से हो सकती है। इनमें से कुछ उद्देश्य इस प्रकार है:-

1. शैक्षणिक प्रगति
2. व्यावसायिक जानकारी
3. अवकाश के समय का सदुपयोग
4. सामाजिक विकास
5. सहयोग और मित्रता की भावना का विकास
6. तत्परता के गुण का विकास
7. खिलाड़ी भावना का विकास
8. व्यक्तिगत गुणों और अभिरूचियों का सामूहिक कार्यों के माध्यम से विकास।
9. व्यावसायिक अनुभव
10. अच्छे नागरिक के गुणों का विकास,
1. सेवा-भाव का विकास
12. स्वयं अनुशासित होने का अभ्यास डालना
13. नेतृत्व के गुणों का विकास
14. विभिन्न परिस्थितियों में समायोजन की क्षमता का विकास,
15. जीवन के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति का विकास,
16. कला-साहित्य, संगीत आदि के प्रति आदर की भावना का विकास।

उपरोक्त उद्देश्यों को ध्यान में रखकर शाला परामर्श समिति विभिन्न विषयों के अन्तर्गत विभिन्न पाठ्य-सहगामी क्रियाओं की योजना तैयार कर सकती है। परामर्श-कार्यक्रम की सफलता के लिए बालक-बालिकाओं का क्रियात्मक रूप से भाग लेना आवश्यक है। सुनियोजित गतिविधियाँ उन्हें प्रेरणा, प्रोत्साहन और अवसर प्रदान करती हैं।

पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के अन्तर्गत संगीत, नाट्य, कला, सामाजिक कार्य सम्बन्धी गतिविधियों का चिकित्सकीय सम्बन्धी मूल्य अपना विशेष स्थान रखते है। परामर्श कार्यक्रम के अन्तर्गत विभिन्न गतिविधियों से बालक-बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य को अच्छा बनाये रखने में सहायता मिलती है। अनेक मनोविकार एवं मानसिक रोग क्रियात्मक सहपाठ्य-चर्चा से ठीक किये जा सकते है।

पाठ्य सहगामी क्रियाओं द्वारा परामर्श कार्यक्रम को सुचारू रूप से चलाया जा सकता है। क्रियाओं को सुनियोजित ढंग से आयोजित करने से शिक्षा एवं परामर्श के उद्देश्य सरलता से प्राप्त हो सकते है। इन क्रियाओं में कक्षा का अनुशासन एवं बन्धन नहीं होता है। इसलिये सभी छात्र-छात्राएं उत्साह और खुले हृदय से इनमें भाग लेते हैं। ये क्रियाएँ प्रत्येक आयु के छात्र-छात्राओं की शारीरिक ओर मानसिक आवश्यकताओं को पूरा करती हैं इसलिए वे उनके विकास में पूर्ण सहायक होती हैं।

परामर्शक का कार्य है कि वह पाठ्य सहगामी क्रियाओं की योजना चतुराई से तैयार करे तथा प्रत्येक छात्र एवं छात्रा की आयु, योग्यता एवं अभिरूचि के अनुसार उन्हें भाग लेने के लिए प्रेरित करे।

1.9 विद्यालय में परामर्श कार्यक्रम की योजना

उद्देश्य :- परामर्श कार्यक्रम की सफलता के लिये एक सुनियोजित कार्यक्रम की आवश्यकता होती है। कार्यक्रम का उद्देश्य छात्र-छात्राओं को विषयों का उचित चुनाव करने में सहायता देना और विकास करना है। बालकों में एक ऐसी योग्यता विकसित हो जाये कि वह अपनी समस्या को पहचानने लगें और उसे स्वयं हल भी कर सकें। इन उद्देश्यों को ध्यान में रखकर विद्यालय में परामर्श कार्यक्रम आयोजित करना चाहिए।

1.10 परामर्श में मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का उपयोग

मनोवैज्ञानिक परीक्षण के निम्नलिखित उपयोग हैं -

1. **उपलब्धि स्तर और प्रगति का मूल्यांकन :** विभिन्न विषयों के अध्ययन करने के उपरान्त उनमें कितनी उपलब्धि प्राप्त हुई है? किस विषय में कितनी प्रगति हुई है किस विषय में कहॉ तक बालक ने पूर्णत: सीखा है और कहॉ कमजोरी है? आदि बातों का पता उपलब्धि परीक्षण से सरलता से किया जा सकता है।
2. **अभिक्षमता का मूल्यांकन** : विभिन्न विषयों या कार्यो के लिए विभिन्न अभिक्षमताओं की आवश्यकता होती है। सामान्यत: बालक-बालिकाओं की अभिक्षमताओं का ज्ञान अवलोकन से नहीं हो सकता। उपयुक्त अभिक्षमता परीक्षण से अभिक्षमताओं का मूल्याकंन करना सरल है। अभिक्षमता परीक्षण के परिणामों के आधार पर छात्रों के अध्ययन के लिए वैकल्पिक विषयों के चुनाव या व्यवसाय के चुनाव के लिए परामर्श दिया जा सकता हैं।
3. **अभिरूचियों का मूल्यांकन** : अभिरूचि परीक्षणों का निर्माण विद्यालयीन और महाविद्यालयीन छात्र-छात्राओं की भिन्न-भिन्न प्रकार की अभिरूचियों का मूल्यांकन करने के लिए किया जाता है। अभिरूचि समूह मालूम होने पर उसके विकास के लिए उपयुक्त अवसर और प्रोत्साहन दिया जा सकता है। अभिरूचि पूर्ण विषय या कार्य मिलने पर सफलता प्राप्त होने

की पूरी संभावना होती है। अभिरूचि के आधार पर बालक-बालिकाएँ अपने उच्च अध्ययन की ओर व्यवसाय की योजना तैयार कर सकते हैं।

4. **समस्याओं का मूल्यांकन :** विभिन्न प्रकार की समस्याओं के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार के परीक्षणों का उपयोग किया जा सकता है। समस्या के कारणों और निवारण का भी ज्ञान प्रदत्तों के प्राप्तांको के आधार पर किया जा सकता है।

5. **समायोजन का मापन** : सामाजिक विकास, सामाजिक एवं संवेगात्मक परिपक्वता विभिन्न छात्रों में समायोजन का स्तर, समायोजन की कठिनाई आदि के सम्बन्ध में समायोजन परिसूची से जानकारी प्राप्त की जा सकती है। समस्या के कारणों और निवारण का भी ज्ञान प्रदत्तों के प्राप्तांको के आधार पर किया जा सकता है।

6. **मानसिक योग्यता का मूल्यांकन** : प्रत्येक क्षेत्र में सफलता के लिए अलग-अलग प्रकार की मानसिक योग्यता की आवश्यकता होती है। विभिन्न विषयों के अध्ययन एवं व्यवसाय के लिए विशेष मानसिक योग्यता होना चाहिए, जेसे - अंक प्रवीणता, तर्क योग्यता, भाषा प्रवीणता, समस्या समाधान योग्यता, सामान्य बौद्दिक क्षमता आदि। बुद्धि परीक्षण के आधार पर मानसिक योग्यता का मूल्यांकन कर उपयुक्त विषय अध्ययन हेतु दिये जा सकते है। विशेष मानसिक योग्यता के अनुकूल व्यवसाय के लिए परामर्श दिया जा सकता है। अविकसित या अर्धविकसित मस्तिष्क वाले बालक-बालिकाओं की पहचान और उचित परामर्श के लिए भी बुद्धि परीक्षण बहुत उपयोगी है।

7. **अभिवृत्तियों का मापन** : समुचित विकास के लिए सकारात्मक अभिवृत्तियां आवश्यक हैं। अभिवृत्ति मापनी द्वारा बालक-बालिकाओं की विभिन्न विषयों, व्यवसायों आदि के प्रति अभिवृत्ति जानी जा सकती है। अभिवृत्ति मापनी से प्राप्त प्रदत्त प्राप्तांकों के आधार पर अभिवृतियों में परिवर्तन लाने और वांछित अभिवृत्तियों के विकास में सहायता मिलती है।

8. **प्रतिभाओं का मूल्यांकन** : प्राय: छात्र स्वयं अपनी प्रतिभाओं से अनभिज्ञ होते हैं। यदि उन्हें उनकी प्रतिभाओं का ज्ञान करा दिया जाये तो वे उनके विकास और उपयोग के लिए स्वयं प्रेरित हो जाते हैं। प्रत्येक बालक या बालिका में कोई न कोई प्रतिभा, कौशल या विशेष योग्यता अवष्य होती है, केवल उनके मापन और मूल्यांकन द्वारा उसका उन्हें ज्ञान कराने की आवश्यकता है।

9. **विकास का मूल्यांकन** : शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थियों के व्यक्तित्व, सामाजिक, बौद्धिक, संवेगात्मक, नैतिक, चारित्रिक आदि विकास में सहायता देना है। कौन सा विद्यार्थी किस क्षेत्र में कितनी प्रगति कर रहा है और कौन-सा विद्यार्थी प्रगति में कितना पिछड़ा है, इसका मूल्यांकन उपयुक्त परीक्षण से किया जा सकता है। प्रदत्त के प्राप्तांक अनुसार विकास हेतु उचित परामर्श दिया जा सकता है।

10. **अनुसंधान में उपयोग**: शिक्षा और शैक्षणिक विधि को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए समय-समय पर अनुसंधान, अध्ययन और प्रयोग होते रहते है। इस प्रकार के अनुसंधानो, अध्ययनों और प्रयोगों में परीक्षणों से विशेष सहायता मिलती है।

परामर्श के लिए उपयोगी परीक्षण -

(1) कार्य : विविध कृत पाठ्यक्रम के चयन में।
परीक्षण : (1) बुद्धि परीक्षण
(2) अभिक्षमता परीक्षण
(3) अभिरूचि परीक्षण
(4) उपलब्धि परीक्षण

(2) **कार्य** : पाठ्य सहगामी क्रियाओं के चुनाव हेतु परामर्श
परीक्षण : (1) बुद्धि परीक्षण
(2) अभिक्षमता परीक्षण
(3) अभिरूचि परीक्षण

(3) **कार्य** : समायोजन में सहायता हेतु परामर्श
परीक्षण : (1) समायोजन परीक्षण
(2) व्यक्तित्व परीक्षण
(3) बुद्धि परीक्षण

(4) **कार्य** : उच्च अध्ययन हेतु परामर्श
परीक्षण : (1) बुद्धि परीक्षण
(2) अभिक्षमता परीक्षण
(3) शैक्षिक अभिरूचि परीक्षण

(5) **कार्य** : व्यवसाय के चुनाव हेतु परामर्श
परीक्षण : (1) बुद्धि परीक्षण
(2) अभिक्षमता परीक्षण
(3) व्यावसायिक अभिरूचि परीक्षण
(4) व्यक्तित्व परीक्षण

(6) **कार्य** : समस्या मूलक छात्र की समस्या निवारण हेतु परामर्श।
परीक्षण : (1) बुद्धि परीक्षण
(2) समायोजन परीक्षण
(3) व्यक्तित्व परीक्षण

(7) **कार्य** : कम शैक्षणिक उपलब्धि वाले छात्र के लिए परामर्श।

	परीक्षण	:	(1)	बुद्धि परीक्षण
			(2)	समायोजन परीक्षण
			(3)	उपलब्धि परीक्षण
(8)	**कार्य**	:	सर्वांगीण विकास के लिए परामर्श	
	परीक्षण	:	(1)	बुद्धि परीक्षण
			(2)	व्यक्तित्व परीक्षण
			(3)	समायोजन परीक्षण
			(4)	अभिवृत्ति परीक्षण
(9)	**कार्य**	:	विभिन्न कार्यो के समूह चुनाव के लिए परामर्श	
	परीक्षण	:	(1)	विशेष मानसिक योग्यता परीक्षण
			(2)	अभिरूचि परीक्षण
			(3)	अभिवृत्ति परीक्षण
(10)	**कार्य**	:	व्यक्ति- अध्ययन	
	परीक्षण	:	(1)	बुद्धि परीक्षण
			(2)	व्यक्तित्व परीक्षण
			(3)	समायोजन परीक्षण
			(4)	अभिक्षमता परीक्षण
			(5)	अभिरूचि परीक्षण
(1)	**कार्य**	:	अनुसंधानात्मक कार्य के लिए।	
	परीक्षण	:	विषय (समस्या) के अनुसार परीक्षण उपयोग में लाये जाना चाहिए।	

1.10 सारांश

औद्योगिक विकास और बढ़ती प्रतियोगिता वाले इस युग में विद्यालय में परामर्श की आवश्यकता और बढ़ गई है। परामर्श के मूल आधार प्रजातांत्रिकता, समानता, निरंतरता, मनुष्यता, क्रियात्मकता, आत्मनिर्भरता, सार्थकता को ध्यान में रखना चाहिए। इन मूल तत्वों को ध्यान में रखकर विद्यालय में परामर्श का कार्यक्रम आयोजित करना चाहिए। परामर्श में कक्षा अध्यापक को अपनी भूमिका का निर्वाह भली प्रकार से करना चाहिए। छात्रों का स्तर मापने के लिए परामर्श में उपयोगी मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की भी उसे उचित जानकारी होनी चाहिए।

1.11 बोध प्रश्न

1 विद्यालय में प्राथमिक स्तर पर छात्रों को भावनात्मक परामर्श की क्यों आवश्यकता होती है?

2 कोठारी आयोग के अनुसार विद्यालय में परामर्श होना चाहिए टिप्पणी कीजिए।

3 परामर्श में कक्षा अध्यापक की क्या भूमिका होती है?

इकाई - 2

जीवनवृत्ति परामर्श

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 कैरियर की परिभाषाएं
2.3 कैरियर सूचना
2.4 जीवन वृति परामर्श के उद्देश्य
2.5 कैरियर/रोजगार सूचना की आवश्यकता और महत्त्व
2.6 कैरियर सूचना के स्त्रोत
2.7 कैरियर साहित्य
2.8 समाचार पत्र और पत्रिका के लेख
2.9 सारांश
2.10 बोध प्रश्न
2.11 संदर्भ सूची

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन पश्चात् -

- विद्यार्थी कैरियर काउंसलिंग शब्द के साथ-साथ कैरियर, कैरियर सूचना, तथ्य एवं आंकड़े आदि शब्दों का उपयोग सकेंगे।
- कैरियर /रोजगार संबंधीसूचना की आवश्यकता समझ सकेंगे।
- कैरियर परामर्श के सिद्धान्तों की व्याख्या कर सकेंगे।
- कैरियर सूचना के विभिन्न स्रोतो की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- कैरियर सूचना एकत्रित करने की विभिन्न विधियों के विषय में जान सकेंगे। इन विधियों की आवश्यक अर्हताओं का विश्लेषण कर सकेंगे।
- कैरियर काउसंलिंगके महत्व का विश्लेषण कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

किसी व्यक्ति का व्यवसाय उसके जीवन के प्रत्येक पक्ष को प्रभावित करता है, जैसे उसका समाज के प्रति दृष्टिकोण, उसकी मित्रता, उस स्थान का प्रकार जहाँ वह रहता है तथा वे गतिविधियाँ जो वह अपने खाली समय में सम्पन्न करता है। अन्य लोगों की दृष्टि में उसकी प्रतिष्ठा तथा समाज में उसकी भूमिका का निर्धारण भी उसके व्यवसाय द्वारा ही किया जाता है।

इतिहास

सबसे प्रथम कार्य सन् 1909 में फ्रेंक पार्सन ने कैरियर गाइडेन्स से संबंधितकिया इसके उपरान्त 1970 में डोनाल्ड ई. सुपर की लाईफ स्पेन एप्रोच और प्रेक्टिस कैरियर काउन्सिलिंग की गई।

2.2 कैरियर की परिभाषाएं

कार्टर वी.गुड के शिक्षा शब्द कोष के अनुसार, ''कैरियर'' जीवन के किसी चरण के दौरान किसी व्यक्ति द्वारा सम्पन्न सामान्य कार्य प्रणाली की प्रगति है, जैसे किसी व्यवसाय या संस्थान में, विशेषकर उसमें जिसमें विशिष्ट प्रशिक्षण चाहिए और जो किसी व्यक्ति की जीवन शैली बन जाये।

सुपर के अनुसार - ''अपनी जीविका के लिए चुना जाने वाला व्यवसाय जीवनवृत्ति है।''

क्रो एण्ड क्रो - ''ऐसा कार्य जो व्यक्ति अपने और अपने परिवार के जीवन यापन के लिए अपनाता है।''

मायर्स (डलमते) - ''अपनी आजीविका कमाने के लिए किया जाने वाला कार्य जीवनवृत्ति है।''

अत: विद्यार्थियों के लिये यह आवश्यक है कि वे अपने कैरियर को, परामर्शदाताओं (ब्वनदेमससवते) और सुनिश्चित चरणों की सहायता से किसी विशिष्ट कार्य या व्यवसाय में प्रवेश करने से पहले नियोजित (च्संद) करें।

किसी कैरियर के नियोजन के लिये या किसी के कैरियर के बारे में विचार करने के लिये विभिन्न व्यवसायों के बारे में सूचनाओं की आवश्यकता होती है। इसे व्यावसायिक सूचना कहा जाता है। परामर्शदाता के दृष्टिकोण से व्यावसायिक सूचनाएँ पदों (च्वेपजपवदे), कार्यो (श्रवइे) और व्यवसायों (व्बबनचंजपवदे) के बारे में वैध (टंसपक) और उपयोग करने योग्य आँकडे होते हैं जिनमे कर्तव्य प्रवेश के लिये वांछित अपेक्षाएं (त्मुनपतमउमदजे), कार्य की परिस्थितियां , विकास की पद्धति (।कअंदबमउमदज चं्जजमतद), कार्यकर्ताओं की वर्तमान और भविष्य में संभावित मांग और सूचनाओं के स्त्रोत (ैवनतबमे वित नितजीमत पदवितउंजपवद) समाहित होते हैं।

2.3 कैरियर सूचना

निर्देशन या मार्गदर्शन और परामर्श के संदर्भ में ''कैरियर-सूचना'' (ब्ंतममत प्दवितउंजपवद) का अर्थ बहुत ही विशिष्ट होता है तथा इसे समझना बहुत ही महत्वपूर्ण होता है। इसके लिये सर्वप्रथम हमें 'सूचना' (प्दवितउंजपवद) को समझना आवश्यक है।

'कैरियर सूचना' को इस प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है - 'वह कार्य-जगत से जुड़ी सूचना जो कैरियर के विकास की प्रक्रिया में लाभकारी हो तथा जिसमें शैक्षिक, व्यावसायिक तथा कार्य से

सम्बन्धित भले-सामाजिक सूचना सम्मिलित होती है, उदाहरणार्थ - प्रशिक्षण की उपलब्धता, कार्य की प्रकृति तथा विभिन्न रोजगारों में कार्यकर्ताओं की स्थिति।

¼The term career information can be defined as the information related to the world of work that can be useful in the process of career development including educational, occupational and psychosocial information related to working, e.g. availability of training, the nature of work and status of workers in different occupations.)

उन व्यक्तियों को गुणात्मकता और भावात्मकता रोजगार सम्बन्धी सूचना प्रदान करना बहुत महत्वपूर्ण है जो अपने कैरियर के बारे में निर्णय लेने की इच्छा रखते हैं। कैरियर सूचना का ज्ञान होना कैरियर-विकास के दौरान आत्म-अन्वेषण की कोई गारन्टी नहीं होता। परन्तु उत्तम कैरियर-निर्णय ऐसे आंकड़ों या सूचना की अनुपस्थिति में संभव ही नहीं। ऐसे निर्णय लेने में असफलता या अविवेकपूर्ण चयन पर्याप्त या नवीन सूचना के अभाव के परिणामस्वरूप होता है।

(i) निर्देशन या मार्गदर्शन और परामर्श (ब्वनदेमससपदह) के लिये इसका बहुत ही विशिष्ट अर्थ होता है।

(ii) कोई भी सूचना, आंकड़ों (कंजं) का संक्षिप्तीकृत स्वरूप है। प्राप्तकर्ता के लिये अर्थपूर्ण तथा निर्णय के लिये मूल्यवान आंकड़े ही 'सूचना' होते हैं।

(iii) कोई भी सूचना किसी भी बहस या परिचर्चा (क्पेबनेपवद), गणना या निर्णय का आधार होती है।

(iv) 'सूचना' स्थिर और निश्चित अर्थ सहित आंकड़े (कंजं) होती है।

(v) कैरियर सूचना कार्य-जगत से संबंधितसूचना होती है जो कैरियर-विकास के लिये लाभकारी हो सकती है।

(vi) कैरियर-सूचना का ज्ञान, आत्म-अन्वेशन की कैरियर-विकास के दौरान कोई गारन्टी नहीं होती।

(vii) कैरियर सूचना का अभाव उत्तम कैरियर निर्णयों और विवेकपूर्ण चयन को निसत्साहित करती है।

2.4 जीवन वृति परामर्श के उद्देश्य

विद्यालय में जीवनवृत्ति परामर्श का उद्देश्य बालक-बालिकाओं को उनकी योग्यतानुसार व्यवसाय के चुनाव, चुने हुए व्यवसाय की प्राप्ति हेतु योजना तैयार करने तथा व्यवसाय मिल जाने पर समायोजन करने में सहायता पहुँचाना है। अपनी शिक्षा पूर्ण कर लेने के बाद युवक और युवती अपनी योग्यताओं के अनुरूप व्यवसाय चाहते हैं। अध्ययन काल के अन्तिम वर्ष में उनके सामने व्यवसाय प्राप्ति की चिन्ता बनी रहती है। अन्तिम परीक्षा के उपरान्त वे 'कहीं भी व्यवसाय मिल जाये' की इच्छा से प्रत्येक व्यवसाय के लिए आवेदन करते रहते हैं। प्राप्त आंकड़ों से ज्ञात होता है कि केवल 15.5 प्रतिशत व्यक्तियों को उनकी योग्यताओं और क्षमताओं के अनुकूल व्यवसाय मिलता है। शेष को निराश होकर कम आय और कम स्थिति का व्यवसाय स्वीकार करना पड़ता है।

कैरियर काउन्सलर मुख्य भूमिकायें निभाते है -

1- कैरियर काउन्सलर किसी भी व्यक्ति के कैरियर प्रबन्धन के विकास में सहायता करता है।

2- कैरियर काउन्सलर व्यक्तिगत विशेषताओं और आवश्यकताओं का आंकलन कर श्रम बाजार और शिक्षा प्रणाली से संबंधित जानकारी प्रधान कर कैरियर चयन में सहायता देता है।

3- व्यक्ति की योग्यता एवं अनुभव के अनुरूप वांछित वेतन व्यक्तिगत शौक, हितों एवं अन्य संभावनाओं की जानकारी देते है।

4- उपयुक्त प्लेसमेंट / रोजगार खोजने में मदद करते है।

जीवनवृत्ति परामर्श का उद्देश्य व्यक्ति और समाज की सेवा करना है। उपर्युक्त व्यवसाय के लिए उपयुक्त व्यक्ति की खोज करना है अथवा उपयुक्त व्यक्ति के लिए उसके अनुकूल व्यवसाय खोज देने हेतु सहायता करना है। अतएव जीवनवृत्ति परामर्श उन सब विधियों से सम्बन्धित है जिसमें बालक स्वयं अपनी प्रतिभाओं को खोज कर किसी एक व्यवसाय के लिए अपने आप को तैयार करता है। अच्छे जीवन वृत्ति परामर्श के सिद्धान्त निम्नानुसार है।

1. सबसे उत्तम प्रकार का परामर्श बुद्धिमतापूर्ण स्वयं के लिए निर्णय करना है। अतएवं विद्यालय का कार्य छात्र को व्यवसाय सम्बन्धी स्वयं अपनी योजना बनाने के लिए प्रेरित करना होना चाहिए।
2. विभिन्न व्यावसायिक समूहों की जानकारी देकर उसमें से एक व्यवसाय अपनी क्षमतानुसार चुनने में सहायता देना चाहिए।
3. विभिन्न व्यवसाय की आवश्यकताओं और अपनी अभिरुचियों की तुलना करने की योग्यता विकसित करना चाहिए।
4. व्यवसाय सम्बन्धी अन्तिम निर्णय लेने के पूर्व विभिन्न व्यवसायों का कार्य अनुभव देना चाहिए।
5. विभिन्न व्यवसाय के लिए आवश्यक सहयोग, कार्य कौशल और सकारात्मक अभिवृत्तियों का विकास करना चाहिए।
6. व्यावसायिक परामर्श को कोई एक विशेष कार्यक्रम के अन्तर्गत न रखकर उसे पाठ्य- सहगामी गतिविधि के अन्तर्गत रखना चाहिए।
7. इसे एक निरन्तर प्रक्रिया के रूप में चलने देना चाहिए। प्रारम्भिक कक्षाओं में पाठ्यक्रम के माध्यम से व्यावसायिक परामर्श देना चाहिए तथा बड़ी कक्षाओं में नियमित परामर्श की कक्षाएँ आयोजित करना चाहिए।

प्रश्न-1 जीवनवृत्ति परामर्श की परिभाषा देते हुए अर्थ समझाइये।

प्रश्न-2 जीवनवृत्ति परामर्श के प्रमुख उद्देश्य एवं सिद्धान्तों की विवेचना कीजिए।

कैरियर सूचना कैरियर-विकास में लाभकारी होती है -

निर्देशन/परामर्श के लिये कैरियर सूचना का विशिष्ट अर्थ होता है। प्रत्येक सूचना का अपना अलग मूल्य है। कैरियर सूचना में उपलब्धता, परिशुद्धता, समय पर कर्त्ता को प्राप्त सूचना सम्पूर्णता, प्रस्तुतीकरण

आदि मूल्य महत्वपूर्ण होते है। कैरियर सूचना के अभाव में अविवेकपूर्ण चयन होते हैं। कैरियर-विकास में कैरियर-सूचना, आत्म-अन्वेशन की कोई गारन्टी नहीं देती।

प्रश्न 1 - कैरियर काउंसलिंगमें प्रयोग किये जाने वाले शब्दों की सूची बनाइये ?

प्रश्न 2 - कैरियर काउंसलिंगमें कैरियर सूचना एवं तथ्यों व आंकडों का क्या महत्व है ?

2.5 कैरियर/रोजगार सूचना की आवश्यकता और महत्त्व

व्यावसायिक मार्ग-दर्शन के किसी भी कार्यक्रम में कैरियर/रोजगार सूचना मूलभूत (थ्नदकंउमदजंस) होती है। जॉन एम. ब्रीवर ने रोजगार सूचना की स्कूल-विषय के रूप में सिफारिश की थी। स्कूल के विद्यार्थियों को रोजगार की स्पष्ट तस्वीर तथा विभिन्न रोजगारों के सामाजिक मूल्यांकन को अर्जित करना आवश्यक होता है ताकि वे विभिन्न रोजगारों के बारे में अपने स्वयं के निर्णय ले सकें।

निम्नलिखित बिन्दुओं पर विचार करके रोजगार सूचना प्रदान करने की आवश्यकता को न्यायोचित (श्रनेजपलि) ठहराया जा सकता है -

(i) कार्य की संतुष्टि की संभावना - यदि किसी व्यक्ति को व्यवसाय से परिचित करवा दिया जाये तो कार्य-संतुष्टि की कुछ संभावना होती है। यदि व्यक्ति को ऐसी व्यावसायिक सूचनाएं प्रारम्भ में ही उपलब्ध करवा दी जाये तो कार्य या व्यवसाय को संतोषजनक ढंग से चुनने में व्यक्ति सफल हो जाता है। ऐसी स्थिति में धन-प्राप्ति कार्य-संतुष्टि की अपेक्षा गौण सिद्ध होती है।

(ii) कुशल मार्ग दर्शन के लिये - कुशल मार्ग-दर्शन वर्तमान वैज्ञानिक युवा की आवश्यकता है। इसलिये मार्ग-दर्शन और परामर्श को अधिक वैज्ञानिक बनाने के लिये विभिन्न रोजगारों तथा उनके विभिन्न पदों आदि का ज्ञान विभिन्न माध्यमों के द्वारा फैलाया जाना चाहिए। कार्यों के इच्छुकों को न केवल अपनी शक्तियों , रूचियों और उनके झुकावों (प्दबसपदंजपवद) के बारे में जानना चाहिए, बल्कि प्रशिक्षण संस्थानों, प्रशिक्षण अवधि, प्रशिक्षण के पश्चात् अवसर तथा भावी पदोन्नति आदि के बारे में परिचित होना चाहिए।

(iii) प्रशिक्षण संस्थानों को अधिक अर्थपूर्ण और उपयोगी बनाना वैज्ञानिक युग में प्रत्येक क्षेत्र तकनीकी ज्ञान चाहता है। इस उद्देश्य के लिये प्रशिक्षण की अति आवश्यकता है। जिसे विभिन्न प्रशिक्षण संस्थानों में उपलब्ध कराया जा सकता है। इन प्रशिक्षण संस्थानों के बारे में सूचना और उनका सम्बन्ध (त्मसमअंदबम) प्रशिक्षण के प्रारम्भ में ही विद्यार्थियों को बताया जाना चाहिए। स्कूल पाठ्यक्रमों और प्रशिक्षण कार्यक्रमों में सम्बन्धित रोजगार सूचनाओं को शामिल किया जाना चाहिए।

(iv) सामाजिक, आर्थिक और तकनीकी परिवर्तनों से परिचित होना - सारे विश्व में सामाजिक, आर्थिक और तकनीकी परिवर्तन बहुत ही तेजी से हो रहे हैं। इस बदलते हुए वातावरण में, राजगारों की बदलती हुई प्रकृति का अध्ययन अवश्य किया जाना चाहिये। इसके लिये रोजगार सूचना सेवा आवश्यक है। इन परिवर्तनों के कारण, पुराने पारम्परिक उद्योग धीरे-धीरे विलुप्त (क्पेंचचमंत) होते जा रहे हैं तथा नये उद्योगों का उदय हो रहा है। इन आधुनिक रोजगारों या

व्यवसायों को विभिन्न कौशलों की आवश्यकता होती है। ये तीव्र गति के परिवर्तन बेरोजगारी पैदा कर रहे हैं। इंजीनियरिंग के क्षेत्र में ''बेरोजगारी विस्फोट'' हमें विद्यार्थियों के संबंधितक्षेत्रों में रोजगार सूचना की आवश्यकता की ओर संकेत करता है।

(v) सामुदायिक कार्यक्रमों को सफल बनाना - यदि लोगों को देश की कार्य-स्थिति परिचित करवा दिया जाये तो राष्ट्रीय स्तर के सामुदायिक कार्यक्रम को सफल बनाया जा सकता है। रोजगार सूचनाएं सामुदायिक संस्थानों के लिये लाभदायक सिद्ध हो सकती है।

(vi) रोजगार सूचना सेवा एक व्यक्ति के लिये लाभकारी हो सकता है - कोई व्यक्ति रोजगारों की जानी-पहचानी सूची में से एक रोजगार का चयन करता है। ऐसे बहुत से रोजगार हैं जिनके बारे में हम कुछ नहीं जानते। लोग बहुत ही सीमित जानकारी के कारण रोजगार छोड़ते हैं। कई बार अपनी संतुष्टि के लिये लोग अपने रोजगार बदल लेते हैं। इस उद्देश्य के रोजगार सूचना सेवा के माध्यम से अर्जित किया जा सकता है। इस प्रकार की उपलब्धियाँ, व्यक्ति और समाज दोनों के लिये लाभकारी हो सकती हैं।

(vii) उचित स्थानापन्न हेतु - समाज के सदस्यों की योग्यताओं शैक्षिक उपलब्धियों तथा प्रतिभाओं का अधिकतम उपयोग करना आवश्यक होता है। ऐसा हम तभी कर सकते हैं। यदि हम उन्हें कार्य-परिस्थितियों कार्य की उपलब्धता आदि के बारे में पहले से ही परिचित करवा दें। रोजगार सूचना की आवश्यकता प्रत्येक क्षेत्र में उचित स्थानापन्न के लिए आवश्यक है।

(viii) कार्यों और व्यक्ति की सक्षमता में समन्वय के लिये - यह एक सामान्य सी प्रथा है कि सभी माता-पिता अपने बच्चों को अच्छे सरकारी पदों पर देखना चाहते हैं। हर पिता और हर माँ अपने बेटे या बेटी को डॉक्टर या इंजीनियर बनाना चाहते हैं। हर कोई उच्च पदो के स्वप्न देखना चाहते हैं। परन्तु कोई भी उनकी क्षमताओं के बारे में नहीं सोचता। व्यक्ति की क्षमता और कार्य की प्रकृति में कुछ समन्वय होना चाहिए। अत: रोजगार सूचना ऐसा करने में हमारी सहायता करती है।

(ix) रोजगार सूचना व्यवसायिक निर्देशन का आधार है - संपूर्ण व्यावसायिक निर्देशन कार्यक्रम रोजगार सूचना पर आधारित है। यह व्यवसायिक निर्देशन सेवाओं के आधार की नींव है। रोजगार सूचना की अनुपस्थिति में व्यावसायिक निर्देशन कार्यक्रम निर्जीव है।

प्रश्न 1 - रोजगार संबंधीसूचना की आवश्यकता पर प्रकाश डालिये ?

प्रश्न 2 -कैरियर सूचना का व्यावसायिक चयन में क्या महत्त्व होता है ?

2.6 कैरियर सूचना के स्रोत

हम विभिन्न स्रोतों से रोजगार सूचनाएं एकत्रित कर सकते हैं। हम कई बहु-माध्यम उपागम के अन्तर्गत व्यक्ति को रोजगार सूचना के स्रोत तक पहुँचने और उससे परामर्श करने में तत्परता दिखानी पड़ेगी क्योंकि प्रत्येक स्रोत में रोजगार सूचना के बारे में बहुत तीव्र परिवर्तन हो रहे हैं। अर्थात् विभिन्न सूचनाओं का सम्मिलित होना या निष्कासन बहुत तीव्र गति से हो रहा है। कोई भी व्यक्ति निम्नलिखित

रोजगार सूचनाओं के स्त्रोत तक पहुँच सकता है और रोजगार संबंधीनवीन सूचनाओं तक पहुँच सकता है।

परामर्शक को व्यावसायिक सूचना भिन्न-भिन्न स्त्रोतों से एकत्र करनी चाहिए। कुछ स्त्रोतों के नाम इस प्रकार है जैसे - प्रशिक्षण संस्थाएँ, रोजगार कार्यालय, राजकीय व्यावसायिक परामर्श ब्यूरो, औद्योगिक संस्थान, समाचार पत्र के प्रकाशन, ट्रेड यूनियन कार्यालय, लोक सेवा आयोग, सेना रोजगार कार्यालय, रेल्वे सेवा आयोग, निजी परामर्श केन्द्र, विश्वविद्यालय का परामर्श केन्द्र आदि।

2.7 कैरियर साहित्य

कैरियर रोजगारों की दुनिया में प्रथम पग है - ''एनसाईक्लोपीडिया'' में परामर्श करना। विभिन्न एनसाईक्लोपीडिया उपलब्ध है। जो रूचि के विभिन्न क्षेत्रों में बड़ी गहराई से अध्ययन जानकारी (क्मंस) करते हैं। एनसाईक्लोपीडिया का प्रत्येक अध्याय आगामी पठन हेतु (थ्नजनतम त्मंकपदह), विभिन्न रोजगारों और एम्प्लायमेंट क्षेत्रों (म्उचसवलउमदज ।तमें) से संबंधितपुस्तकों का चयन करता है।

कैरियर या रोजगार साहित्य परम्परागत रूप से अधिक प्रोत्साहित या उत्साहित (प्देचपतम) नहीं कर सका परन्तु हाल ही में वह मुख्य-धारा का स्कूल विषय बन चुका है। वास्तविक मार्ग-दर्शन (त्मंसपंजपब ळनपकंदबम) के महत्त्व को पहचाना जाने लगा है। इस प्रकार की प्रगति या विकास से रोजगार साहित्य का लाभ पहुँचने लगा है। कैरियर पुस्तकें (ब्ंतममत ठववो) इस आशय से लिखी और डिजाईन की जाने लगी हैं कि रोजगार की योग्यताओं और परीक्षाओं के बारे में जानने के अतिरिक्त और भी जानने को बहुत कुछ कैरियर या रोजगार साहित्य में विभिन्न प्रकार की पुस्तकों में सम्मिलित होता है। उच्च या आगामी शिक्षा के लिये या कैरियर या रोजगारों (ब्ंतममते) के लिये इन पुस्तकों का चयन करने के लिये कुछ आवश्यक मापदंडया कसौटियों (ब्तपजमतपं) को ध्यान में रखना चाहिये। ये मापदंडया कसौटियाँ निम्नलिखित है-

तथ्यात्मक रूप से सही - कैरियर या रोजगार सम्बन्धी पुस्तकें जो विशेष रूप से युवा लोगों के लिये होती है, तथ्यात्मक रूप से सही होनी चाहिए तथा सजीव (स्पअमसल) और अच्छे ढंग से प्रस्तुत होनी चाहिये। संलिप्त कार्य का वर्णन - एक अच्छी कैरियर या रोजगार सम्बन्धी पुस्तक में संलिप्त कार्य का वर्णन होना चाहिए तथा उन लोगों से पाठक का परिचय करवाया जाना चाहिये, जो पहले से ही कार्य कर रहे होते हैं। वांछित गुणों या विशेषताओं की व्याख्या - इन पुस्तकों को किसी विशेष कार्य (श्रवइ) को करने के लिये जिस प्रकार के गुणों या विशेषताओं (बौद्धिक, वैयक्तिक, व्यावहारिक आदि) की आवश्यकता होती है, उनकी व्याख्या करनी चाहिए और अधिक तथा कम आकर्षक विशेषताओं पर भी विचार करना चाहिये। समझाने योग्य भाषा में लेखन - कैरियर संबंधीपुस्तकों को उपयुक्त आयु वर्ग और योग्यता के स्तर के समझ आने वाली भाषा में लिखा जाना चाहिये। कैरियर या रोजगार सम्बन्धी पुस्तकों को विषय सामग्री पर प्रकाश डालने, बिन्दु को अंडरलाईन करने या युवा पाठक को समझाने के लिये सरल बनाने हेतु चार्टों और दृष्टान्तों का प्रयोग करना चाहिये। कैरियर या रोजगार सम्बन्धी पुस्तकें अप-टू-डेट (न्च.जव.क्ंजम) होनी चाहिये। यदि कोई पुस्तक तीन या चार वर्ष पुरानी है तो वह अधिक उपयोगी नहीं होती।

किशोरों को अन्य पुस्तकों के प्रयोग के लिये निरुत्साहित नहीं किया जाना चाहिये। कैरियर या रोजगारों को सीमित नहीं समझना चाहिये।

2.8 समाचार पत्र और पत्रिका के लेख

व्यक्तिगत् रोजगार या रोजगार के क्षेत्रों के बारे में सर्वोत्तम सूचनाएं, कैरियर साहित्य के रूप में प्राप्त की जा सकती है समाचार पत्र, पत्रिका-लेख, सर्वेक्षण और प्रतिवेदन भी अधिक उपयुक्त एवं रोचक चित्र प्रस्तुत करने में सहायता करते हैं। रोजगार देने वालों (च्त्वेचमबजपअम म्उचसवलमते) से प्राप्त साहित्य का प्रयोग बहुत सावधानी से किया जाना चाहिये तथा इसे किसी विशिष्ट रोजगार से प्रथम परिचय के रूप में कभी भी प्रयुक्त नहीं किया जाना चाहिये। युवाओं को इसका आलोचनात्मक अध्ययन करने के बाद ही व्यवसायों के उपयुक्त चयन की योजना बनानी चाहिये।

कैरियर सूचना एकत्रित करने की विधियाँ

कैरियर सूचनाएं कैरियर-परामर्शदाता के लिये बहुत ही आवश्यक या अनिवार्य है तथा इनका व्यक्ति या प्रार्थी (ब्सपमदज) से जुड़ी सूचनाओं के साथ मिलान किया जाता है। कैरियर सूचना की प्रकृति गुणात्मक के साथ-साथ मात्रात्मक (फनंदजपजंजपअम) भी हो सकती है। अतः इन सूचनाओं को उपयुक्त ढंग से एकत्रित किया जाना चाहिये । इन सूचनाओं का केवल संकलन ही महत्वपूर्ण नहीं होता, बल्कि इनका रख-रखाव और प्रस्तुतीकरण भी महत्वपूर्ण होता है। अतः इनके प्रदर्शन को निम्नलिखित सुझावों का अनुसरण करना चाहिये।

सूचना का प्रस्तुतीकरण आकर्षक होना चाहिये। चार्ट, पोस्टर और अन्य दृश्य-सामग्री विद्यार्थियों की आंखों के स्तर पर होनी चाहिये। यदि वे विस्तारपूर्वक हैं तो इन्हें उपयुक्त ढंग से व्यवस्थित होना चाहिये। दीवार या प्रदर्शन-स्थल पर बहुत अधिक भीड़ नहीं होनी चाहिये। प्रदर्शित सूचना को बार-बार नवीनतम (न्च.कंजमक) करते रहना चाहिये। इसे विद्यार्थियों की आवश्यकताओं के अनुरूप प्रस्तुत करना चाहिए। इसमें विश्वसनीयता वैधता और व्यापकता होना चाहिये।

कैरियर सूचना विश्वसनीय, वैध और व्यापक होगी यदि इसे क्रमबद्ध एकत्रित किया जाये। कैरियर-परामर्शदाता के अन्य सदस्यों के सहयोग से इस रिकार्ड या सूचना को एकत्रित कर उचित रख-रखाव करना चाहिये। ऐसी सूचनाओं और रिकार्डों का नियमित रूप से रख-रखाव होना चाहिये ओर उसे नवीनतम (न्चजव.कंजम) रखना चाहिये।

चूँकि कुछ सूचनाएं गोपनीय प्रकृति की होती है इन्हें केवल उन व्यक्तियों को उपलब्ध कराया जाना चाहिये जो विद्यार्थियों को उनके समायोजन में सहायता करने की इच्छा रखते हो। कैरियर सूचनाओं को एकत्रित करने के लिये कैरियर परामर्शदाता निम्नलिखित तकनीकों का प्रयोग कर सकता है। ये सूचनाएं निम्न गतिविधियों में से अर्जित की जा सकती है -

(1) अभिविन्यास वार्ताएं अभिविन्यास वार्ताएं स्नातकों और स्नातकोत्तरों के लिए पाठ्यक्रमों और कैरियरों, प्रतिस्पर्धात्मक परीक्षाओं, पत्राचार कोर्स शिक्षुता (।चचतमदजपबमेीपच) योजनाओं, कार्यों में प्रवेश, दूसरे देशों में उपलब्ध कोर्सों और कैरियर, रोजगार पद्धतियों में परिवर्तनों

विभिन्न स्तरों पर निर्देशन अभिकरणों , रोजगार और व्यवसाय की प्रवृत्तियों इत्यादि के बारे में परिचित कराती है। इन वार्ताओं से प्रार्थी या स्कूल के विद्यार्थी विभिन्न कैरियरों के बारे में उपयुक्त, नवीनतम तथा वस्तुनिष्ठ सूचना निकाल सकते हैं।

(2) कैरियर वार्ताएं - किसी विशेष कार्य के विवरण के बारे में वार्ता को कैरियर-वार्ता (ब्ंतममत जंसा) का नाम दिया जा सकता है। ऐसी वार्ताएं प्रार्थियों को व्यवसाय और कैरियर के बारे में सूचनाएं प्रदान करती हैं। यह किसी क्षेत्रों में अनुभवी व्यक्तियों से सूचना का सीधा या परोक्ष स्थानान्तरण होता है। कैरियर वार्ता किसी क्षेत्र में विशेषज्ञ वार्ता, व्याख्यान, सेमीनार और वार्ता के माध्यम से कैरियर सूचना प्रदान करने की विधियों में से एक विधि है। कैरियर वार्ताएं विभिन्न केन्द्रीय बिन्दुओं पर दी जा सकती है। जैसे - स्नातकों और स्नातकोत्तरों के लिये उचित अवसर, स्व: रोजगार योजनाएं, सरकारी नौकरी के अवसर, भविष्य की व्यवसायिक योजनाएं, व्यवसायिक रुचियाँ और अभिरुचियाँ आदि।

उद्देश्य

उपर्युक्त बहस कैरियर-वार्ता के निम्नलिखित उद्देश्यों का सुझाव देती है -

(i) प्रार्थियों या विद्यार्थियों को अवसर प्रदान करके कैरियर के बारे में उनके भ्रमों को किसी क्षेत्र के विशेषज्ञों के साथ सीधी अन्तर्क्रिया के माध्यम से दूर करने के योग्य बनाना।

(ii) प्रार्थियों या विद्यार्थियों को कैरियर के बारे में किसी क्षेत्र में अनुभवी व्यक्तियों से सीधी या परोक्ष सूचना अर्जित करने के बाद योग्य बनाना।

इस प्रकार की कैरियर वार्ता की उपयोगिता तब बढ़ जाती है। यदि कैरियर-वार्ता कार्यक्रम उपयुक्त ढंग से समन्वित हो और कैरियर-सार तैयार किया जाये। एक दस्तावेज के रूप में इस प्रकार के कैरियर-सार को संभालकर रखा जाना चाहिये।

वक्ता/वार्ताकार द्वारा तैयारी) - कैरियर-वार्ता के लिये सावधानीपूर्वक की गई तैयारी पूर्व-मांग (च्तम.तमुनपेपजम) होती है। ये तैयारियाँ वक्ता की ओर से होती हैं। इस प्रकार की वार्ता के लिये वक्ता को तैयार होना चाहिये। उसे निम्न तैयारियाँ करनी चाहिये -

(i) वक्ता को आवश्यक योजना बनानी चाहिये।

(ii) संस्था की पृष्ट-भूमि, वार्ता को सुन रहे विद्यार्थियों के विषयों की पृष्ठ-भूमि, प्रार्थियों/विद्यार्थियों की संस्था, उनकी रुचियाँ, अपेक्षाएं, वार्ता के लिये निर्धारित समय तथा वार्ता की अपेक्षित विषय-वस्तु आदि की सूचना प्राप्त करे।

(3) कैरियर कान्फ्रैंसिस (ब्ंतममत ब्वदमितमदबमे) - कैरियर कान्फ्रैंस एक सामूहिक क्रिया या गतिविधि (ळतवनच ।बजपअपजल) होती है। इसका मुख्य उद्देश्य रोजगार या कैरियर सूचना प्रदान करना होता है। कैरियर कान्फ्रैंस में विभिन्न व्यवसायों उद्योगों से लोग आते हैं और अपने क्षेत्र के बारे में विद्यार्थियों या प्रार्थियों के बीच वार्ता प्रस्तुत करते हैं। कैरियर कान्फ्रैंस में व्यवसायिक निर्देशन (टवबंजपवदंस ळनपकंदबम) के थीम पर विचार-विमर्श किया जाता है। कार्टर वी.गुड. की शिक्षा की डिक्शनरी के अनुसार एक कान्फ्रैंस किसी सामान्य रुचि के दो या अधिक व्यक्तियों की मीटिंग होती है।

जो मूल रूप से विचार-विमर्श, बहस और दृष्टिकोणों तथा विचारों के आदान-प्रदान हेतु इकट्ठे होते हैं। निर्देशन में कैरियर कान्फ्रेंस एक ग्रुप-मीटिंग होती है। जिसका आयोजन स्कूल करता है तथा जिसमें भौगोलिक दृष्टि से आस पड़ौस के क्षेत्रों या समुदाय के रोजगारों के प्रतिनिधियों की संभागिता होती है।

उद्देश्य - कैरियर कान्फ्रैंसिस के निम्नलिखित उद्देश्य होते हैं -

(i) प्रार्थियों/विद्यार्थियों को विभिन्न कैरियर अवसरों के बारे में व्यापक या विस्तृत दृष्टिकोण ग्रहण करने के योग्य बनाना।

(ii) अपनी पंसद के विभिन्न कैरियरों के बारे में विभिन्न विशेषज्ञों से सूचनाएं एकत्रित करना।

(iii) कैरियरों के समूह पर विशेषज्ञों से प्रत्यक्ष (क्पतमबज) अन्तर्क्रिया करना।

(4) निरीक्षण या दौरे - कैरियर सूचना एकत्रित करने का एक और प्रभावशाली तरीका है - निरीक्षण या दौरे ताजा या नवीन कैरियर सूचनाएँ (थ्पतेज भ्ंदक ब्ंतममत प्दवितउंजपवदे) एकत्रित करने के लिये व्यापारिक संस्थाओं, उद्योगों, व्यवसायिक कॉलेजों, अनुसंधान संस्थाओं की यात्राओं या दौरों की व्यवस्था की जानी चाहिये। इस प्रकार की यात्राएं वास्तविक कार्य के प्रत्यक्ष और ताजे या नवीन अनुभव प्रदान करती है। ऐसी यात्रा प्रार्थी को कार्य के वास्तविक वातावरण से भी परिचित कराती है।

उद्देश्य

(i) भविष्य के रोजगारदाताओं के संपर्क में आना।

(ii) विभिन्न कार्य, उद्योगों, कार्य करने के वातावरण के बारे में वास्तविक सूचना प्राप्त करना।

(5) शैक्षिक वार्ताएँ - कैरियर-परामर्शदाता शैक्षिक वार्ताओं की व्यवस्था भी कर सकता है। ऐसी वार्ताओं के लिये वह समुदाय से या पडौस की संस्थाओं से अनुभवी या उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों को आमंत्रित कर सकता है। कुछ विषय-वस्तुएँ वक्ता को सुझाए जा सकते हैं। जैसे - समायोजन की समस्याएं, प्रभावशाली ढंग से अध्ययन करना, नोट्स तैयार करने, परीक्षाओं या प्रतियोगिताओं की तैयारी करना, पुस्तकालय सुविधाओं का सर्वोत्तम प्रयोग, अच्छा कार्य करने की आदतों का विकास करना, साक्षात्कार करना, होस्टल में समायोजन और कैरियर का चयन करना इत्यादि।

(6) अनुकरणीय साक्षात्कार - शब्द का अर्थ है कृत्रिम अर्थात् कृत्रिम वातावरण में वास्तविक परिस्थिति का पैदा या सृजन करना । किसी साक्षात्कार में कैरियर के उद्देश्य से उपस्थित होने के लिये वास्तविक परिस्थिति प्रदान करना संभव नहीं होता। साक्षात्कार नये लोगों को किसी संगठन या उद्योग में भर्ती करने का सबसे अधिक लोकप्रिय तरीका हैं आजकल साक्षात्कार, चयन की विभिन्न कसौटियों में से एक है। अत: प्रार्थी को यह जानना चाहिए कि साक्षात्कार कैसे दिया जाता है। किसी साक्षात्कार का सामना करना भी एक कला होती है। अत: आजकल कैरियर-साक्षात्कार भी बहुत महत्वपूर्ण होता है। प्रार्थियों या विद्यार्थियों को इस दिशा में भी प्रशिक्षित करना आवश्यक है।

उद्देश्य - कैरियर से जुडे साक्षात्कारों के निम्नलिखित उद्देश्य होते हैं -

(i) मनोग्रन्थियों (ब्वउचसमगमे) से छुटकारा पाना।

(ii) प्रार्थियों को कैरियर-साक्षात्कार का सामना करने के कौशलों को अर्जित करने के अवसर प्राप्त करने के योग्य बनाना।

(iii) प्रार्थियों का मूल्यांकन करना, परामर्श देना और उनका चयन करना।

(7) कैरियर कार्नर (ब्ंतममत ब्वतदमत) - प्रार्थियों को कैरियर सूचना प्रदान करने और एकत्रित करने की एक और विधि है। कैरियर कार्नर एक ऐसा स्थान होता है, जहाँ पर कैरियर सूचना का प्रदर्शन विद्यार्थियों या प्रार्थियों के लाभ के लिये किया जाता है। कैरियर वार्ता और कैरियर कान्फ्रेंस की भाँति ही इसका उद्देश्य भी विभिन्न रोजगारों से सम्बन्धित सूचनाओं को एकत्रित करना और उन्हें प्रसारित करना होता है। कैरियर कार्नर में कैरियर से जुड़ी सूचनाएँ किसी भी रूप में सम्मिलित होती है। अर्थात् कैरियर-पुस्तकें, इश्तिहार, पोस्टर, कैरियर सूचनाओं से सम्बन्धित नोटिस।

उद्देश्य - कैरियर कार्नर के मुख्य उद्देश्य होते हैं-

(i) विभिन्न प्रकार के कैरियर-साहित्य से ली गई विभिन्न रोजगारों के बारे में आधुनिकतम सूचनाओं को प्रदर्शित करना तथा उन्हें प्रदान करना।

(ii) प्रार्थियों को विभिन्न कार्य-अवसरों के बारे में सूचना प्राप्त करने योग्य बनाना।

(iii) कैरियर सूची का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थियों को उनके रोजगार अवसरों का विश्लेषण करने योग्य बनाना।

(8) कैरियर परामर्श - कैरियर सूचना समस्याएं पैदा कर सकती है। जैसे - व्यवसाय का चयन, व्यवसाय के लिए तैयारी और व्यवसाय में प्रगति। ऐसी समस्याओं का समाधान कैरियर परामर्श द्वारा किया जाता है। इस शब्द का प्रयोग सामान्य रूप से किया जाता है। परन्तु प्रत्येक परामर्श के विशिष्ट उद्देश्य होते हैं। ये उद्देश्य हल की जाने वाली समस्याओं पर निर्भर करते हैं। व्यवसायों से जुडे परामर्श के निम्नलिखित उद्देश्य होते हैं -

(i) प्रार्थियों या विद्यार्थियों को उनकी व्यावसायिक समस्याओं के समाधान का विश्वास दिलाना।

(ii) प्रार्थियों की विशेष व्यवसाय या व्यवसायों के समूह से जुड़ी शक्तियों की खोज करना।

(iii) प्रार्थियों के लिये विभिन्न सूचनाएँ एकत्रित तथा प्रसारित करना जैसे किसी व्यवसाय के लिये अपेक्षाएं किसी व्यवसाय की सफलता के लिये उत्तरदायी परिस्थितियाँ, भविष्य में सहायता कार्य का भविष्य आदि।

(iv) व्यावसायिक परामर्श लेने वाले प्रार्थियों की स्व:जागरूकता को बढ़ाना।

(v) प्रार्थियों की वैयक्तिक आवश्यकताओं को खोजना तथा उनका मूल्यांकन करना।

2.9 सारांश

कैरियर परामर्श के परिणामस्वरूप कैरियर-सूचनाएं प्रार्थियों को प्रदान की जाती हैं तथा वे कार्य-जगत में व्यक्तिगत-पहिचान की संवेदना महसूस करते हैं। इस स्थिति में केवल सम्बन्धित व्यवसायों पर परामर्शदाताओं द्वारा पुन: विचार (त्मअपमू) किया जाता है तथा परामर्श के लिये विचारार्थ स्वीकार किया जाता है। इस प्रक्रिया में प्रार्थी विभिन्न कैरियरों के बारे में नई-नई सूचनाएं और नये-नये अनुभव अर्जित करते हैं।

2.10 मूल्यांकनप्रश्न

1 -कैरियर सूचना प्राप्त करने हेतु विभिन्न स्रोतो का वर्गीकरण कीजिये ?

2 -कैरियर सूचना एकत्रित करने में अभिविन्यास व कैरियर वार्ताओं का क्या महत्त्व है ?

3 -कैरियर कॉन्फ्रेन्स से आप क्या समझते है इसके क्या उद्देश्य होते है ?

4 - निरीक्षण एवं दौरे कैरियर काउंसलिंगमें किस प्रकार महत्वपूर्ण है ?

5 -शैक्षिक वार्ताओं का कैरियर सूचना में महत्व बताइये ?

6 -अनुकरणीय साक्षात्कार से क्या तात्पर्य है ?

7 -कैरियर कार्नर कैरियर परामर्श से किस प्रकार भिन्न है ?

2.11 संदर्भसूची

1- अग्रवाल जे.सी. (2008), एजुकेशनल, वोकेशनल गाइडेन्स एंड काउंसिलिंग, दोआबा हाउस, दिल्ली।

2- पाण्डे, के.पी, (2005), एजूकेशनल एंड वोकेशनल गाईडेन्स इन इंडिया, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।

3- ऑबराय एस.के., (2007), कैरियर निर्देशन एवं कैरियर सूचना, इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ।

4- पाण्डेय, कामता प्रसाद (2008), शैक्षिक तथा व्यवसायिक निर्देशन, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।

5- उपाध्याय, राधा बल्लभ, (2009), शैक्षिक तथा व्यवसायिक निर्देशन, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।

6- पसरिचा प्रेम, (1976), गाइडेन्स एंड काउंसिलिंगइन इंडियन एजुकेशन, एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली।

इकाई-3

विशेष आवश्यकताओं बालों बालकों के लिए परामर्श: अर्थ, क्षेत्र, महत्व तथा विधियाँ

इकाई की रूपरेखा

3.1 उद्देश्य
3.2 प्रस्तावना
3.3 निर्देशन एवं परामर्श
3.4 निर्देशन की परिभाषा तथा अर्थ
3.5 परामर्श
3.6 निर्देशन एवं परामर्श के विषय क्षेत्र
3.7 परामर्श का महत्व
3.8 निर्देशन एवं परामर्श की तकनीक
3.9 परामर्श के उपागम
3.10 सारांश
3.11 बोध प्रश्न
3.12 गतिविधियां
3.13 संदर्भ ग्रंथ

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात्, आप निम्नलिखित को बताने योग्य हो सकेंगे।

- परामर्श की परिभाषा को समझ सकेंगे।
- परामर्श के अर्थ की व्याख्या कर सकेंगे।
- परामर्श के विभिन्न प्रकारों में तुलना कर सकेंगे।
- परामर्श के प्रक्रिया को स्पष्ट कर सकेंगे।
- निर्देशात्मक परामर्श को समझ सकेंगे।
- निर्देशात्मक एवं अनिर्देशात्मक परामर्श में उत्तर कर सकेंगे।
- संकलनात्मक परामर्श की व्याख्या कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

विशेष आवश्यकताओं वाले बालकों के समुचित विकास में परामर्श की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। परामर्श के द्वारा विशेष बालकों को समाज में सफलतापूर्वक जीवन व्यतीत करने के लिए सहायता प्रदान की जाती है। विशेष बालकों की समस्याएं विभिन्न प्रकार की होती है क्योंकि इनकी आवश्यकताएॅं समान्य बालकों से अलग होती है। इनकी शारीरिक आवश्यकताएॅं, मनोवैज्ञानिक आवश्यकताएॅं आदि इन्हें विशेष बनाते है। अत: इन्हीं समस्याओं को दूर करने के लिए परामर्श के विभिन्न विधियों का प्रयोग भी किया जाता है। समस्याओं एवं आवश्यकताओं के आधार पर परामर्श प्रक्रिया को सम्पन्न करने के लिए अधिक योग्य एवं प्रशिक्षित व्यक्तियों की आवश्यकता होती है। इस इकाई में परामर्श एवं इसकी प्रक्रिया के विभिन्न पक्षों आदि पर विशेष बालकों के संदर्भ में विचार किया गया है।

3.2 निर्देशन एवं परामर्श

आधुनिक युग में काफी तेजी से बदलाव हो रहा है जिसका प्रभाव मानव के , सामाजिक राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक प्राकृतिक एवं मनोवैज्ञानिक क्षेत्रों पर स्पष्ट रूपसे दिखाई दे रहा है। इस परिवर्तन के परिणामस्वरूप नई-नई आवश्यकताएं उत्पन्न हो रही है। इन आवश्यकाताओं की पूर्ति के लिए मनुष्य को अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। निर्देशन एवं परामर्श द्वारा इन समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। निर्देश के द्वारा व्यक्ति के अन्दर विद्यमान क्षमता एवं योग्यताओं से अवगत कराया जाता है जिससे कि वह अपने आवश्यकताओं की पूर्ति समस्याओं का समाधान भली भांति प्रकार से कर सके।

यदि वर्तमान समय की बात की जाय तो हमारा जीवन पहले से अधिक जटिल हो गया है। हमें नित्य नये-नये समस्याओं का सामना करना पड़ता है। कुछ समस्याओं मनुष्य स्वयं समाधान कर लेता है, परन्तु कुछ समस्याओ के लिए अपने अग्रज, सहपाठी, मित्रों या अन्य लोगों से सलाह लेता हैं यह एक प्रकार की निर्देश एवं परामर्श की प्रक्रिया ही है। निर्देशन व्यक्ति के समस्या समाधान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। श्रीकृष्ण के निर्देशन एवं परामर्श के कारण ही पाण्डवों को महाभारत युद्ध में विजय मिली। चाणक्य के कुशल निर्देशन के फलस्वरूप चन्द्रगुप्त मौर्य साम्राज्य की स्थापना हो सकी। समाज में अनेक प्रकार को लोग पाये जाते है। कुछ लोग सामान्य व्यक्तियों से अलग होते है। इनकी समस्याएं समान्य व्यक्तियों से पृथक होती है। अत: निर्देशन सम्बन्धी आवश्यकताएं भी अलग होती है। भिन्नता का स्वरूप अनेक प्रकार का होता है जैसे शारीरिक रूप से अपंग, मानसिक रूप से मंद या प्रखर आदि प्रकार ये विशिष्ट व्यक्ति समाज के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सके इसके लिए इन्हें उचित निर्देशन एवं परामर्श की आवश्यकता होती है।

3.3 निर्देशन की परिभाषा

निर्देशन, मानव के शारीरिक, मानसिक, भावात्मक, और सामाजिक पहलुओं को स्पर्श करता है। यह व्यक्ति के समस्त व्यवहारों एवं क्रियाओं से सम्बन्धित है। यह व्यक्ति को उसके अन्दर छिपी क्षमताओं का उपयोग करके, उपलब्ध अवसरों से समुचित लाभ उठाने में सहायता प्रदान करता है। निर्देशन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति को समस्या समाधान के लिए सहायता दी जाती है, जिसके आधार पर वह स्वयं वांछित निर्णय ले सके। अत: निर्देशक किसी भी समस्या का समाधान स्वयं नही करता बल्कि यह व्यक्ति को उसकी क्षमता, योग्यता एवं व्यक्तित्व से सम्बन्धित शीलगुणों के बारे जानकारी प्रदान करके उसको इतना योग्य बना देता है कि वह अपनी समस्या का समाधान करने योग्य हो सके।

निर्देशन को स्पष्ट करन हेतु कुछ निम्नलिखित परिभाषाएं दी गई हैं -

जोन्स के अनुसार :

निर्देशन से तात्पर्य संकते करना, सूचित करना तथा सही रास्ता दिखाना है इसका अर्थ सहायता देने से अधिक है''

''To guide means to indicate to point out to show the way, it means more than to assist.** Jones

रूथ स्ट्रांग के अनुसार:

''निर्देशन का उद्देश्य बालक में विद्यमान सम्भावनाओं के रूप में अधिकतम विकास को बढ़ावा देना है।''

''The purpose of guidance to promote the maximum development of each child in term of possibilities available to him.''

जी0ई0 स्मिथ के अनुसार :

निर्देश प्रक्रिया में सेवाओं का समूह होता है जो व्यक्ति को विभिन्न क्षेत्रों में संतोषजनक समायोजन के लिए चयन, नियोजन और व्याख्या के लिए अपेक्षित कौशलों एवं ज्ञान को प्राप्त करने में सहायता प्रदान करती है।''

''The guidance process consists of a group of services to individual to assist them in securing the knowledge and skills needed in making adequate choices, plans and interpretation essential to satisfactory adjustment in varities of Area''G.E. Smith

कोठारी कमीश्न (1964-66) :

''निर्देशन किसी विद्यार्थी को शैक्षिक संस्थाओं, ने घरों में समायोजन के योग्य बनाना तथा उसके व्यक्तित्व के सभी पक्षों के विकास में सहायता करना है।''

''Guidance is a help to the student in making the best possible adjusment to the situations in the educational instiuttions and the home and at the same time facilitate the development of all aspects of personality ''

3.4 परामर्श

मनुष्य सभ्य समाज का प्राणी है। प्राचीन समय से, मानव पीड़ित व्यक्तियों की सहायता करते आया है। पहले धर्मगुरू, झाड़ फूक विशेषज्ञ, शिक्षित एवं प्रशिक्षित लोग चिन्तित मनोरोग ग्रस्त व्यक्तियों की सहायता करते थे। फ्रायड के मनोविश्लेषण सिद्धान्त के बाद इस क्षेत्र में क्रान्ति आयी है। आधुनिक युग में असामान्य मनोविज्ञान, मनोरोग शास्त्र, स्वास्थ्य मनोविज्ञान आदि निर्देशन एवं परामर्श के रूपों में मनोविज्ञान की एक शाखा के रूप में विकसित हुआ है।

कार्ल रोजर्स के अनुसार :

''परामर्श एक निश्चित रूप से निर्मित स्वीकृत सम्बन्ध है जो उपबोध्य को अपने को उस सीमा तक समझने में सहायता करता है, जिसमें वह अपने ज्ञान के प्रकाश में विद्यालय कार्य में अग्रसर हो सके''

''Effective counseling consists of definitely structured permisive relationship which allows the client to given an understanding to himself to a degree which enable him to take positive steps in the light of his new orientation" (Carl Rogers.)''

राबिन्सन के अनुसार :

''परामर्श शब्द दो व्यक्तियों के सम्पर्क की उन सभी स्थितियों का समावेश करता है, जिसमें एक व्यक्ति को उसमें स्वयं के एवं पर्यावरण के बीच अपेक्षाकृत प्रभावी समायोजन प्राप्त करने में सहायता की जाती है।

"...............The term conselling refers to all type of two persons situation in which one person is helped to adjust move effectively to himself and to his environment " (Robinson) उपरोक्त परिभाषाओंं की विवेचना करने पर परामर्श के बारे में निम्नलिखित तथ्य स्पष्ट होते है-

1. ''परामर्श दो व्यक्तियों के मध्य होता है-एक जिसे सहायता की आवश्यकता होती है और दूसरा प्रशिक्षित व्यक्ति जो पहले व्यक्ति की सहायता है।
2. परामर्श का स्वरूप विकासात्मक, निरोधात्मक तथा उपचारात्मक होता है।
3. परामर्श में परामर्शी (Client) और परामर्शदाता में सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध होता है।
4. परामर्श प्रक्रिया में परामर्शदाता मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के आधार पर परामर्श देता है।
5. परामर्श का मुख्य उद्देश्य भविष्य की समस्याओं का बचाव एवं समाधान हेतु व्यक्ति को समर्थ बनाना होता है।
6. परामर्श की सहायता से प्रार्थी न केवल आत्मनिर्भर बनता है बल्कि साथ ही साथ उत्तरदायित्व की भावना का भी विकास होता है।

3.5 निर्देशन एवं परामर्श के विषय क्षेत्र

निर्देशन का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक एवं बहुपक्षीय है। निर्देशन व्यक्ति के जीवन से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जुडा है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन क्षेत्र में किसी न किसी प्रकार की समस्या उत्पन्न होना स्वभाविक है। इन समस्याओं का समाधान किये बिना वह प्रगति नही कर सकता है। जीवन से सम्बन्धित प्राय: प्रत्येक क्षेत्र में उत्पन्न होने वाली समस्याओं का समाधान करने की योग्यता का विकास करने में निर्देशन एवं परामर्श सहायक होता है। वर्तमान समय में निर्देशन एवं परामर्श शिक्षा प्रणाली का अभिन्न अंग है। इसकी भूमिका का भी विस्तार हो गया है। परामर्श मुख्य रूप से तीन श्रेणियों में विभाजित किया जाता है।

1. शैक्षिक परामर्श (Educational Counselling)
2. व्यावसायिक परामर्श (Vocational Counselling)
3. व्यक्तिगत परामर्श (Personal Counselling)

3.6.1 शैक्षिक परामर्श (Educational Counselling) :

शैक्षिक परामर्श, परामर्श का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रकार है। वर्तमान समय में शिक्षा के क्षेत्र में अनेक क्षेत्रों एवं विशिष्टताओं का विकास हुआ है, जिसके फलस्वरूप विशेष विद्यार्थियों को विषय चयन करने में समस्या प्रकट होती है। अनेक बार निर्देशन के अभाव में तथा गलत परामर्श के कारण विशेष विद्यार्थी सफलता से वंचित रह जाता है। ब्रुअर ने अपनी परिभाषा में शैक्षिक परामर्श को अपने विचारों द्वारा स्पष्ट किया है।

''छात्रों पर अध्ययन कैसे किया जाय, अधिगम के सामान्य उपकरणों का प्रयोग, विद्यालयी जीवनकी अन्य क्रियाओ से समायोजन विद्यालय में नियमित रूप से उपस्थित रहना तथा कक्षा में मिले कार्यो को पूरा करना, साक्षात्कार एवं लेखन, रचना, सीखना, परीक्षा में बैठना, पुस्तकालयों का प्रयोग करना तथा अपने जीवन में आने वाले चौराहों पर महत्वपूर्ण शैक्षिक निर्णय ले सकना।''

रूथ स्ट्रांग के अनुसार शैक्षिक परामर्श :

1. पाठयक्रम सम्बन्धी चयन करने में।
2. आगे की शिक्षा के बारे में निर्णय लेने।
3. श्रेणी सुधार के लिए आवश्यक सहयोग प्रदान करना है।

3.6.2 व्यावसायिक परामर्श (Vocational Counselling) :

व्यावसायिक परामर्श विशेष बालकों के व्यवसाय के चुनाव तथा उसके लिए तैयार होने उसमें लगने एवं उन्नति करने में सहायता प्रदान करता है। इसका सम्बन्ध मुख्य से व्यक्ति की व्यावसायिक समस्याओं से होता है, इसके माध्यम से व्यक्ति को यह जानकारी दी जाती है। वह स्वयं के बारे में समझे साथ ही व्यवसाय जगत के यथार्थ विषय में अपनी अवधारणा परख सके तथा अपने एवं समाज के कल्याण के लिए अपनी योग्यतानुसार व्यवसाय का चयन कर सके। व्यसायिक निर्देशन शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम प्रयोग 1 मई 1908 में फ्रैंक पारसन्स ने किया।

3.6.3 व्यक्तिगत परामर्श (Individual Counselling) :

व्यक्तिगत परामर्श का सम्बन्ध व्यक्ति के स्वास्थ्य संवेगात्मक एवं सामाजिक समायोजन से सम्बन्धित समास्याओं से हैं प्राय: अधिकांश समस्याएं उसके व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित होती है जिनके के लिए समुचित निर्देशन, शैक्षिक एवं व्यासवसायिक परामर्श के अन्तर्गत सम्भव नही हो पाता। स्वास्थ्य परिवार संवेग एवं सामाजिक सामंजस्य सम्बन्धी समस्याएं आदि व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवन को प्रभावित करती है। इस प्रकार की समस्याओं का समाधान करने के लिए व्यक्ति की सहायता की जाती है,वह व्यक्तिगत परामर्श कहलाती है।

परामर्श **के इस क्षेत्र के अन्तर्गत :**

1. विद्यालय के परिवेश में आने समस्याएं
2. व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित अन्तर्द्वद
3. पारिवारिक समायोजन, वैवाहिक समायोजन, स्वास्थ्य समायोजन आदि।

3.6 परामर्श का महत्व

परामर्श एक बहुआयामी सम्प्रत्यय है। यह समस्या के विभिन्न क्षेत्रों से जुड़ा होता है। यह एक ऐसी विशिष्ट सेवा जिसके द्वारा व्यक्ति सहयोगात्मक प्रवृत्ति से दूसरों की समस्याओं के समाधान में सहभागी बनकर उसका निराकरण करने में योगदान देता है।

1. परामर्श व्यक्ति के व्यक्तित्व के समस्त आयामों जैसे शारीरिक मानिसिक सामाजिक, नैतिक एवं शौक्षिक समस्याओं के समाधान हेतु उचित पृष्ठभूमि प्रदान करता है।
2. जटिल परिस्थितियों में व्यक्ति किस प्रकार सहज एवं समायोजित रह सके, इसके लिए सहायता प्रदान करता है।
3. परामर्श व्यक्ति एवं समाज दोनों के कल्याण पर बल देता है।
4. परामर्श, मानवीय क्षमता का समुचित उपयोग एवं उसके संरक्षण में सहायता करताहै।
5. उपयुक्त अवसरों का चयन करने से ही व्यक्ति का विकास सम्भव और उपयुक्त अवसरों के चयन करने में परामर्श की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।
6. परामर्श की मदद से केवल व्यक्ति का होनी बल्कि समाज का विकास होता है।
7. विद्यार्थियों को रोजगार के चयन, पाठ्क्रमों का चयन तथा रूचि अभिक्षमता के अनुकूलन अध्ययन हेतु उचित दिशा दिखाने में भी परामर्श महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

3.7 निर्देशन एवं परामर्श की तकनीक

निर्देशन एवं परामर्श का मुख्य उद्देश्य समस्याग्रस्त व्यक्ति के समस्याओं का समाधान एवं उसके सर्वोत्तम विकास के लिए सहयोग प्रदान होता है। निर्देशन एवं परामर्श कार्यक्रम विभिन्न परामर्श सेवाएं एवं विभिन्न निर्देशन, कर्मियों को द्वारा प्रदान की जाती है। परामर्श प्रदत व्यक्ति के व्यक्तिगत विभिन्नताओं का ध्यान रखना चाहिए। निर्देशन एवं परामर्श की प्रविधि चयन करते समय

1- व्यक्ति की लिंग, आयु , शैक्षिक स्तर क्षमता आदि का ध्यान रखना चाहिए।

2- संसाधन की उपलब्धता एवं मितव्ययिता आदि का ध्यान रखना चाहिए।

समस्याएं अनेक प्रकार की होती है। कुछ समस्याएं सामान्य तो कुछ गम्भीर होती है। अत इसके समाधान के लिए विभिन्न परामर्श की परिस्थितियों को विकसित करने की आवश्यकता होती है। इन सन्दर्भों को ध्यान में रखकर परामर्श के क्षेत्र में तीन प्रविधियाँ प्रयुक्त होती है।

1. व्यक्तिगत परामर्शन प्रविधि (Individual cousellling Techniques)
2. समूह परामर्श प्रविधि (Group Counselling Technique)
3. उपचारात्मक उपागम (Clinical Approach)

3.7.1 व्यक्ति परामर्शन प्रविधि

इस प्रकार का परामर्शन वास्तव में एक प्रकार का अधिगम प्रक्रिया है, जिसमें व्यक्ति स्वयं अपने बारे में अपने लक्ष्यों के बारे, लक्ष्य प्राप्त करने की विधियों एवं आने वाली समस्याओं के समाधान के उपायों के विषय में अधिगम करता है। यह प्रक्रिया मूलत: एक व्यक्ति और परामर्शदाता के मध्य वार्ता के माध्यम से कार्य करती है। प्रारम्भिक परामर्शन साक्षात्कार प्रक्रिया हेतु प्रमुख सोपानों का वर्णन निम्नलिखित है :-

1. **परामर्शन वार्ता की तैयारी और शुरूआत :** परामर्श की शुरूआत से पहले विशेष आवश्यकता वाले परामर्शी बालक को वार्ता के क्षेत्र, उनकी अपनी समस्या जिसके लिए सहयोग की आवश्यकता है, के बारे स्पष्ट बोध होना चाहिए। परामर्शन आरम्भ करने से पूर्व व्यक्ति के बारे में परीक्षणों एवं गोपनियों अथवा अन्य श्रोतों से प्राप्त सभी प्रकार की आवश्यक सूचनाएं उपलब्ध होनी चाहिए।

2. **लक्ष्यों की स्थापना :** साक्षात्कार वार्ता के आरम्भ में ही परामर्शदाता और परामर्शी उद्देश्यों का निर्धारण करते हैं जिनकी प्राप्ति के लिए प्रयास किया जाता है। परामर्शी के लक्ष्य प्राय: अस्पष्ट होते है जिसे परामर्शदाता द्वारा वास्तविकतापूर्ण रूप से प्रदान किया जाता है।

3. **परामर्शदाता** परामर्शी **के मध्य सम्बन्ध विकास :** इस स्तर पर प्रार्थी व परामर्शदाता के भावनात्मक संबंध मजबूत होते है। परामर्शदाता एवं प्रार्थी के बीच विश्वास व आदर के भाव का विकास होता है। इसमें परामर्शदाता, प्रार्थी को विश्वास दिलाता है कि वह उसके समस्या समाधान के लिए समर्पित है।

4- प्रार्थी **को वार्ता के लिए प्रोत्साहित करना :** कुछ प्रार्थी अपने समस्याओं के बारे

में बाच चीत करने में शर्माते है तथा झिझक महसूस करते हैं, तब प्रार्थी को उसकी समस्या से जुड़ी भावनाओं की अभिव्यक्ति में सहायता प्रदान की जाती है और अपनी अनुभूति अभिव्यक्त करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

5. **वार्ता का समापन :** इसमें प्रार्थी की भावनाओं का उचित मूल्यांकन भी किया जाता है। परामर्शदाता प्रार्थी को इस तरह सहायता करता है जिससे वह अपनी भावनाओं के बारे में उचित दृष्टिकोण ला सके। विशेष आवश्यकता वाले प्रार्थी में बोध का विकास किया जाता है।

अधिकतर परामर्शदाता एवं मनोचिकित्सक यह मानते है कि प्रार्थी को स्वयं के प्रति एवं आस-पास के वातावरण के प्रति सूझ का विकास करके अपने-आप की सहायता करनी चाहिए।

6. **अनुवर्तन योजना :** परामर्श प्रक्रिया कितना सफल रहा इसका निर्धारण इस सोपान से होता है तथा इसमें यह देखा जाता है कि छात्र स्वयं को अपने आस-पास के वास्तविकताओं के साथ समायोजित कर पाया हे या कि नही। यदि वह ऐसा नहीं कर पाता। इसका अर्थ यह है कि परामर्श द्वारा बहुत लाभान्वित नही हो सका। वही दूसरी ओर यदि वह ऐसा करने मे सफल होता है तब इसका तात्पर्य परामर्श सफल रहा।

3.7.2 समूह परामर्श :

आधुनिक मनोविज्ञान यह स्वीकार करता है कि यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति अद्वितीय इकाई होता है जिसका समरूप कोई भी दूसरा व्यक्ति नही हो सकता है किन्तु प्रत्येक समूह के अन्दर सभी व्यक्तियों में कुछ न कुछ समानता भी होती है। इसमें प्रत्येक छात्र अपने अपने ग्रुप में रहकर एक दूसरे से अन्त: क्रिया करते हुए अपने भावनाओं, अभिवृत्तियों एवं मूल्यों को व्यक्त करता है। समूह के सदस्य एक दूसरे की समस्या से अवगत होकर एक दूसरे को सहयोग देते है। आपस में मित्रता की भावना बढ़ती है जिससे उनके आन्तरिक दबाव और तनाव में कमी आ जाती है। समूह परामर्श में दो या अधिक लोग प्रशिक्षित परामर्शदाता के सहयोग से कार्य करते है तथा समूह के अन्य सदस्यों के समस्याओं से सम्बन्धित विचारो को सुनकर अपने समस्याओं के प्रति सही दृष्टिकोण एवं सूझ उत्पन्न करते है।

समूह परामर्श की प्रक्रिया :

समूह परामर्श के लिए निम्नलिखित प्रक्रिया का अनुसरण किया जाता है।

1. **सदस्यो के उद्देश्यो की पहचान :** समूह परामर्श कार्यक्रम शुरू करने से पहले सदस्यों के व्यक्तिगत उद्देश्यों की पहचान की जाती है इन्ही उद्देश्यों को ध्यान में रखकर समूह का निर्माण किया जाता है। इसमें यह भी ज्ञात किया जाता है कि किन सदस्यों को समूह निर्देशन एवं परामर्श के उपरान्त व्यक्तिगत परामर्शन की भी आवश्यकता होगी।

2. **समूह का गठन :** समूह का गठन करते समय निम्नलिखित बातों पर ध्यान दिया जाता है।

अ- सदस्यों का चयन : समूह में सभी सदस्यों का लक्ष्य समान हो तथा वे समजातीय (Homogemous) हो अर्थात सभी आयु व परिपक्वता दृष्टि से लगभग समान हो सदस्यों के चयन करने से पहले उनका व्यक्तिगत साक्षात्कार होना चाहिए। इसके द्वारा यह पता लग सके कि बहुत आक्रमक या बहुत शर्मिला बालक समूह का सदस्य न बन जाये बहुत करीबी, मित्र या रिश्तेदार इसमें शामिल न हो।

ब-सदस्य की संख्या : समूह का आकार सामान्यत: पांच का छ: सदस्यों तक ही सीमित रखना चाहिए। समूह का छोटा आकार परामर्शन के लिए अधिक उपयुक्त होता है क्योंकि सदस्या अधिक स्वतन्त्र एवं सक्रिय रूप से सामूहिक वार्ता में भाग लेते है।

स-सत्र (Session) :बच्चों के 30 मिनट से जयादा समय का सत्र उपयोगी नही होता क्योंकि वे जल्दी ऊबने लगते है। वयस्कों के लिए एक या डेढ़ घण्टे का सत्र हो सकता है। कम से कम 10 सत्र समूह परामर्श कार्यक्रम पूरा करने के लिए आवश्यक होता है।

3. **वार्ता आरम्भ करना :** परामर्शदाता सभी सदस्यों को उसकी भूमिका एवं उनके कार्यो के बारे में बताता है। सदस्यों को एक-दूसरे की समस्याओं से अवगत कराता है। प्रार्थी सदस्यों को यह बतलाता है कि किस प्रकार वे एक-दूसरे की समस्याओं से अवगत होते हैं। प्रार्थी सदस्यों को यह बतलाता है कि किस प्रकार वे एक दूसरे के समस्या समाधान के लिए उपयोगी हो सकते है। परामर्शदाता समूह को एक दूसरे को समझने एवं स्वयं को तथा अन्य सदस्यों की समस्या को दूर करने में सहायता करने के लिए प्रोत्साहित करता है। सभी सदस्य अपने विचारों, भावों को स्वतन्त्र होकर व्यक्त करते है, उसमें किसी भी प्रकार का संकोच या झिझक नही होता है। समूह परामर्श में गोपनीयता रखना आवश्यक है सभी सदस्यों में आपसी विश्वास होना आवश्यक होता है तथा सभी सदस्य आपसी बातचीत को पूरी तरह से गोपनीय ही रखते है।
4. **निर्देशन समूह की सदस्यता का समापन :** यह निर्धारित करना कठिन हो जाता है कि समूह की सदस्यता का समापन किस समय किया जाय। यदि अपने लक्ष्यों को प्राप्त कर चुके सदस्यों को समूह छोड़कर जाने दिया जाये तो अन्य सदस्यों मे से अनेक के उपयोगी एवं सहायक सम्बन्ध समाप्त हो जायेंगे। यदि उन्हें रोके रहा जाये तो उनके ऊपर उबाऊ दबाव उत्पन्न होता है। कुछ परामर्शदाताओं की मान्यता है कि ऐसी परिस्थिति आने पर उन सदस्यों का समूह से अलग किया जाना चाहिए जिनके लिए समूह की उपयोगिता समाप्त हो चुकी है।
5. **मूल्यांकन :** निर्देशन एवं परामर्श की सफलता का मूल्यांकन सदस्यों ने वास्तविक जीवन में प्राप्य उद्दश्यों को कितना प्राप्त किया इसके आधार पर किया जा सकता है।

3.7.3 चिकित्साकीय परामर्शन (Clinical Counselling) :

इस उपागम के अन्तर्गत परामर्शदाताओं द्वारा अपनायी जानेवाली प्रक्रिया मनोचिकित्सकीय प्रणाली के समान है। परामर्शदाता व्यक्ति की समस्याओं का सर्वप्रथम निदान करता है और उसके पश्चात् समस्या के निवारण के लिए चिकित्सकीय उपचार करता है। प्रमुख समस्याएं जिनके समाधान के लिए नैदानिक परामर्श विधि को अपनाया जाता है, निम्नलिखित हैं-

1. **अधिगम सम्बन्धी समस्याएं जेसे पढ़ने में कठिनाई,** भाषागत **दोष, गणितीय पाठ्क्रमों के क्षेत्र में विशेष समस्या आदि।** ऐसी समस्याओं को दूर करने के लिए पहले बच्चे की कठिनाई के कारण को पता लगाया जाता है, उसके पश्चात् उपचारात्मक शिक्षण द्वारा उनकी समस्या को दूर करने का प्रयास किया जाता है पुरानी आदतों को दूर करने एवं उपयुक्त व्यवहार प्रणालियों को स्थापित करने लिए व्यवहार परिममार्जन (Bihavour Modification) जैसी विधियों को प्रयुक्त किया जाता है।
2. **कुछ बच्चों में व्यावहरगत दोष पाये जाते हैं उनकी दोषयुक्त व्यवहार को दूर करना आवश्यक हो जाता है।** पुरानी आदतों को दूर करने एवं उपयुक्त व्यवहार प्रणालियों के

स्थापित करने लिए व्यवहार परिमार्जन (Behaviour modification) जैसी विधियों को प्रयुक्त किया जाता है।

3. कई बार विशिष्ट क्षमता या योग्यता वाले बच्चों को भी स्वीकार किया जाता है। नैदानिक परामर्श को अपनाकर कार्य करते समय व्यक्ति के व्यापक अध्ययन एवं निदान पर बल दिया जाता है। इनके लिए व्यवहार परिमार्जन एवं निश्चयात्मक प्रशिक्षण (Assertive training) जैसी प्रविधियों का उपयोग किया जाता है।

नैदानिक परामर्श की प्रक्रिया :

1. व्यक्ति के समायोजन सम्बन्धी समस्याओं का पहचान करना।
2. प्रार्थी की समस्या एवं सम्बन्धित पृष्ठभूमि को जानने के लिए उससे सम्बन्धित सूचनाओं को एकत्र करना जिससे प्रार्थी का व्यक्ति इतिहास (Case Hisotry) तैयार किया जा सके।
3. प्राप्त आकड़ो की व्याख्या एवं मूल्यांकन करना जिससे प्रार्थी की समस्या को गहराई से जानकर वांछित कार्यवाही किया जा सके।

4- प्रार्थी की समस्या के निदान के लिए वांछित चिकित्सा (Theoraphy) को सुझाना।

5. प्रार्थी के उपचार के रूप में चिकित्सा को लागू करना। यह चिकित्सा प्रार्थी की आवश्यकता व स्थिति के अनुसार होनी चाहिए।
6. उपचार के बाद अनुवर्ती कार्य करते रहना जिससे किये गये चिकित्सा का प्रभाव अच्छा हो।

3.8 परामर्श के उपागम

स्कूल में पढ़ने वाले या विशिष्ट बालकों के सामने सबसे बड़ी समस्या यह रहती है कि उनमे सामाजिक विकास अच्छे ढंग से नही हो पाता है। वे भी समाज में अपने अन्य साथियों की तरह स्थान पाना चाहते है। इस उद्देश्य की प्राप्ति तभी हो सकती है जब वे स्कूल की गतिविधियों में इतना अधिक भाग ले जितना की वे अपनी असमर्थता के बावजूद ले सकते है। इसलिए यह उचित होगा कि वे अपनी शिक्षा नियमित कक्षाओं में प्राप्त करें।

विशिष्ट आवश्यकता वाले बालकों को समाज के लोग दया की दृष्टि से देखते है। समाज इन बच्चों को असहायक एवं निकम्पा समझता है। जबकि विशिष्ट आवश्यकताओं वाले बच्चों को उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षा एवं निर्देशन सुविधा दी जाये तो वे भी सामान्य जीवन व्य तीत कर सकते है।

विशिष्ट बच्चों की समस्याओं एवं आवश्यकताओ में काफी विभिन्ता पायी जाती है। परामर्शदाता समस्याओं के समाधान के विभिन्न तकनीकों का प्रयोग करता है साथ ही एक ही प्रकार की तकनीकी का प्रयोग सभी प्रकार के विद्यार्थी पर नही किया जा सकता है। साधारणतया परामर्शदाता प्रार्थी की आवश्यकतानुसार विभिन्न प्रकार की पद्धति को बनाता है। इस क्षेत्र में तीन प्रकार के उपागम मुख्य रूप से होते है।

3.8.1 निर्देशात्मक परामर्श (Directive Counselling) :

निर्देशात्मक परामर्श को परामर्शदाता केन्द्रित परामर्श भी कहा जात है क्योंकि इसमें परामर्शदाता की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण होती है। इस उपागम में परामर्शदाता विशिष्ट बालकों के समस्याओं के बारे में आकड़े इकट्ठा करता है और आकड़ो एवं सूचनाओं की ओर निर्देशित करता है। निर्देशात्मक परामर्श की शुरूआत सबसे पहले इ0जी0 विलियम्सन (E.G. Williamson) ने किया है।

निर्देशात्मक परामर्श के सोपान :

निर्देशात्मक, परामर्श की प्रक्रिया निम्नलितख 6 सोपानों में सम्पन्न होती है।

1. **विश्लेषण (Analysis) :**प्रथम सोपान परामर्शदाता विशेष आवश्यकता वाले बालकों को एवं उसकी समस्या का गहन अध्ययन करता है। इसके लिए बालक के बारे में विभिन्न प्रकार की सूचनाओं एवं आकड़ो को इकट्ठा करता है, सूचनाओं को इकट्ठा करने के लिए संचित अभिलेख, साक्षात्कार, एवं मनोवैज्ञानिक परीक्षणों आदि का उपयोग करता है।
2. **संश्लेषण (Synthesis) :** इसमें प्रार्थी के लिए प्राप्त आकड़े को परामर्शदाता संगठित, व्यवस्थित, एवं वर्गीकरण करता है। इन आकड़ो के आधार पर बालक के गुणों, कमजोरियों एवं समस्याओ की जानकारी प्राप्त होती है।
3. **पहचान या निदान (Diagnosis) :**विश्लेशण एवं संश्लेषण सोपान में बालक की जो समस्याएं सामने उभर आयी है अब इस सोपान में उसके कारणों एवं उसकी प्रकृति के बारे में पता लगाया जाता है।
4. **पूर्वानुमान (Prognosis) :** इस सोपान के अन्तर्गत प्रार्थी की समस्या आगे चलकर क्या स्वरूप लेगी या उसमें किस तरह का विकास होगा, इस बारे में भविष्यवाणी किया जाता है।
5. **परामर्श या उपचार (Counselling or Treatment) :** इस सोपान में परामर्शदाता, प्रार्थी को समस्या के समाधान के लिए विभिन्न प्रकार की जानकारी एवं सुझाव दोत हैं प्रार्थी के मन में आने वाली समस्या से सम्बन्धित विभिन्न प्रश्नों एवं जिज्ञासा को शान्त करता है।
6. **अनुवर्तन (Follow Up) :** इस सोपान में एक तरह से परामर्श सेवा का मूल्यांकन किया जाता है। परामर्श दाता यह पता लगाता है कि प्रार्थी दिये गये सुझावों का पालन कर रहा है या नही, और उसमें क्या-क्या परिवर्तन हो रहा है।

निर्देशात्मक परामर्श की विशेषताएं :

निर्देशात्मक परामर्श की विशेषताएं निम्नलिखित है-

1. निर्देशात्मक परामर्श में समस्या पर विशेष ध्यान दिया जाता हैं
2. परामर्शदाता विभिन्न तकनीको की सहातया से समाधान करने का प्रयास करता है।
3. इसमें परामर्शदाता प्रार्थी की समस्या को समझता है व्याख्या करता है तथा उपयुक्त निदान करता है।
4. इस प्रक्रिया में परामर्शदाता केन्द्रित होती है अर्थात पराशर्मदाता के पूर्ण नियन्त्रण में होता है।

5. परामर्शदाता अपनी इच्छानुसार निर्णय लेने के लिए प्रार्थी को प्रोत्साहित करता है।

3.8.2 अनिर्देशात्मक परामर्श (Non-Directive Councilling) :

अनिर्देशात्मक परामर्श की शुरूआत कार्ल रोजर्स ने की है। अनिर्देशात्मक परामर्श का केन्द्र बिन्दु प्रार्थी होता है। इसमें परामर्शदाता प्रार्थी को समस्या के विभिन्न पहलुओं को समझने में मदद करता है तथा उसके हल के लिए प्रेरित करता है। प्रार्थी को अपनी भावनाओं, दृष्टिकोणों एवं विचारों आदि पर खुल कर बात करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता हैं इस प्रकार परामर्शदाता ऐसा वातावरण उत्पन्न करता है जिसमें विशेष बालक प्रार्थी को अपनी समस्या को समझने में एवं उसका मूल्यांकन करने के लिए आवश्यक सूझ (Insight) उत्पन्न हो सके। अनिर्देशात्मक परामर्श में ऐसे प्रश्नों को पूछा जाता है जिससे प्रार्थी खुले मन की भावनाओं को प्रक्षेपीकरण कर दे।

अनिर्देशात्मक परामर्श के सोपान (Steps in Non-Directive Counselling) :

अनिर्देशात्मक परामर्श के सोपान अग्रलिखित है।

1. **वार्तालाप (Conversation):** परामर्श प्रक्रिया में परामर्शदाता एवं प्रार्थी के बीच सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध होना चाहिए और साथ ही प्रार्थी का परामर्शदाता पर विश्वास होना चाहिए। परामर्शदाता एवं प्रार्थी के मध्य रिश्ता अच्छा हो। इसके लिए दोनों के बीच विभिन्न विषयों पर अनौपचारिक बातचीत होती है। इससे प्रार्थी के मन का संकोच एवं भय के भाव दूर हो जाते है और दोनों एक दूसरे से नि:संकोच स्पष्ट बातचीत करना आरम्भ कर देते है।
2. **समस्या की पहचान (Identification of the problem) :** इस सोपान में परामर्शदाता प्रार्थी की समझ को जानने का प्रयास करता है। इसके लिए वह प्रार्थी के परिवार, मित्र, पड़ोसियों एवं शिक्षकों से जानकारी एकत्र करता है।
3. **संवेगात्मक अभिव्यक्ति (Emotional release) :** परामर्शदाता, प्रार्थी के सामने ऐसी परिस्थिति उत्पन्न करता है जिससे प्रार्थी अपने मन की भावनाओं, व्यथाओं एवं संवेगो को अभिव्यक्ति कर देता हैं। इससे प्रार्थी का मानसिक तनाव दूर हो जाता है और परामर्शदाता के विचारों को स्वीकार करने के लिए तत्पर हो जाता है।
4. **सुझावों पर चर्चा (Discussion on suggestion) :** परामर्श समय-समय पर प्रार्थी को समस्या समाधान के लिए सुझाव देता है और प्रार्थी की प्रतिक्रिया जानने के लिए चर्चा करता है प्रार्थी दिये गये सुझावों पर अपने विचार प्रकट करता है सुझावों को मानना या न मानना पूरी तरह से प्रार्थी पर ही निर्भर रहता है।
5. **योजना का निरूपण (Project Formulation) :** परामर्शदता प्रार्थी के सम्बन्ध में जो भी सूचनाएं प्राप्त की उसके आधार पर प्रार्थी को समस्या के समाधान के लिए एक योजना बनाने का सुझाव एवं अवसर देता है प्रार्थी योजना बनाता है और उसके आधार पर समस्या के समाधान लिए प्रयास करता है। प्रार्थी को जहाँ भी आवश्यकता महसूस होती है वहां परामर्शदाता उसकी सहायता करता है।

6. **योजना का क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन (Project Implemetation and Evaluation) :** प्रार्थी अपनी समस्याको दूर करने के लिए जो याजना बनाता है उसको लागू करता है और सफलता का अनुभव करता है। परामर्शदाता उससे समय-समय पर मिलता रहता है और समस्या का समाधान कहाँ तक हुआ इसकी जानकारी लेता रहता है।

अनिर्देशात्मक परामर्श की विशेषताएँ (Characteristics of Non Directive Counselling) :

1. इसमें बालक की व्यक्तिगत स्वतन्त्रता को स्वीकार किय जाता है तथा उसमें किसी प्रकार का प्रत्यक्ष हस्तक्षेप नही किया जाता है।
2. प्रार्थी को अपनी समस्या का समाधान करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता हो। इससे प्रार्थी के अन्दर स्वयं निर्णय लेने की क्षमता का विकास होता है।
3. परामर्शदाता एवं प्रार्थी के मध्य सौहार्द्ध एवं विश्वासपूर्ण सम्बन्ध होता है। प्रार्थी अपनी समस्या पर खुलकर विचार विमर्श करता है।
4. परामर्शदाता प्रार्थी की समस्या को समझकर उसके रूचि एवं क्षमता के अनुसार, समाधान के लिए सुझाव देता है।
5. इस प्रकार के परामर्श में किसी प्रकार के मानसिक रोगों का उपचार नही किया जाता है।
6. कम बोलने एवं भाषा सम्बन्धी समस्याओं वाले बालकों के लिए अधिक उपयोगी होता है।

3.8.3 संकलनात्मक परामर्श (The elective Counselling) :

संकलनात्मक परामर्श, निर्देशात्मक एवं अनिवेशात्मक परामर्श का सम्बन्धित रूप से इसमें परामर्शदाता, प्रार्थी की आवश्यकतानुसार निर्देशात्मक एवं आनर्देशात्मक परामर्श का उपयोग करता है। इस परामर्श के प्रवर्तक एफ0सी0थोर्न (F.C. Thorne) है।

थोर्न के अनुसार :

संकलनात्मक परामर्श सबसे अधिक उपयोगी एवं संगत उपागम हैं उनके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे से भिन्न होता है। उनके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे से भिन्न होता है एवं उनके व्यक्ति में भी बहुत भिन्ताएं होती है। किसी एक सिद्धान्त के द्वारा सभी घटनाओं को सम्मिलित नही किया जा सकता है। इसी प्रकार प्रत्येक व्यक्ति की समस्या अलग-अलग होती है, इसलिए कोई एक उपागम सभी के लिए उपयोगी नही हो सकता है इस प्रकार के परामर्श में परामर्शदाता को पुन: विश्वास (Reassurance) केवल सूचना देना (Giving infomation) व्यक्ति इतिहास (Case History) परीक्षण (Testing) इत्यदि विधियों के प्रयोग में निपुण होना चाहिए।

संकलनात्मक परामर्श के सोपान :

1. इसमें सबसे पहले बालक का साक्षात्कार लेना चाहिए।
2. परामर्शदाता को ऐसी परिस्थिति का निर्माण करना चाहिए। जिससे प्रार्थी परामर्श
   कों समझ सके।

3. बालक को अपने-आप को समझने के लिए बढ़ावा देना।

4. प्रार्थी को उससे सम्बन्धित विभिन्न प्रकार की सूचनाएं जैसे शैक्षिक सम्बन्धी, व्यावसायिक सम्बन्धी, पारिवारिक सम्बन्धों को उपलब्ध कराना चाहिए।

5. प्रार्थी समस्या के दूर करने के लिए योजनाएं बनाता है और अपनी समस्या का समाधान के लिए प्रयास करता है।

6. प्रार्थी को आवयकतानुसार अनुवर्ती सेवा (Follow-up) देनी चाहिए।

3.9 सारांश

❖ परामर्श एक प्रक्रिया है, जिसमें प्रार्थी को समस्या के बारे में सोचने एवं उसके समाधान करने योग्य बनाने के लिए सहायता प्रदान करते है। प्रार्थी एवं परामर्शदाता समस्या पर विचार-विमर्ष करते हैं और समस्या को हल करते हैं।

❖ परामर्श की प्रायः तीन विधियाँ होती हैं-

1. व्यक्ति परामर्श प्रविधि
2. समूह परामर्श प्रविधि
3. उपचारात्मक प्रविधि

❖ परामर्श के निम्नलिखित तीन उपागम होते हैं-

➢ निर्देषात्मक परामर्श, परामर्शदाता के इर्द-गिर्द घूमता है। इसमें परामर्शदाता बहुत सक्रिय रहता है। वह प्रार्थी की भावनाओं एवं विचारों को अभिव्यक्त करने के लिए प्रोत्साहित करता है। परामर्शदाता प्रार्थी की समस्या का विष्लेशण करता है, निदान करता है तथा समस्या के उपचार के बारे में बताता है।

➢ अनिर्देषात्मक परामर्श को प्रार्थी केन्द्रित परामर्श भी कहते हैं। इसमें प्रार्थी को अपनी भावनाओं एवं दृष्टिकोणों को समझने के लिए प्रेरित किया जाता है। प्रार्थी को इस प्रकार प्रेरित किया जाता है कि वे अपने विचारों एवं अभिव्यक्तियों को धारा-प्रवाह विस्तार पूर्वक बोलें। इसमें प्रार्थी को अवसर दिया जाता है, जिससे प्रार्थी के अन्दर समस्या के प्रति सूझ विकसित हो और वह वास्तविक परिस्थितियों का सामना करने के लिए तैयार हो सके।

➢ समन्वित परामर्श, निर्देषात्मक एवं अनिर्देषात्मक दोनों का मिला-जुला एवं समन्वित रूप है।

3.10 बोध प्रश्न

1 परामर्श एवं निर्देशन में अन्तर को जानिए।

2 परामर्श कितने प्रकार का होता है।

3 समूह परामर्श प्रविधि पर चर्चा करें।

4 संकलनात्मक परामर्श क्या हैं? विस्तार से लिखें।

3.11 गतिविधियां

1. किसी समस्या में उलझे व्यक्ति को परामर्श प्रदान करने हेतु आप क्या करेंगे?
2. परामर्श की आवश्यकता हमें नित्य-प्रति के जीवन में क्यो पड़ती है?

3.12 संदर्भ ग्रंथ

1. **जयसवाल, एस. (2003).** शिक्षा *में* निर्देशन *एवं* परामर्श. आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर.
2. **त्रिपाठी, एस. & देब ,आर. (2007).** निर्देशन *एवं* परामर्श. वाराणसी : आदित्य बुक सेन्टर.
3. **ओबराय, एस. सी. (2009).** शैक्षिक *तथा व्यावसायिक* निर्देशन *एवं* परामर्श. मेरठ : इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस
4. **राय, अ. & अस्थाना, एम. (2009).** निर्देशन *एवं* परामर्श. नई दिल्ली : मोतीलाल बनारसीदास.
5. **मंगल, एस. के. (2009).** *एजूकेटिंग एक्सेप्सनल चिल्डेन*. नई दिल्ली : पी. एच. आई. लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड.
6. **क्रो .& क्रो. (1964).** निर्देशन *परिचय*. नई दिल्ली : यूरेषिया पब्लिशिंग हाउस.

इकाई - 4

माता - पिता और परामर्श

इकाई की संरचना

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 माता-पिता का अर्थ

4.3 माता-पिता के कार्य

4.4 माता-पिता की समस्याएं

4.5 माता-पिता के परामर्श की आवश्यकता एवं महत्व

4.6 माता-पिता के परामर्श की प्रक्रिया

4-7 बोध प्रश्न

4.8 संदर्भ ग्रंथ

4.1 प्रस्तावना

माता-पिता के सम्बंध के बाद माता-पिता के परामर्श की गहराई हेतु इसके स्वरूप को समझना भी आवश्यक है।

4.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के प"चात हम जान सकेंगे कि :

1- माता-पिता का अर्थ

2- माता-पिता के कार्य

3- माता-पिता की समस्याएं

4- माता-पिता समस्याओं के निराकरण बारे में जानकारी

5- माता-पिता के परामर्श की आवश्यकता एवं महत्व

6- माता-पिता के परामर्श की प्रक्रिया

4.2 माता-पिता का अर्थ

परिवार एक जैविक एवं सामाजिक इकाई है, जिसमें पति-पत्नी के मध्य संस्थायीकृत यौन-सम्बंध होते हैं। परिवार की विशेषता इसका जैविक एवं सामाजिक सम्बंध है। इसके सदस्य अन्य किसी समूह की अपेक्षा जनन की प्रक्रिया द्वारा एक-दूसरे से निकटवर्ती सम्बंधित होते हैं। यह यौन के तथ्य पर आधारित है जिसका महत्वपूर्ण कार्य बच्चों का जनन एवं पोशण हैं। इसमें माता-पिता एवं उनके बच्चे होते हैं।

4.3 माता-पिता के कार्य

(1) लैंगिक आवश्यकता की तुष्टि

(2) संतानोत्पत्ति तथा पालन-पोषण

(3) संतान के सभी दायित्वों की पूर्ण व्यवस्था करना

(4) संतान को आधुनिक समय की समस्याओं के समाधान करने योग्य बनाना

4.4 माता-पिता की समस्याएं

(1) तलाक की समस्या-

(2)व्यवसाय-चयन की समस्या-

(3) अस्थिरता की समस्या-

(4) माता-पिता के प्रभुत्व की समस्या-

(5) संतान की रुचि, क्षमता, योग्यता व दृष्टिकोण के अनुरूप व्यवसायिक संस्थाओं की समस्या-

(6) व्यक्तिगत स्वार्थ की भावना में वृद्धि-

(7) संतान की इच्छाओं, भावनाओं एवं संवेगों की अभिव्यक्ति को समझने की समस्या-

(8) संतान के जीवन-साथी के चयन की समस्या-

(9) संतान के लिए शिक्षण संस्थाओं के चयन तथा पाठ्यक्रम के चुनाव से सम्बधीं समस्या-

4.5 माता-पिता के परामर्श की आवश्यकता एवं महत्व

आज के आधुनिक जीवन की जटिलता अनेक कारण माता-पिता पर नए दायित्व आ गये हैं। आज उन्हें नये कौशलों तथा क्षमताओं की आवश्यकता है जो प्राचीन काल (पूर्व काल) के अपेक्षाकृत सरल समाज में अपेक्षित नहीं थे। जिन कौशलों और क्षमताओं या योग्यताओं की उन्हें आज आवश्यकता है, उनका सम्बंध उपलब्ध जानकारी पर काबू पाने और अपने अपनाए गए व्यवसायों में भी पर्याप्त जानकारी टूटने से है जो उनकी प्रगति के लिए आवश्यक होती है। माता-पिता में इन कौशलों तथा सक्षमताओं को विकसित करने के लिए समाज में नई क्षमता के साथ परामर्शदाताओं की आवश्यकता होती है। ताकि वे माता-पिता को समय के अनुसार परामर्श दे सके। अधिकांश माता-पिता को इसकी आवश्यकता कम पड़ती है। सामान्यत कुछ क्षेत्रा-विशेष में ही माता-पिता इस प्रक्रिया का सहारा लेते हैं। जिससे वे अपने जीवन में आने वाली जटिलताओं को सरल कर अपने पर आये नयें दायित्वों को पूर्ण कर सकें।

प्राचीन काल में जब समाज में जटिलतायें न के बराबर थी, तब यदि किसी स्थानीय परिवार में या माता-पिता को किसी भी प्रकार की समस्या होती थी तो माता-पिता / परिवार का सदस्य अपने मुखिया से परामर्श लेता था। इस प्रकार का परामर्श किसी प्रकार से प्रशिक्षण के बिना मिलता था। परन्तु आज की सामाजिक जटिलताओं को ध्यान में रखते हुए परामर्श का कार्य एक व्यावसायिक प्रशिक्षण की सहायता के बिना अपूर्ण सा लगता है। इसके लिए परिवार/माता-पिता/की आधुनिक समस्याओं समाज का ज्ञान कर उन्हें कैसे दूर करना है एक प्रशिक्षित परामर्शक के द्वारा ही सम्भव है।

मैथ्यूसन के मतानुसार आवश्यकता के चार मूलभूत क्षेत्र हैं जैसे-स्वयं को समझने की आवश्यकता, परिस्थिति की मांगों के अनुसार समायोजन करना, भावी दशाओं के लिए स्वयं को ढालना (तैयार करना) और स्वपूर्ति करना एवं वैयक्तिक क्षमताओं को विकसित करना। इसलिए कहा जा सकता है कि माता-पिता परामर्श की आवश्यकता निम्न लिखित कारणों से पडती है।

1. शिक्षा के प्रति जागरूकता बढ़ रही है। जनसंख्या में वृद्धि और सीमित रोजगार के अवसरों के कारण, शिक्षित बेरोजगारों की संख्या के वृद्धि हो रही है। शिक्षित बेरोजगारी से परेशान माता-पिता की सहायता परामर्श से दूर की जा सकती है। ताकि वे बच्चों की क्षमताओं के अनुकूल अपने बच्चों के रोजगार को कार्य की पहचान कर सकें।
2. जनसंख्या में तीव्र वृद्धि के कारण माता-पिता की गहन और व्यापक परामर्श की आवश्यकता है।
3. आज के बदलते परिवेश ने माता-पिता के लिए उनके बच्चों की प्रत्येक स्तर पर शिक्षा सम्बंधी गंभीर समस्याओं का सामना कर रहे हैं। इनकी समस्या के निराकरण के लिए परामर्शन की अत्यन्त आवश्यक है।
4. सामाजिक एवं पारिवारिक समस्याओं के चलते आज के माता-पिता में मानसिक रोग वृद्धि हो रही है। माता-पिता की इस प्रकार की समस्या को दूर करने के लिए भी माता-पिता को परामर्श की आवश्यकता पड़ती है।
5. समाज में हो रहे परिवर्तनों के कारण, परिवार में द्धंद बढते जा रहे हैं और माता-पिता तनावपूर्ण परिस्थितियों से गुजर रहे है, जिसके कारण उनमें कुठाएं बढ़ रही है। जिससे अपराध की भयंकर समस्याएं भी बढ़ रही है। इसके चलते भी माता-पिता को परामर्श की आवश्यकता होती है।
6. माता-पिता के रहने-सहने एवं कार्य करने में तेजी से बदलावा और जटिलताओं के कारण माता-पिता और बच्चों के बीच वैयक्तिक संपर्क कम हो गया है। इस प्रकार की समस्या से बच्चों में कुसमायोजन बढ़ा है तथा बच्चों को गलत आदतों को भी पनपने का मौका मिला है। माता-पिता की इस प्रकार की समस्या को दूर करने के लिए भी माता-पिता को परामर्श की आवश्यकता पड़ती है।
7. माताओं की परंपरागत छवि में परिवर्तन के कारण उनके सम्बंधों में कुठा होती है और ये कुठा तलाक एवं पृथक्करण को जन्म देती है। इस समस्या से माता-पिता का सम्बंध ही खत्म हो जाता है। जो कि परिवार को बनाये रखने के लिए अत्यन्त आवश्यक है। माता-पिता की इस प्रकार की समस्या को दूर करने के लिए भी परामर्श की आवश्यकता होती है।

4.6 सारांश

पहले माता-पिता परिवार के सभी सदस्यो की भलाई की बात सोचते थे। सदस्यों के बीच सहयोग, सहानुभूति और परस्पर प्रेम की भावना अधिक होती थी, लेकिन आज के माता-पिता के पास समय का अभाव है। यही कारण है कि माता-पिता में धीरे-धीरे तनाव बढ़ता जा रहा है। परिवार एक लना होकर, स्वतंत्र रूप से स्थापित होने लगे हैं। अपने सगे-सम्बंधियों से दूर होते जा रहे हैं। नातेदारी का बंधन ढीला पड़ता जा रहा है। साधारणतया उद्योगीकरण एवं नगरीकरण की प्रक्रिया से माता-पिता के दाम्पत्य जीवन पर पड़ भी रहा है। माता-पिता के परामर्श की प्रक्रिया स्वयं अपनी एवं संतान की समस्याओं पर केन्द्रित होती है, जिसमें माता-पिता एवं संतान के साथ विचार-विमर्श, वार्तालाप व सौहार्दपूर्ण तर्क वितर्क के आधार पर माता-पिता एवं संतान को इस योग्य बनाया जाता है कि वह अपनी समस्याओं के समाधान के लिए स्वयं निर्णय ले सकें। माता-पिता के परामर्श के लिए व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा का माता-पिता एवं संतान के पारस्परिक सम्बंध एवं भावनाओं को ध्यान में रखकर माता-पिता एवं संतान की समस्याओं का समाधान करने योग्य बनाना है।

4.7 बोध प्रश्न

1 माता-पिता परिवार को बनाये रखने के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इस कथन की व्याख्या अपने शब्दों में लिखे।

2 माता-पिता का अर्थ लिखिए।

3 माता-पिता के परामर्श की आवश्यकता एवं महत्व को स्पष्ट कीजिए।

4. माता-पिता की समस्याएं क्या हैं। स्पष्ट कीजिए।

5. माता-पिता के कार्य स्पष्ट कीजिए।

4.8 संदर्भ ग्रंथ

1- एन.आर.स्वरूप सक्सेना,शिखा चतुर्वेदी (2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक , मेरठ, आर.लाल बुक डिपो।

2- पाठक एवं त्यागी**,** शिक्षा के सिद्वान्त**,** आगरा**,** विनोद पुस्तक मंन्दिर।

3- रमन बिहारी लाल **(2007):** शिक्षा के दा”रनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार**,** मेरठ **,**रस्तोगी पब्लिकेशन ।

4- डां गिरीश पचौरी **(2007)** शिक्षा और समाज मेरठ**,** इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस।

5- डां राम शक्ल पाण्डेय **(2008)** उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक**,** आगरा**,**अग्रवाल पब्लिशिंग हाउस।

6- एन.आर.स्वरूप सक्सेना,डा के.पी. पाण्डेय, **(1993-94)** शिक्षा सिद्धान्त, मेरठ, आर.लाल. बुक डिपो।

7 डा0 सीताराम जायसवाल-शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा-2

8 डा0 आर0 ए0 शर्मा-वृतिक निर्देशन एवं रोजगार सूचना, आर0 लाल बुक डिपो, मेरठ-250001

9 डा0 आशा रावत - वृतिक निर्देशन एवं रोजगार सूचना, आर0 लाल बुक डिपो, मेरठ-250001

10 डा0 अमरनाथ राय-निर्देशन एवं परामर्शन, मधु अस्थाना (संप्रत्यय, क्षेत्र एवं उपागम) मोतीलाल बनारसी दास चौक, वाराणसी-221001

11 मधुसूदन त्रिपाठी -शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श, ओमेगा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली - 110002

12 डा0 जे0पी0 सिंह -प्रेंटिस-हॉल आफ इण्डिया प्राईवेट लिमिटेड नई दिल्ली - 110001

इकाई – 5

परिवार और परामर्श

इकाई की संरचना

5.0 उद्देश्य तथा लक्ष्य
5.1 प्रस्तावना
5.2 परिवार का अर्थ
5.3 परिवार की परिभाषा
5.4 परिवार का उद्विकास
5.5 परिवार का स्वरूप
5.6 परिवार की विशेषताएं
5.7 परिवार के कार्य
5.8 परिवार का विघटन
5.9 परिवार की समस्याएं
5.10 पारिवारिक परामर्श का अर्थ
5.11 परिवार के परामर्श की आवश्यकता एवं महत्व
5.12 परिवार एवं परामर्श प्रक्रिया
5.13 बोध प्रश्न
5.14 संदर्भ ग्रंथ

5.0 उद्देश्य तथा लक्ष्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप -

- परिवार के बारे में जान सकेंगे।
- परिवार के स्वरूप के बारे में समझ सकेंगे।
- परिवार की समस्याओं के बारे में जान सकेंगे।
- परिवार के परामर्श की आवश्यकता एवं महत्व के बारे में जान सकेंगे।
- पारिवारिक विघटन के कारण के बारे में जान सकेंगे।
- आधुनिक परिवार की समस्याए के बारे में जान सकेंगे।
- परिवार का अनिवार्य कार्य के बारे में जान सकेंगे।
- पारिवारिक परामर्श का अर्थ के बारे में जान सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

मानव समाज में परिवार अपने आदषोरं, भावों तथा मान्यताओं तथा क्रियाओं को अपनी भावी सन्तति को प्रदान करता हुआ स्वयं को जीवित रखता है। जैसे-जैसे वह अनुभव करता है कि उसकी कुछ परम्पराएं, विचारधाराएं, मूल्य आदि पुरातन होते जा रहे हैं और वे उसे लाभप्रद सिद्ध नहीं हो रहे हैं, वैसे-वैसे वह उनको त्यागता चलता है और नवीन मान्यताओं, परम्पराओं, विचारधाराओं आदि को अपनाता जाता है।

5.2 परिवार का अर्थ

समस्त मानवीय समूहों में परिवार सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्राथमिक समूह है। यह एक छोटा-सा सामाजिक समूह है, जिसमें सामान्यत: माता-पिता तथा एक या अधिक बच्चे होते हैं। ऐतिहासिक रूप से जैसा बर्गेस ने कहा है, ''यह अनेक परिवर्तनों को पार करके जटिल सामाजिक संरचना अथवा संस्था के स्थान पर लोचपूर्ण मानवीय सम्बंध बन गया है।''

इस प्रकार, परिवार एक जैविक इकाई है, जिसमें पति-पत्नी के मध्य संस्थायीकृत यौन-सम्बंध होते हैं। परिवार की विशेषता इसका जैविक सम्बंध है। इसके सदस्य अन्य किसी समूह की अपेक्षा जनन की प्रक्रिया द्वारा एक-दूसरे से निकटवर्ती सम्बंधित होते हैं। यह यौन के तथ्य पर आधारित है जिसका महत्वपूर्ण कार्य बच्चों का जनन एवं पोषण हैं। इसमें माता-पिता एवं उनके बच्चे होते हैं। यह समिति एवं संस्था दोनों है। यह प्रत्येक युग एवं समाज में पाई जाने वाली सार्वभौमिक संस्था है। यह एक प्रारम्भिक कोश्ठ है जिससे समुदाय का विकास होता है।

परिवार की परिभाषा

कुछ परिभाषाएं आरम्भ में शब्द 'परिवार' की व्याख्या कर लेना आवश्यक है। अंग्रेजी शब्द 'फेमिली' रोमन शब्द 'फेमुलस' जिसका अर्थ नौकर से लिया गया है। रोमन कानून के अंदर यह शब्द स्वामियों एवं दासों और अन्य नौकरों तथा साथ ही सामान्य वंष अथवा विवाह के आधार पर संबंधित सदस्यों के लिये प्रयुक्त होता था। इसकी कुछ परिभाषाएं निम्नलिखित हैं:-

(1) ''परिवार बच्चों की उत्पत्ति एवं पालन-पोषण की व्यवस्था करने हेतु पर्याप्त रूप में निश्चित और स्थायी यौन-सम्बंध से परिभाषित एक समूह हैं। -मेकाइवर

(2) ''परिवार उन व्यक्तियों का एक समूह है जो विवाह, रक्त या गोद लेने के बंधनों से जुड़े हैं, एक गृहस्थी का निर्माण करते हैं और पति-पत्नी, माता-पिता, पुत्र और पुत्री, भाई और बहन अपने-अपने क्रमश: सामाजिक कार्यों अन्त:क्रिया एवं अन्त: संचार करते एक सामान्य संस्कृति का निर्माण करते हैं।

-बर्गेस एवं लोक

(3) ''परिवार पति-पत्नी, बच्चों सहित या उनके बिना अथवा मनुष्य अथवा स्त्री अकेले का बच्चों सहित कम या अधिक स्थिर समिति हैं। - निमकाफ

(4) ''परिवार ऐसे व्यक्तियों का समूह है, जो रक्त के आधार पर एक-दूसरे से संबंधित है तथा जो परस्पर नातेदार है।

(5) ''परिवार की परिभाषा एक दृष्टिकोण से यह की जा सकती है कि एक स्त्री, बच्चे सहित तथा एक पुरूष उनकी देखरेख हेतु। - बीसन्ज

(6) ''परिवार से हम सम्बंधों की वह व्यवस्था समझते हैं जो माता-पिता और उनकी संतानों के बीच पाया जाता है।'' - क्लेयर

(7) ''परिवार पति, पत्नी एवं बच्चों से निर्मित एक जैविक सामाजिक इकाई है।'' - इलियट तथा मैरिल

(8) ''परिवार रक्त, विवाह अथवा गोद लेने के आधार पर संबंधित दो या अधिक व्यक्तियों का समूह है, इन सभी व्यक्तियों को एक परिवार का सदस्य समझा जाता है।

-अमेरिकन ब्यूरो ऑफ सेन्सस

(9) ''परिवार संस्थायीकृत सामाजिक समूह जिस पर जनसंख्या प्रस्थापन का भार है।

-आरनाल्ड ग्रीन

परिवार का स्वरूप (1) सार्वभौमिकता (Universality)-परिवार सर्वाधिक सार्वभौमिक समूह है। मानव-इतिहास में यह सर्वप्रथम संस्था है। यह प्रत्येक काल एवं प्रत्येक समाज में अवस्थित रही है तथा संसार के सभी भागों में पायी जाती है। कोई भी समाज अथवा संस्कृति ऐसी नहीं होगी, जिसमें परिवार का कोई न कोई रूप न रहा हो। इसमें से प्रत्येक किसी न किसी परिवार का सदस्य है। अन्य कोई समूह इतना सार्वभौमिक नहीं है, जितना कि परिवार।

(2) भावनात्मक आधार (Emotional Basis)-परिवार समाज की मौलिक इकाई है। यह यौन-सम्बंध, संतानोत्पादन, मातृ-वात्सल्य तथा पैतृक संरक्षण की मूल प्रवृत्तियों पर आधारित है। यह इन प्रवृत्तियों को दृढ़ बनाने वाला निकट संबंधित समूह है।

(3) रचनात्मक प्रभाव (Formative influence)-परिवार का इसके सदस्यों पर काफी प्रभाव पड़ता है। यह व्यक्तियों के चरित्र को ढालता है। बाल्यकाल में इसका प्रभाव व्यक्ति की व्यक्तित्व-संरचना को प्रभावित करता है। इसकी प्रारम्भिक इकाइयों यथा माता एवं पिता से बच्चा अपने शारीरिक गुणों को प्राप्त करता है। फ्रायड (Freud)- तथा अन्य मनोवैज्ञानिकों ने सिद्ध किया है कि बच्चा व्यस्क आयु में उन्हीं मानसिक प्रवृत्तियों एवं चरित्र को अभिव्यक्त करता है, जो वह परिवार में प्राप्त करता है कन्फ्यूसियस (Confucius) ने ठीक ही कहा था कि यदि आप समाज को उन्नत करना चाहते हों तो परिवार को उन्नत करों। ''अच्छा जन्म पार सब सौगातों में सबसे अच्छी सौगात है। घटिया जन्म के लिये इस संसार में कोई भी वस्तु ऐसी नहीं है, जो अच्छे जन्म वे अभाव की पूर्ति कर सकें।''

(4) केन्द्रीय स्थिति (Nuclear position)-परिवार सभी अन्य सामाजिक समूहों का केन्द्र हैं। सम्पूर्ण सामाजिक संरचना पारिवारिक इकाइयों की निर्मित है।

(5) सदस्यों का उत्तरदायित्व (Responsibility of the members)-परिवार में बच्चा सामाजिक दायित्व का अर्थ एवं सहयोग की आवश्यकता सीखता है। मैकाइवर (MacIver) ने ठीक ही कहा है, ''संकट-काल में व्यक्ति देश के लिये कार्य करते हैं, युद्ध लड़ते हैं तथा शहीद हो जाते हैं, परन्तु परिवार के लिये तो वे जीवन-पर्यन्त परिश्रम करते हैं। '' परिवार बच्चे के समाजीकरण का महत्वपूर्ण स्रोत है।

(6) सामाजिक नियमन (Social regulation)-परिवार सामाजिक रीति-रिवाजों एवं कानूनी नियमों से विशेषतया सुरक्षित होता है। उनको भंग करना सरल नहीं है। परिवार एक ऐसा समूह है जिसमें संबंधित पक्ष इच्छापूर्वक प्रवेष करते हैं, परन्तु जिसे वे सुगमता से छोड़ या भंग नहीं कर सकते। विवाह कोई मजाक नहीं है।

(7) स्थायी एवं अस्थायी (Permanent and Temporary)-परिवार संस्था के रूप में स्थायी एवं सार्वभौमिक है, परन्तु एक समिति के रूप में अस्थायी है। जब पुत्र का विवाह हो जाता है तो वह नया परिवार बसा लेता है, जो पुन: अन्य नये परिवारों को जन्म देता है।

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि यद्यपि परिवार समाज का एक अत्यन्त सीमित समूह है, तथापि यह अपनी विलक्षणता के कारण सबसे भिन्न समूह है। यह सबसे छोटा नातेदारी समूह (Kinship group) है। इसका आरम्भ सामान्यतया उस समय होता है जब दो साथी विवाह करते हैं तथा जब पुत्र विवाह कर लेते हैं तो इसका रूप बदल जाता है। जब एक साथी की मृत्यु हो जाती है तो यह समाप्त हो जाता है। जब बच्चे छोटे तथा पूर्णतया माता-पिता पर आश्रित होते हैं तो परिवार एक संगठित मानवी समूह दिखाई देता है। जब बच्चे बड़े होने लगते हैं तो यह संगठन ढीला होने लगता है तथा जब वे विवाह कर लेते हैं तो पुराना परिवार विघटित हो जाता है एवं नये परिवारों का जन्म हो जाता है। प्रारम्भिक सम्बंध उलट जाते हैं तथा माता-पिता बच्चों पर आश्रित हो जाते हैं।

5.7 परिवार का अनिवार्य कार्य

(1) **लैंगिक आवश्यकता की संतुष्टि**-यह परिवार का सर्वप्रथम अनिवार्य कार्य है। प्राचीन भारतीय विधिषास्त्री मनु लैंगिक संतुष्टि को परिवार का ध्येय मानता था। वात्स्यायन ने भी इसे परिवार का प्रमुख उद्देश्य कहा है। लैंगिक संतुष्टि पुरूष एवं स्त्री के बीच जीवन-पर्यन्त साथी बने रहने की इच्छा उत्पन्न करती है। कामभावना की तृश्टि सामान्य व्यक्तित्व को जन्म देती है। यदि कामभावना का दमन किया जाय तो व्यक्तित्व का संतुलन बिगड़ जाता है तथा सामाजिक सम्बंध भी बिगड़ जाते हैं। हैवलाक के अनुसार, ''लैंगिक मधुरता की असफलता वैवाहिक बंधन को शिथिल बना देती है।'' आधुनिक परिवार में लैंगिक कर्म संतानोत्पत्ति एवं गर्भ के भय से जुड़ा हुआ था, जिस कारण दम्पत्ति अपनी कामवासना को पूर्ण रूप से संतुश्ट करते घबराते थे। परन्तु आधुनिक परिवार में परिवार नियोजन के साधनों एवं गर्भनिरोधकों के आविश्कार से लैंगिक संतुष्टि का कार्य सरल हो गया है। आधुनिक पत्नी गर्भ के भय से मुक्त होकर लैंगिक भावना की तृश्टि अच्छी प्रकार कर सकती है।

(2) **संतानोत्पत्ति तथा पालन-पोषण-** लिंग-संतुष्टि का अवश्म्भावी परिणाम गर्भधारण है। प्रजाति की निरंतरता को स्थिर रखना परिवार का महत्वपूर्ण कार्य है। हिन्दूशास्त्रों का विधान है कि मनुष्य की धार्मिक क्रियाएं उस समय तक सम्पन्न नहीं होती, जब तक उसके पुत्र न हो। पहली पत्नी से बच्चा न होने की दशा में दूसरा विवाह करने की अनुमति है। हिन्दू विवाह पद्धति में वर वधू से कहता है कि ''मैं तुमको श्रेष्ठ संतान उत्पत्ति के लिए स्वीकार करता हूं।'' यद्यपि बच्चे का जन्म परिवार के बिना भी हो सकता है, परन्तु कोई भी समाज अवैध बच्चों को मान्यता नहीं देता। संतानोत्पत्ति तथा बच्चों के पालन-पोषण के लिए परिवार सर्वोत्तम संस्था है। कुछ देशों, यथा रूप में क्रांति के पश्चात बच्चों के सामूहिक पालन-

पोषण के प्रयोग किये गये, परन्तु इन प्रयोगों को शीघ्र ही तिरस्कृत कर दिया गया। बच्चे के पालन-पोषण का कार्य आजकल प्राचीनकाल की अपेक्षा अच्छी प्रकार किया जा सकता है, क्योंकि अब अज्ञात एवं नवजात बच्चे की देखभाल के लिए अधिक ज्ञान एवं सुविधायें उपलब्ध हैं। बाल मृत्यु-दर काफी घट गई है। बच्चे के पालन-पोषण में परिवार के सहायतार्थ अनेक विशिष्ट संस्थाएं, अवैध बच्चों की संख्या में कमी हो रही है, वेश्यावृत्ति समाप्त हो रही है तथा विवाहों की संख्या में वृद्धि हो रही है, जो इस तथ्य का स्पष्ट प्रमाण है कि संतानोत्पत्ति का कार्य परिवार के द्वारा ही किया जाता है। अत: कहा जाता है कि सन्तति-निग्रह के साधनों के प्रयोग से आधुनिक परिवार संतानोत्पत्ति के कार्य को त्याग रहा है तथा एक समय ऐसा आ सकता है, जब समाज के अस्तित्व को खतरा उत्पन्न हो जाए। परन्तु ऐसा भय निर्मूल है, क्योंकि मानवता शीघ्र ही परिवर्तनशील आवश्यकताओं के अनुरूप अपना अनुकूलन कर लेती है।

(3) **घर की व्यवस्था**-मनुष्य की अन्य आवश्यकताओं में घनिष्ठ मानवीय अनुक्रिया की आवश्यकता महत्वपूर्ण है। मनोवैज्ञानिकों का विचार है कि मानसिक परेषानियों, व्यवहार-सम्बंधी समस्याओं का सबसे प्रमुख अकेला कारण प्रेम का अभाव, अर्थात् घनिष्ठ साथियों के छोटे से दायरे में स्नेहमय एवं मधुर सम्बंधों का अभाव है। परिवार मानव-प्राणियों की स्नेह के लिए आवश्यकता को पूर्ण करता है। अधिकांश समाज स्नेहमयी अनुक्रिया के लिए लगभग पूर्ण रूप से परिवार पर निर्भर है। मनुष्य दिन भर के कठोर परिश्रम के बाद घर लौटता है, जहां वह पत्नी तथा बच्चों के बीच अपनी थकान को दूर करता है। यद्यपि आधुनिक समय में अनेक क्लब, होटल आदि हैं, जो मनुष्य के मनोरंजन की व्यवस्था करते हैं, परन्तु जो आनंद पुरूष अपने घर में पत्नी, माता-पिता एवं बच्चों के मधुर दायरे में महसूस करता है, वह होटल एवं क्लब के क्षणिक मनोरंजन से कहीं अधिक सुखदायी एवं उत्तम है। इन अन्य मनोरंजनात्मक एजेन्सियों के बावजूद भी घर अभी तक स्वर्ग-सा पवित्र स्थान है, जहां इसके सदस्यों को विश्राम एवं स्नेह मिलता है।

5.8 परिवार का विघटन

आधुनिक समय में परिवार के समक्ष कुछ ऐसी समस्याएं उत्पन्न हो गई हैं जिनके कारण परिवार के अस्तित्व पर एक प्रश्न चिन्ह लग गया है। वर्तमान समय में परिवार में अभूतपूर्व परिवर्तन आ रहा है, जो परिवार के सदस्यों के दृष्टिकोण, मूल्यों, विचारों इत्यादि में अनेकानेक परिवर्तन को जन्म दे रहा है। इन परिवारों के कारण अनेक समाजषास्त्री यह सोचने को विवश हो गये हैं कि परिवार रूपी संस्था का विघटन होता जा रहा है। आधुनिक परिवारों के सदस्यों के बीच तनाव, ईर्श्या, अश्रद्धा, घृणा इत्यादि देखने को मिलते हैं। परिवार के आपसी सम्बंधों में एक प्रकार की उदासीनता और अलगाव की भावना आदि पायी जाती हैं।

परिस्थितियों के बदलाव के साथ-साथ व्यक्ति की आवश्यकताओं में भी निरंतर परिवर्तन होता रहता है। इन नवीन आवश्यकताओं के अनुसार परिवार को समयानुसार अनुकूलन करना पड़ता है। परन्तु परिवार के प्राचीन आदर्श प्रतिमानों, मूल्यों इत्यादि में उतनी तीव्रता के साथ परिवर्तन नहीं हो पाता है। परिवार के सदस्य जब अपेक्षित व्यवहार से भिन्न व्यवहार करने लगते हैं तब परिवार में विघटन की स्थिति पैदा होती है। इलियट एवं मेरिल ने पारिवारिक विघटन के बारे में लिखा है कि-''पारिवारिक विघटन में पति-

पत्नी के बीच पाया जाने वाला तनाव ही नहीं आता है, बल्कि बच्चों ओर माता-पिता के मध्य पनपने वाला तनाव भी आता है।'' पारिवारिक विघटन का तात्पर्य पारिवारिक सम्बंधों में बाधा पड़ना है। यह संघर्षों के क्रम का वह चरम रूप है जिसने परिवार की एकता को खतरा पैदा कर दिया है। यह संघर्ष किसी भी प्रकार का हो सकता है। संघर्ष के इसी क्रम को पारिवारिक विघटन कहा जाता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि पारिवारिक क्रिया-कलापों में असंतुलन की स्थिति का उत्पन्न होना ही पारिवारिक विघटन है। जब परिवार के सदस्यों में तनाव उत्पन्न हो जाता है तब सदस्य अपने कत्र्तव्यों और पारस्परिक भावनाओं के प्रति अरुचि दिखलाने लगते हैं और परिवार में मान्य नियमों इत्यादि के विपरीत आचरण करने लगते हैं तब परिवार में पारिवारिक विघटन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

पारिवारिक विघटन के कारण :-

(1) हितों की एकता का अभाव-विघटित परिवारों के सदस्य एक दूसरे के हित में अपना हित नहीं समझते। व्यक्ति दूसरे के हितों को ठुकरा देता है और अपने स्वाथोर् की पूर्ति में लग जाता है जिसके कारण पारिवारिक एकता भंग हो जाती है।

(2) सदस्यों की स्वार्थभावना-परिवार के सदस्यों में जब स्वार्थ की भावना प्रबल हो जाती है, तब वे अन्य सदस्यों या समस्त परिवार के हितों की चिंता नहीं करते हैं। इस प्रकार सदस्यों में सहयोग की भावना धीरे-धीरे समाप्त होने लगती है और परिवार विघटन की स्थिति में आ जाता है।

(3) सामाजिक मूल्यों की विभिन्नता एवं पीढ़ियों के बीच खाई- आधुनिक समय में सामाजिक परिवर्तन की गति कुछ अधिक तीव्र है। परिवार के सदस्यों के बीच सामाजिक मूल्यों की विभिन्नता से पारिवारिक सहयोग एवं वैचारिक समानता धीरे-धीरे समाप्त होने लगती है जिसके कारण परिवार विघटन की स्थिति में आ जाता है। परिवार में पिता जिन सामाजिक मूल्यों के अनुसार अपने बच्चों को ढालने का प्रयास करते हैं, बच्चे उन्हे आसानी से अपनाना नहीं चाहते हैं। इस प्रकार दो पीढ़ियों के बीच टकराहट की स्थिति उत्पन्न हो जाती है, जिसका सीधा प्रभाव परिवार की संरचना पर पड़ता है।

(4) सामाजिक संरचना में परिवर्तन -प्राचीन काल से ही परिवार के सदस्यों की स्थिति प्राय: निश्चित होती थीं, परन्तु आधुनिक समय में समाज में होनेवाले परिवर्तनों के कारण परिवार के सदस्यों की स्थिति एवं भूमिकाओं में अनेक परिवर्तन हुए हैं। 'नारी स्वतंत्रता' जैसे आंदोलन एवं विचारों के कारण महिलाओं की स्थिति एवं कायोर् में अनेकानेक परिवर्तन हुए हैं जिनका पुरूषवर्ग आसानी से समर्थन नहीं करते हैं। परिणामस्वरूप परिवार में तनाव की स्थिति पैदा हो जाती है जो परिवार को विघटन की ओर ले जाती है।

(5) उद्योगीकरण एवं शहरीकरण - उद्योगीकरण एवं शहरीकरण की प्रक्रिया से स्त्रियों को आर्थिक आत्मनिर्भरता की भावना को बढ़ावा मिला है जिसके कारण स्त्रियां शहरों में विभिन्न व्यवसायों को अपना रही है। शहरी सामाजिक मूल्यों ने स्त्रियों को सापेक्षित रूप से स्वतंत्र होने का अवसर दिया है। स्त्रियों की प्राचीन सांस्कृतिक परम्पराओं के प्रति उदासीनता के कारण परिवार के अंदर अनेक समस्याएं उत्पन्न हो चुकी है जिनके कारण परिवार विघटन की ओर उन्मुख है।

यहां पारसन्स का उद्योगीकरण एवं परिवार के सम्बंध में यह विचार उल्लेखनीय है कि उद्योगीकरण ने मूल परिवार एवं नव-स्थानीय परिवार के विकास की प्रक्रिया को बढ़ावा दिया है। दूसरी तरफ कैम्बरीज के सामाजिक इतिहासकार लासलेट ने अपने ग्रेट ब्रिटेन के अध्ययन में इस बात का खण्डन किया है कि उद्योगीकरण एवं मूल परिवार की वृद्धि के बीच कोई सीधा सम्बंध है। उनका कहना है कि उद्योगीकरण के पहले ही ब्रिटेन के गांवों में मूल परिवार का विकास होना प्रारम्भ हो गया था।

(6) विवाह के आधार में परिवर्तन-परम्परागत विवाह में मुख्य भूमिका उसके माता-पिता या समुदाय की होती है। परन्तु आजकल का वैवाहिक सम्बंध युवक-युवतियों के अपने निर्णय से निर्धारित होता है। इस प्रकार वर्तमान समय में विवाह एक समझौता की तरह होता है। पति-पत्नी के बीच थोड़ा-सा भी अरुचिकर व्यवहार तलाक की पृश्ठभूमि तैयार कर देता है जिसके कारण परिवार विघटित हो जाता है।

इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि पारिवारिक विघटन एक प्रक्रिया है जो धीरे-धीरे परिवार के परम्परागत स्वरूप को विघटित कर रही है।

5.9 आधुनिक परिवार की समस्याएं

समाज में कुछ भी शाश्वत नहीं है। परिस्थितियों में परिवर्तन के साथ-साथ समाज के विभिन्न अंगों एवं प्रकायोर्ं में भी परिवर्तन होते रहते हैं। आज परिवार का वह स्वरूप मौजूद नहीं है जो आज से सौ साल पहले था। चाहे वह परिवार विकसित समाज का हो या विकासशील समाज का, प्रत्येक समाज के परिवार के स्वरूप में कुछ-न- कुछ परिवर्तन अवष्य आया है। जैसे-जैसे आर्थिक विकास, उद्योगीकरण एवं नगरीकरण की प्रक्रिया में तेजी आ रही है, वैसे-वैसे परिवर के सामने नयी-नयी समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं। हिन्दू संयुक्त परिवार के बिखरने का यही प्रमुख कारण है। समाजशास्त्रियों का मानना है कि इन्हीं कारणों से अमरीका के परिवारों का भी आकार छोटा हुआ है। उन लोगों ने बताया है कि अमरीका में 1850 ई. में परिवार में औसतन 5.6 व्यक्ति हुआ करते थे और वह घटकर 1930 में 4.1 हो गया आधुनिक परिवार की कुछ समस्याएं इस प्रकार हैं-

(1) तलाक की समस्या-दिन व-दिन समाज में तलाक की समस्या बढ़ती जा रही है। परम्परागत समाज में आधुनिक समाज की अपेक्षा तलाक की समस्या बहुत कम थी। भारत जैसे देश में तलाक की समस्या और भी कम थी। जब हम भारतीय जनगणना से प्राप्त वैवाहिक स्थिति के आंकड़ों को देखते हैं तो स्पष्ट होता है कि भारत में तलाक की प्रक्रिया में तेजी आयी है। पहले साधारणतया तलाक निम्न जातियों तक ही सीमित था, पर आज समाज के हर हिस्सों में, विशेषकर शहरों में, तलाक की घटनाएं अधिक सुनने को मिलती है। अमेरिका में तलाक की समस्या कुछ और भी ज्यादा है। प्राप्त आंकड़ों से पता चलता है कि वहां औसतन दाम्पत्य जीवन 7-8 साल तक का है।

(2) अस्थिरता की समस्या-सापेक्षित रूप से आधुनिक परिवार एक काफी अस्थिर व्यवस्था है। पहले की तुलना में परिवार निर्माण एवं परिवार विघटन की प्रक्रिया काफी तेज हो गयी है। परम्परागत भारतीय समाज में मां-बाप के जीवन-काल में उनके पुत्रों के बीच बंटवारा साधारणतया नहीं होता था, लेकिन इन दिनों भाई-भाई के बीच ही नहीं, बल्कि पिता-पुत्र के बीच भी परिवार का बंटवारा हो रहा है।

(3) परिवार के मुखिया के प्रभुत्व में कमी-पहले परिवार का मुखिया या कर्ता अपने विवेक से परिवार सम्बंधी सभी निर्णयों को लिया करता था। परिवार का मुखिया परिवार का एकछत्र राजा होता था, उसी के राय-विचार से परिवार के सभी लोग विभिन्न कायोर्ं को करते थे। उसका अधिकार इतना अधिक केन्द्रित था कि कुछ समाजशास्त्रियों ने उसे परोपकारी तानाषाह कह कर पुकारा है। साधारणतया परिवार का मुखिया सबसे अधिक बुजुर्ग आदमी हुआ करता था और मरणोंपरांत या बुढ़ापे की स्थिति में उसका बड़ा लड़का परिवार का मुखिया बनता था, क्योंकि उस समय समाज में ज्येश्ठाधिकार की प्रथा का प्रचलन था। लेकिन आज के बदलते परिवेष में परिवार के सभी लोग मिलकर निर्णय लेते हैं। निर्णय लेने की प्रक्रिया व्यक्तिवादी न होकर सामूहिक हो गई है। आज यह भी देखने को मिलता है कि परिवार में जो सबसे अधिक कमाता है या समाज में उंचे पदों पर आसीन है, वह अपने परिवार में कुछ ज्यादा ही अधिकार जताने की स्थिति में हो गया है। उम्र पर आधारित या हैसियत में कमी हो रही है।

(4)वैकल्पिक संस्थाओं का विकास- आधुनिक समाज में बहुत सारी ऐसी संस्थाओं का उदय हुआ है जो परिवार के परम्परागत प्रकायों को पूरा करने की कोशिश करती है। बच्चों का लालन-पालन सिर्फ परिवार में ही न होकर अब परिवार के बाहर भी संभव है। पाश्चात्य देशों में कामकाजी महिलाओं के बच्चों को देखने के लिए दिवा प्रभारी परिवार की व्यवस्था है जहां कामकाजी मां-बाप अपने बच्चों को दिन में छोड़ देते हैं। उसी तरह अब यौन-इच्छाओं की पूर्ति परिवार के बाहर भी हो रही है। कुछ लोग अकेले गांव से शहर की ओर आते हैं और परिवार की कमी को वेष्यालयों का सहारा लेकर पूरा करते है। अमीर लोग अपने घरों में 'आया' रखकर अपने बच्चों के लिए मां की कमी को पूरा करने का प्रयास करते हैं। फलस्वरूप परिवार के सदस्यों के बीच, विशेषकर बच्चों के जीवन में, संवेदनात्मक संतुलन काफी बिगड़ गया है।

(5) परिवार के आकार में कमी-समय के साथ-साथ परिवार का आकार भी छोटा होता जा रहा है। भारत में संयुक्त परिवार का स्पष्ट विघटन देखने को मिलता है। इतना ही नहीं विस्तृत परिवार भी टूटता जा रहा है। शहरों में तो विशेषकर अब मूल परिवार ही देखने को मिलता है। बहुत घरों में तो आज मात्र एक पुरूष ही रहते हैं। उद्योगीकरण और नगरीकरण के चलते आधुनिक समाज में मूल परिवार एवं घरबार की प्रधानता बढ़ती जा रही है।

(6) व्यक्तिगत स्वार्थ की भावना में वृद्धि-पहले परिवार के सभी सदस्य अक्सर एक-दूसरे की भलाई की बात सोचते थे। सदस्यों के बीच सहयोग, सहानुभूमि और परस्पर प्रेम की भावना अधिक होती थी, लेकिन आज लोग कुछ ज्यादा ही स्वार्थी हो गए हैं। लोग अपने स्वार्थ की बात ज्यादा और परिवार के स्वार्थ की बात कम सोचने लगे हैं। यही कारण है कि परिवार में धीरे-धीरे तनाव बढ़ता जा रहा है। लोग अपने भाइयों से अलग होकर स्वतंत्र परिवार स्थापित करने लगे हैं। हम अपने सगे-सम्बंधियों से दूर होते जा रहे हैं। नातेदारी का बंधन ढीला पड़ता जा रहा है। साधारणतया उद्योगीकरण एवं नगरीकरण की प्रक्रिया से दाम्पत्य परिवार को विश्व स्तर पर बढ़ावा मिला है।

5.10 पारिवारिक परामर्श का अर्थ

पारिवारिक परामर्श की प्रक्रिया पारिवारिक समस्याओं पर केन्द्रित होती है, जिसमें परिवार के सदस्यों साथ विचार-विमर्श, वार्तालाप व सौहार्दपूर्ण तर्क विर्तक के आधार पर परिवार के सदस्यों को इस योग्य बनाया जाता है कि वह अपनी समस्याओं के समाधान के लिए स्वयं निर्णय ले सकें। बल्कि यह कहना चाहिए कि पारिवारिक परामर्श पूर्ण रूप से स्वयं-निर्णय पर आधारित है और उत्तम पारिवारिक परामर्श के द्वारा लिये गये निर्णय के रूप में होता है। उत्तम पारिवारिक परामर्श 'फेमिली लॉ एक्ट' के अन्तर्गत व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा का परिवार के पारस्परिक सम्बंध एवं भावनाओं को ध्यान में रखकर परिवार की समस्याओं का समाधान करने योग्य बनाना है।

5.11 परिवार के परामर्श की आवश्यकता एवं महत्व

परिवार की संरचना और प्रकार्य में बहुत तेजी से परिवर्तन आ रहे हैं। पाश्चात्य देशों के बारे में एक प्रश्न उठ खड़ा हो गया है कि क्या परिवार भविष्य में लुप्त हो जाएगा? उभरते तथ्यों को देखने से ऐसा लगता है कि परम्परागत मूल परिवार का भविष्य खतरे में है। इस संदेह का कारण स्वाभाविक है क्योंकि तलाक में वृद्धि हो रही है। विकसित देशों में लोग विवाह के पूर्व स्वच्छंद होकर यौन-इच्छाओं की पूर्ति और प्रजनन का कार्य कर रहे हैं। अकेले रहने वाले लोगों की संख्या में भी दिन-व-दिन बढ़ोतरी हो रही है। बहुत सारे समाज वैज्ञानिक आज यह सोचने के लिए विवश हो गए हैं कि परिवार समिति एवं संस्था के रूप में धीरे-धीरे अपने पतन की ओर बढ़ रहा है और यह पतन सम्भवत: एक दिन परिवार को इसकी समाप्ति के कगार पर लाकर खड़ा कर देगा। ऐसी चिन्ता सिर्फ समाजशास्त्रियों एवं मानवशास्त्रियों तक ही सीमित नहीं, बल्कि आये दिन पश्चिमी देशों के कुछ राजनीतिज्ञों द्वारा भी व्यक्त की जा रही है। आधुनिकोत्तर समाज की अपनी परेषानियां है जो विभिन्न रूपों में समाज में प्रकट हो रही है। पाश्चात्य देशों को इन समस्याओं से निकलनना इतना आसान नहीं है। परन्तु यह भविष्यवाणी करना काफी कठिन है कि पाश्चात्य देशों में परिवार मुक्त समाज कब स्थापित होगा। मार्क्स एवं उनके अनुयायियों ने भी परिवार के भविष्य पर संदेह व्यक्ति किया है, लेकिन उनके संदेह का कारण उस पर चर्चित कारणों से भिन्न है। मार्क्स एवं ऐंगल्स ने यह दलील दी है कि परिवार पूंजीवादी समाज की विशेषता है। पूंजीवादी समाज के अंतर्गत परिवार जैसी संस्था के माध्यम से बच्चों एवं महिलाओं का आर्थिक शोषण होता है। इस व्यवस्था में लोग महिलाओं को सम्पत्ति के रूप में देखते हैं। बच्चों और महिलाओं को उत्पादन के उपकरण के रूप् में इस्तेमाल किया जाता है। जब प्रकार्यवादियों की तरह मार्क्सवादी चिन्तक यह कभी स्वीकार नहीं करते हैं कि परिवार सहज और सरल ढंग से एक संस्था के रूप में समाज में अपनी भूमिका निभाता है। खैर, जो भी हो इस तथ्य पर एक सवालिया निषान खड़ा होता है कि पूंजीवादी व्यवस्था की समाप्ति के बाद साम्यवादी व्यवस्था में परिवार नहीं रहेगा क्योंकि यह पूंजीवादी व्यवस्था के शोषण का उपकरण है।

दूसरी तरफ जेसी बर्नाड ने अपनी पुस्तक में परिवार के भविष्य पर बहुत ही विस्तार-पूर्वक विचार किया है। इस सम्बंध में उनका कहना है कि पाश्चात्य देशों में परिवार का भविष्य कतई खतरे में नहीं है। इसका समर्थन अन्य समाजशास्त्रियों ने भी किया है। परिवार के उपर एक अध्ययन मे लिबिटन एवं विलॉस का

कहना है कि अमरीका में परिवार का विघटन नहीं हो रहा है बल्कि वह दिन-ब-दिन विकसित होता जा रहा है। उसके स्वरूप बदल रहे हैं, पर परिवार समाप्त नहीं हो रहा है। उन्हें पहले की तुलना में अमरीकी परिवार कुछ ज्यादा ही मजबूत होता दिखाई दे रहा है। सभी समाज वैज्ञानिक इस बात से सहमत नहीं है कि परिवार समय के साथ समाप्त हो जायेगा या अनावश्यक हो जायेगा। 2

परिवार के सदस्य और परामर्शदाता के मध्य अन्तक्रिया होने के कारण अनेक प्रकार की कठिनाइयां और समस्याएं प्रकट होती हैं। परामर्शदाता यदि 'अच्छी प्रैक्टिस' सम्बंधी मान्य नीतियों का पालन करता है तो इन समस्याओं का समाधन हो सकता है। ऐसे परामर्श में पर्यवेक्षण और संतुलित निर्णय/मूल्यांकन की आवश्यकता होती है।

इस प्रकार परिवार की समस्याओं एवं समाज मे हो रहे बदलावों को ध्यान में परिवार कसे सही रूप में बनाये रखने के लिए परामर्श ही मात्रा एक ऐसी प्रक्रिया है जिससे परिवार एवं समाज के बदलाव को सामंजस्य रूप से स्थापित किया जा सकता है।

5.12 परिवार एवं परामर्श प्रक्रिया

बीसंवी शताब्दी के मध्य तक परामर्श एवं मनोपचार के लिए व्यक्ति को ही केन्द्र में रखा गया किन्तु उसके बाद परामर्शदाताओं ने यह अनुभव किया कि व्यक्ति की समस्याओं की उत्पत्ति और समाधन में उन व्यवस्थाओं या प्रणालियों की उपेक्षा नहीं की जा सकती है जिनमें वह जीवन-यापन करता है, यथा- परिवार, युगल, पति-पत्नी, कार्य समूह, संस्कृति आदि परिवार एवं अन्य प्रणालियों में अन्तर्क्रियाओं और सम्बधों की हमारे जीवन क्षेत्र सम्बंधी विश्वासों, व्याख्याओं और उसके प्रति अनुक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। परिवार के प्रभाव को मनोविश्लेषणात्मक उपागम में स्वीकार किया गया था किन्तु यह व्याख्या पालन-पोषण की प्रक्रिया में व्यक्ति के आरम्भिक जीवन में माता-पिता के प्रभाव तक सीमित थी।

समाज विज्ञानों की आधुनिक दृष्टि में परिवार एवं अन्य-समूहों की यांत्रिक परिभाषा अस्वीकार कर दी गयी है। यद्यपि संचार के प्रारूप को आज भी महत्व दिया जाता है किन्तु अब यह समझने पर अधिक ध्यान दिया जाता है कि परिवार किसी प्रकार हमारे जीवन वृत्त के बारे में हमारे अर्थबोध, विश्वासों, व्याख्याओं की रुप रचना करके हमारी संचार प्रणाली को प्रभावित करता है। आधुनिक चिंतन में परिवार को जैविक प्रणाली के रूप में देखा जाता है। समस्याओं को घटनाओं के प्रति दृष्टिकोण का प्रतिफल माना जाता है इसलिए उपचार या परामर्श प्रक्रिया में अथोर् की संयुक्त प्रयासों द्वारा रचना के लिए प्रयास को सम्मिलित किया जाता है।

आरम्भ में व्यक्ति और परिवार उपचार तथा स्व एवं प्रणाली के मध्य विभेद किया जाता था किन्तु अब दोनों उपागमों के मध्य समाकलन का प्रयत्न किया जा रहा है। समाकनात्मक प्रयत्नों के फलस्वरूप विवाह और परिवार परामर्श/उपचार का एक साथ विलय हो गया।

सर्वांगी दृष्टिकोण में सभी अन्तर्सम्बंधित अंगों को एक-दूसरे को एवं अंतत: प्रणाली के कायोर् को प्रभावित करते हुए देखा जाता है। प्रणाली को अंगों के योग के रूप में नहीं अपितु उनके मध्य के जोड़ों के

आधार पर परिभाषित किया जाता है जोड़ों को विविध प्रकार से संचार, अन्तर्क्रिया, आदान-प्रदान, विश्वासों, विचारों के रूप में परिभाषित किया जाता है जिसे सामूहिक रूप में सूचना भी कहा जाता है। सर्वांग या प्रणाली में किसी बिन्दु पर सूचना परिवर्तन का प्रभाव अन्य बिन्दुओं या अंगों पर भी पड़ता है। इस प्रकार माता-पिता के मध्य विचार विनिमय के फलस्वरूप पुत्र के प्रति पिता का व्यवहार प्रभावित होता है और पुत्र की प्रतिक्रिया द्वारा माता-पिता प्रभावित होते हैं। अर्थात किसी भी प्रणाली में घटकों के मध्य चक्रीय कारणात्मक सम्बंध पाया जाता है। इसलिए परिवार या सर्वांग उपागम की रूचि संबंधन के प्रारूप में होती है।

विकासात्मक दृष्टि से परिवार में जन्म से मृत्यु तक के जीवन चक्र में परिवर्तन घटित होते हैं। इन परिवर्तनों को प्रथम क्रय और द्वितीयक क्रय का परिवर्तन कहा जा सकता है। प्रथम क्रम के परिवर्तन में किसी सदस्य में परिवर्तन आता है और द्वितीयक क्रम में परिवार एक सर्वांग/प्रणाली के रूप में व्यक्तिगत स्तर के परिवर्तनों के साथ अनुकूलन स्थापित करता है। इस अनुकूलन की प्रक्रिया में अर्थ और व्यवहार में परिवर्तन स्थापित किया जाता है तथा नयी अनुक्रिया श्रृंखलायें उत्पन्न होती हैं। सदस्यों में परिवर्तन और तदनुकूल परिवार रूपी प्रक्रम में परिवर्तन की आवश्यकता के फलस्वरूप विकासात्मक एवं अन्तपीढ़ी तनाव उत्पन्न होता है। परिवार परामर्शदाता मूलत: परिवार के सदस्यों को अन्तिर्ि्कंयाओं के मूल्यांकन के लिए और इस प्रकार आवश्यक परिवर्तनों विशेषत: द्वितीय क्रम के परिवर्तन सम्बंधी आवश्यकताओं का अनुभव करने के लिए अवसर देता है। परामर्शदाता ऐसे हस्तक्षेप के लिए विचार करता है जिनके द्वारा प्रकम के बारे में ऐसी सूचनाओं की प्रतिपूर्ति होती है कि सर्वांग में वांछित परिवर्तन उत्पन्न किया जा सके। इस दिशा में परिवार की सहायता करने के लिए परामर्शदाता सदस्यों के चिन्तन, अनुभूति ओर व्यवहार एवं सदस्यों की समूह में अन्तक्रिया से सम्बंधित प्रश्न पूछता है जिससे सदस्यों को यह ज्ञात हो सके कि वे किस प्रकार अन्तर्सबंधित है तथा एक सर्वांग के रूप में वे कैसे चक्रीय रूप में व्यवहार करते हैं सूचनाओं के उत्पत्ति के साथ-साथ सदस्यों को अनतकिर्ि्रया और सम्बंधों के बारे में बोध अर्जित करने में सहायता मिलती है।

परिवार परामर्शन के लिए विविध परामर्शन उपागमों को प्रयुक्त किया जा सकता है किन्तु यह आवश्यक माना जाता है कि परानुभूति लगाव, सत्यनिश्ठा प्रकट होनी चाहिए। इसके लिए अनुभूति और अन्तर्किया का प्रत्यावर्तन किया जाना महत्वपूर्ण होता है। प्रत्यावर्तन की क्रिया द्वारा परामर्शदाता यह प्रदर्शित कर पाता है कि उसमें परिवार के लिए चिंता और रूचि है। प्रत्यावर्तन की क्रिया में चिन्तन करना और नये अथोर् की प्रस्तुति सम्मिलित की जाती है।

5.13 बोध प्रश्न

1 परिवार का अर्थ एवं **परिभाषा को लिखों।**

2 **परिवार के परामर्श की आवश्यकता एवं महत्व को स्पष्ट कीजिए।**

3 भारतीय परिवार की क्या विशेषता होती है। स्पष्ट कीजिए।

4 परिवार की मुख्य क्या समस्या है। स्पष्ट कीजिए।

5 पारिवारिक परामर्श का महत्व स्पष्ट कीजिए।

5.14 संदर्भ ग्रंथ

7- एन.आर.स्वरूप सक्सेना,षिखा चतुर्वेदी (2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक , मेरठ, आर.लाल बुक डिपो।

8- **पाठक एवं त्यागी, शिक्षा के सिद्वान्त, आगरा, विनोद पुस्तक मंन्दिर।**

9- **रमन बिहारी लाल** (2007): **शिक्षा के दार्षनिक एवं समाजषास्त्रीय आधार, मेरठ ,रस्तोगी पब्लिकेषन ।**

10- **डां गिरीष पचौरी** (2007) **शिक्षा और समाज मेरठ, इण्टरनेषनल पब्लिशिंग हाउस।**

11- **डां रामषकल पाण्डेय** (2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, **आगरा,अग्रवाल पब्लिशिंग हाउस।**

12- एन.आर.स्वरूप सक्सेना,डा के.पी. **पाण्डेय**, (1993-94) **शिक्षा सिद्वान्त**, मेरठ, आर.लाल. बुक डिपो।

13- डा0 सीताराम जायसवाल-शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श, अग्रवाल पब्लिकेशन्स आगरा-2

14- डा0 आर0 ए0 शर्मा- वृतिक निर्देशन एवं रोजगार सूचना
आर0 लाल बुक डिपो मेरठ-250001

9 डा0 आशा रावत - वृतिक निर्देशन एवं रोजगार सूचना आर0 लाल बुक डिपो
मेरठ-250001

10 डा0 अमरनाथ राय- निर्देशन एवं परामर्शन
मधु अस्थाना-(संप्रत्यय, क्षेत्र एवं उपागम) मोतीलाल बनारसी दास चौक वाराणसी-221001

11 मधुसूदन त्रिपाठी- शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श ओमेगा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली - 110002

12 डा0 जे0पी0 सिंह -प्रेंटिस-हॉल आफ इण्डिया प्राईवेट लिमिटेड नई दिल्ली - 110001

इकाई 6

संकट हस्तक्षेप में परामर्श

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य
6.1 प्रस्तावना
6.2 संकट का अर्थ व परिभाषाएं
6.3 संकट की विशेषताएं
6.4 संकट हस्तक्षेप कौन उपलब्ध कराता है।
6.5 संकट के प्रकार
(i) निजी ट्रोमा
(ii) सामाजिक ट्रोमा
6.6 संकट में प्रतिक्रियाएं
6.7 संकट हस्तक्षेप के लिए दिशा निर्देश
6.8 संकट अवस्था
1 तीक्ष्ण
2 बाहरी समायोजन
3 एकीकरण
6.9 संकट मूल्यांकन मॉडलस व हस्तक्षेप
1 गिलीलैंड का छः सोपान मॉडल
2 हाइएज मूल्यांकन तंत्र
3 7 सोपान मॉडल
6.10 अभ्यास प्रश्न
6.11 सारांश
6.12 संदर्भ ग्रंथ

6.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप समझ पाऐंगे कि-

- संकट हस्तक्षेप क्या होता है।

- संकट हस्तक्षेप की विशेषताएं क्या हैं?
- संकट उत्पन्न करने वाली परिस्थितियां क्या हो सकती हैं?
- संकट हस्तक्षेप किस प्रकार सामान्य परामर्श प्रक्रम से भिन्न है।
- संकट हस्तक्षेप का उद्देश्य क्या है?
- संकट कितने प्रकार के होते हैं?
- संकट परिस्थिति में सामान्य प्रतिक्रियाएं क्या होती हैं?
- संकट अवस्था क्या है और कितने प्रकार की होती है।
- संकट अवस्था में किस प्रकार पीड़ित की सहायता की जा सकती है।
- संकट परिस्थितियों का मूल्यांकन किस प्रकार किया जाता है।

6.2 प्रस्तावना

संकट हस्तक्षेप एक आकास्मिक मनोवैज्ञानिक चिकित्सा है जिसका उपयोग पीड़ित व्यक्ति को उस दुर्घटना की अवस्था में उसके जैविक मनोसामाजिक (biosychosocial) कार्यों को करने और मनोवैज्ञानिक ट्रोमा से बाहर निकलने में संतुलन की अवस्था को फिर से प्राप्त करने में प्रयोग आता है। दुर्घटना से तात्पर्य है किसी व्यक्ति का किसी असहनीय मुश्किल की अवस्था को समझने वह उसकी अनुभूति करने से है। जो कि उस व्यक्ति विशेष के वर्तमान स्त्रोतों और डट कर मुकाबला करने की कला में बढ़ोतरी करता है।

संतुलन की अवस्था अथवा ठहराव को प्राप्त करना ही संकट हस्तक्षेप और परामर्श की प्राथमिकता है जैसे कि ट्रोमा किसी भी क्षण उत्पन्न हो सकता है। अत: संकट हस्तक्षेप उस क्षण के तत्काल बाद ही तथा विभिन्न व्यवस्थाओं में घटित होता है। दुर्घटना अल्पकालिक या अधिक से अधिक मासिक हो सकती है परन्तु उसका प्रभाव दीर्घकालिक होता है किसी व्यक्ति विशेष को उसके जीवन में आने वाले असामान्य तनाव जो उसे अपने जीवन के सामान्य क्रियाकलापों का प्रतिपादन करने में असमर्थ बनाते है ऐसे में संकट हस्तक्षेप एक आकास्मिक और अल्पकालिक चिकित्सा है जो कि इस स्थिति में हस्तक्षेप कर व्यक्ति को उसके क्रियाकलापों की सामान्य अवस्था को प्राप्त करने में उसकी मदद करता है।

6.3 संकट का अर्थ व परिभाषाएं

राबटर्स के अनुसार संकट का चाइनिज अनुवाद दो भिन्न विशेषताएं रखता है, जिसका अर्थ होता है खतरा तथा मौका और अवसर इस प्रकार संकट हस्तक्षेप व्यक्ति को नये कौशल सीखने में सहायक होता हैं (Greene, Lee,Trask & Rheinscheld 2000)

संकट एक मनोवैज्ञानिक असंतुलन का समय होता है जो कि किसी खतरनाक घटना या परिस्थिति से उत्पन्न समस्या के समाधान ना हो पाने के कारण अनुभव होता है

परद् 1971 के अनुसार संकट तब विकसित होता है जब एक घटना या क्रमबद्ध घटनाओं के व्यक्ति के जीवन में घटित होने के परिणामस्वरूप व एक खतरनाक परिस्थिति उत्पन्न होती है। संकट अपने आप घटना नहीं है वरन् घटना के प्रति व्यकित का प्रत्यक्षण व प्रतिक्रिया है।

6.4 संकट की विशेषताएं

1 यह एक प्रेरित घटना या दीर्धकालीन तनाव का परिणाम है।
2 इसमें व्यक्ति अत्यधिक कठिनाई व तकलीफ का अनुभव करता है।
3 इसमें खतरा, हानि तथा अपमान या अवमानना सम्मिलित होते है।
4 घटना व्यक्ति के नियंत्रण से बाहर होती है। व्यकित अनियंत्रित महसुस करता है।
5 घटना आकस्मिक महसुस होती है।
6 तनाव, परेषानी लम्बे समय तक चलती है। (2 से 6 सप्ताह)
7 व्यक्ति को घटना अत्यन्त धमकीपूर्ण प्रतीत होती है।
8 व्यक्ति अत्यधिक डर, तनाव, भांति महसुस करता है।

संकट परिस्थितियों के उदाहरण-

1 दुर्घटना (घर में या गाड़ी से
2 किसी प्रियजन की मृत्यु या आकस्मिक निधन
3 प्राकृतिक आपदा (भूंकप,बाढ, भू-स्खलन
3 शारीरिक बीमारियां (स्वयं को या परीवार जन को
9 बेरोजगारी
10 आर्थिक परेषानियां
11 अनचाहा गर्भधारण
12 तलाक या जीवनसाथी से अलगाव
13 शारीरिक, मानसिक या यौन शोषण

संकट हस्तक्षेप का उद्देश्य

1 सबसे अधिक परेशान करने वाली समस्याओं का हल निकालना।
2 डर व खतरे को तुरंत दूर या कम करना।
1 सहायता व उम्मीद प्रदान करना।
4 व्यक्ति के आन्तरिक व बाहरी स्रोतों को संघटित कर उनका इस्तेमाल करने के लिए प्रेरित करना।
1 छुपी हुई क्षमताओं व योग्यताओं को संघटित कर उपयोग में लाना।
2 असमायोजी समस्या समाधान व्यवहार को कम करना या हटाना जैसे अत्यधिक नषा करना।
3 व्यक्ति को भविष्य के लिए लिए समायोजी व्यवहार व प्रविधियां सीखना।
4 यक्ति को सुरक्षित जगह पर पहुंचाना व मनोवैज्ञानिक सुरक्षा का अहसास देना।

5 वैकल्पिक तरीक सीखाना (समस्या समाधान व स्वं विकास के लिए)

6.5 संकट हस्तक्षेप कौन उपलब्ध कराता है।

- मनोवैज्ञानिक
- मनोचिकित्सक
- परामर्शदाता
- अग्नि शामक अभियंता
- पुलिस
- डॉक्टर एवं नर्स
- सैनिक
- खोज व बचाव कार्यकर्त्ता
- आपातकालीन चिकित्सकीय कार्यकर्त्ता

6.6 संकट के प्रकार

दुर्घटना निजी अथवा सामाजिक दोनों रूपों में हो सकती है

निजी ट्रोमा - किसी व्यक्ति विशेष द्वारा उसके टुटकर मुकाबला करने के कौशल (Self esteem) स्वाभिमान,सामाजिक संबल शक्ति को खो देने की अवस्था को अनुभूति करने वाली घटना को निजी ट्रोमा के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। ये सभी वे परिस्थितियां है जिसमें मनुष्य आत्मघाती धमकियां, धमकी की अनुभूति, मानवघाती आतमघाती, साक्ष्य, अथवा निजी होना आदि अनुभूतियों का शिकार होता है निजी तौर पर तो परामर्शदाता के लिए प्राथमिक सुरक्षा अंकन बहुत महत्वपूर्ण होता है। परामर्शदाता को दीर्घकालीन चिकित्सा निर्देशन प्रदान करने के साथ साथ समाजिक संबल और नेटवर्क संबंधी प्रश्न पूछने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

सामाजिक अथवा जनसंघ ट्रोमा एक बड़े संघ या समाज को प्रभावित करता है। उदाहरण के तौर पर विद्यालयशिकार आतंकवादी हमले और प्राकृतिक आदि एक परामर्शदाता के लिए प्राथमिक चिंतन का विषय होना चाहिए।इस तरह की दुर्घटनाओं के समय कि लोग संसाधन की तरह जागरूक हो। बड़े पैमाने पर निजी अनुभूति में यह आवश्यक होती है कि जहां खाना, पीना तथा उत्तरजीविता की आधारभूति आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके ऐसी जगह आदि रक्षा स्थानों के बारे में जागरूक हो।

6.7 संकट प्रतिक्रियाएं

आदर्शस्वरूपी प्रतिक्रया में सभी वर्तमान में संघर्ष कर रहे हैं अथवा कभी अनुभूति की है उन सभी आदर्श स्वरूपी प्रतिक्रिया की तरफ सजग रहने के लिए पे्ररित किया जाता है। (बौद्धिक स्तर) पर वे स्वयं या दूसरों को ट्रोमा के लिए जिम्मेदार ठहरा सकते हैं। प्राय: ये व्यक्ति गुमराह हो जाते हैं, अत्यन्त संवेदनशील अथवा घबरा जाते हैं, कमजोर एकाग्रता अनिश्चितता आदि लक्षण दिखायी देते हैं।

शारीरिक प्रतिक्रियाओं में ह्रदयदर का बढ़ना, स्पंदन, चक्कर आना, कमजोरी, सर्दी, सरदर्द,उल्टी आना, सदमा, बहोशी, पसीना आना तथा थकावट आदि शामिल है। लगातार भावनात्मक प्रतिक्रियाओं के फलस्वरूप व्यक्ति में उदासी, चिड़चिड़ापन, चिन्ता, परेशान होना, असहायता, निराशावाद, क्रोध, भय, अपराध बोध और नकारात्मकता आदि की अनुभूति भी हो सकती है।

अध्ययनों में इस तरह की दुर्घटना के प्रति खाने व सोने में कठिनाई, दूसरों से विचारात्मक मतभेद, सामाजिक परिस्थितियों से कटाव और सामाजिक गतिविधियों में अरूचि आदि प्रतिक्रियाएं भी देखने मिलती है।

संकट में तनाव के प्रति सामान्य अनुक्रियाएं संक्षेप में निम्न हो सकती है-

1- कुछ समय के लिए वास्तविकता से संपर्क खो देना या स्मृतिभुग
2- मांसपेशीय तनाव
3- निद्रा संबंधित समस्याएं
4- कमजोर पाचन क्षमता
5- दर्द, संक्रमण व त्वचीय रोग
6- चिन्ता, तनाव, अवसाद
7- समस्याओं से भागना
8- परिस्थतियों से पलायन
9- गुस्सा, शर्म, अपराध-बोध, चिढ़, रिवझ।
10- तर्कणा, एकाग्रता, निर्णयन क्षमता संबंधित परेषानियां
11- आत्म-विश्वास व आत्म - सम्मान के भाव में कमी
12- किसी कार्य को ढंग से नहीं करना
13- अकेले रहना, स्वयं को सबसे अलग कर लेना
14- अत्यधिक संवेदनशील, छोटी छोटी बातों पर भड़क उठना, बेवजह गुस्सा करना हर बात को नकारात्मक रूप से सोचना

6.8 संकट हस्तक्षेप के लिए दिशा निर्देश

1 संकट परिस्थिति व अनुक्रिया का सही आंकलन व मूल्यांकन सबसे महत्वूपर्ण है क्योंकि इसी से सहायता के लिए संयुक्त हस्तक्षेप निर्धारित होता है एक गलत निर्णय प्राणघातक भी हो सकता है। समस्या चाहे समान हो पर हर व्यक्ति भिन्न होता है इसलिए किसी भी मूल्यांकन का अतिसामान्यीकरण करने से बचना चाहिए।

2 शीघ्र सोचन व निर्णय लेने की क्षमता व सृजनातमकता आवश्यक है एक खुला दिमाग व हर उपलब्ध सहायता में संभवना को खगालने व उपयोग करने की क्षमता एक संकट हस्तक्षेप प्रदाता के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

3 संकट हस्तक्षेप परामर्शदाता में धीरज व शांत रहने का गुण आवश्यक है संकट हस्तक्षेप सब लोगों के लिए नहीं है इसमें वस्तुनिष्ठता का कोई स्थान नहीं है। सहानुभूति पूर्ण दूसरे की समस्या को उसके दृष्टिकोण से समझने की आवश्यकता है।

4 संकट हस्तक्षेप हमेशा कम समय के लिए होता है व इसमें विशेष लक्ष्य या विशेष व्यवहारों को निर्धारित कर अत्यन्त कम समय में प्राप्त करना होता है।

5 संकट हस्तक्षेप का उद्देश्य समस्या का प्रबंधन है। ना कि समस्या का विष्लेशण।

6 संकट हस्तक्षेप क्रिया अभिविन्यासित व परिस्थिति केन्द्रित है।

7 संकट हस्तक्षेप में परामर्शदाता, परामर्शग्राही को विशेष घटना के परिणामों के लिए तैयार करता है व घटना का प्रभाव बताता है व उसके परिणामस्वरूप उत्पन्न व्यवहरात्मक व सांवेगिक परिणामों को अपनी इच्छा अनुसार परिवर्तित करने का रास्ता बताता है।

8 संकट हस्तक्षेप का लक्ष्य अन्वेकशाणात्मक प्रश्न पूछने के स्थान पर वर्तमान परिस्थितियों में लाने पर केन्द्रित होता है।

9 परामर्शदाता को इस समय परामर्शग्राही को बदलने के प्रयास के स्थान पर एक उत्प्रेरक की भांति कार्य करना चाहिए जो उसके अपने स्रोतों की खोज व लक्ष्य प्राप्ति में उन स्रोतों के उपयोग की प्रभावकारी रूप से बता सकें।

10 संकट सुरक्षा व नियंत्रण के अभाव से मुक्त होता है। यहां परामर्श दाता का कर्तव्य है कि वह परामर्शग्राही के आंतरिक व बाहरी वातावरण को फिर से सुरक्षित शक्तिशाली व नियंत्रण युक्त बनाने के लिए कार्य करें।

11 संकट हस्तक्षेप किसी आपात के पश्चात का पहला हस्तक्षेप होता है इसलिए हस्तक्षेप का लक्ष्य हमेशा सहयोग प्रदान करना होता है। तुरन्त दुर्घटना से निकलने की योग्यताओं को दुरस्त करना व संकट से पहले ही परिस्थिति को बहाल करना होता है।

12 संकट हस्तक्षेप प्रदान करने वाले व्यक्ति का विभिन्न सहयोग तंत्रों से परिचित व उनके साथ मिलकर काम करना आना चाहिए जैसे किसी आपात की घड़ी में लोगों को सुरक्षित स्थान पर भेजना आदि।

13 परामर्शदाता को व्यक्ति को पूर्णता में देखना चाहिए उसकी भावानात्मक व संज्ञात्मक कार्यात्मक को अलग करके न ही ताकि वह उसे उपलब्ध सहायक स्रोतों का पूर्णत: इस्तेमाल की अन्तर्दृश्टि प्रदान कर सकें।

14 संकट हस्तक्षेप का कार्य करने वाले व्यक्ति को परामर्श का अनुभव और संकट हस्तक्षेप प्रशिक्षण से युक्त होना चाहिए।

6.9 संकट अवस्थाएं

संकट पूर्ण घटना से गुजरे व्यक्ति की प्रतिक्रियाओं में समय के साथ बदलाव आता है। व्यक्ति की चरित्रगत विशेषताएं स्वयं घटना व भौगोलिक वातावरण जिसमें संकट घटना घटी है इन बदलावों को प्रभावित करते है। शोधों से प्राथमिक रूप से तीन अवस्थाओं का पता चला है। हलांकि यह अवस्थाएं चक्रिय प्रगति प्रर्दषित करती है। जब व्यक्ति घटना को याद करता है तो वह पुन: प्रथम तीक्ष्ण अवस्था में पुहंच जाता है यह अवस्थाएं है-

1 तीक्ष्ण अवस्था - किसी अभिघातक घटना के पश्चात उसके प्रतिउत्तर में होने वाली प्रारंभिक संकट प्रतिक्रियाएं सामान्यत: शारीरिक व मनोवैज्ञानिक क्षेत्रों से संबंधित होती है। यह सामान्य प्रतिक्रियाएं है। अत्यधिक चिंता, आशाहीनता, तीव्र डर, दुख:, भ्रांति, दर्द, आघात, अविश्वास।

तीक्ष्ण अवस्था में व्यक्ति अव्यवस्थित लगता है।

2 बाहरी समायोजन अवस्था - कुछ लोगों के लिए यह दूसरी अवस्था संकट घटना के 24 घंटे बाद प्रारम्भ हो जाती है वह इस अवस्था में बाहरी दैनिक क्रियाकलापों में लगकर नियंत्रण प्राप्त करने के कोशिश करते है लेकिन इसका अर्थ यह कदापि नहीं समझना चाहिए कि जो व्यक्ति बाहर से सामान्य क्रिया कलापों पर लौट गया है वह अन्दर से भी शांत है आंतरिक रूप से वह बहुत गहराई तक प्रभावित होता है। कुछ लोग अपने आप को हर प्रकार की मदद से पुर्णत समाज व व्यक्तियों दूर कर लेते है व अकेले रहते है।

इस अवस्था में व्यक्ति में तनाव व बदलती प्रतिक्रियाएं देखने को मिलती है। जो ट्रोमा के होते हुए भी सामान्य जीवन में वापस आने के प्रयास को इंगित करती है।

3 एकीकरण अवस्था

इस अवस्था में व्यक्ति पुन: इस घटना परिस्थिति के स्वयं के अर्थ निकालने व उसे समझने की कोशिश करता है इसमें सबसे महत्वपूर्ण कार्य दूसरों पर दोशारोपण या स्वयं के प्रति अपराध बोध से बाहर निकलना होता है व्यक्ति शीघ्र ही संकट के प्रभाव को कम करने के लिए आवश्यक परिवर्तन करता है जो व्यक्ति जितनी जल्दी घटना के पूर्व व पश्चात के अपने अन्दर व वातावरण में परिवर्तनों को पहचान लेते हैं व शीघ्र ही एकीकरण कर लेते है।

कुछ व्यक्ति इस ट्रोमा से बाहर निकलने के प्रयास के दौरान कुछ व्यक्ति बार बार इस अवस्था में चक्रीय रूप से घूमते रहते है। कुछ व्यक्ति एक ही एक से दूसरी अवस्था में अत्यन्त तेजी से गुजरते है व कुछ व्यक्ति एक अवस्था तक भी बीच में गायब कर जाते है इसलिए बाद में यह व्यक्ति स्वयं को बहुत अधिक पराजित हरा हुआ पाते है।

6.10 संकट मूल्यांकन मॉडलस व हस्तक्षेप

मुख्य रूप से संकट मूल्यांकन के लिए तीन विधियां प्रमुख है-

1 मानकीकृत सूची

2 सामान्य व्यक्तित्व परीक्षण - जिनके परिणामों की व्याख्या संकट के संदर्भ में की जाती है।

3 परामर्शग्राही साक्षात्कार

इन विधियों में से साक्षात्कार सबसे सामान्य रूप से उपयोग में ली जाने वाली विधि है यहां कुछ मॉडलस का वर्णन है जिनमें साक्षात्कार का उपयोग प्राथमिक मूल्यांकन उपकरण के रूप में हुआ है।

1 गिलीलेंड का 6-सोपान मॉडल -

इसमें मॉडल 3 श्रवण व तीन क्रिया सोपान है। यह एक उपयोगी संकट हस्तक्षेप मॉडल है।सहानुभूति, सम्मान, स्वीकार्यता, अनिर्णायक, समझना व देख-भाल पूर्ण व्यवहार श्रवण सोपान के मुख्य तत्व है। क्रिया सोपान, अनिर्देशित व सहयोग पूर्ण तरीका है जो परामर्शग्राही व उसके वातावरण में उपलब्ध सहायता को उपयोग करने में सहायता करता है।

1 अवस्थाओं के तीन सौपान श्रवण

1 समस्या को परिभाषित करना।

2 परामर्शग्राही की सुरक्षा का प्रबंध करना।

3 सहायता उपलब्ध करना।

क्रिया अवस्था के तीन सौपान

1 उपलब्ध विकल्पों को जांचना

2 योजना बनाना।

3 वचनबद्धता प्राप्त करना।

2 ट्राइएज मूल्यांकन तंत्र

यह विधि का विकास मायर ने 2001 में किया। मायर के अनुसार संकट प्रतिक्रियाओं को तीन कार्यक्षेत्रों में बांटना आवश्यक है -

1) भावनात्मक कार्यक्षेत्र - इसमें संवेग संबंधित प्रतिक्रियाएं जैसे गुस्सा या क्रोध अक्रामता, चिन्ता, डर या भय,दु:ख व उदासी सम्मिलित है।

2) संज्ञानात्मक कार्यक्षेत्र - इसमें हमारी सोच, विचार संबंधित प्रतिक्रियाएं सम्मिलित है जैसे धमकी, हानि, अतिक्रमण या उल्लंघन शामिल है।

3) व्यवहरात्मक कार्यक्षेत्र - इसमें क्रियाएं सम्मिलित है इसमें उपागम प्रतिहार व्यवहार व गतिहिनता सम्मिलित है, जो रचनात्मक व कुसमायोजी दोनों मे से कछ भी हो सकती है।

मेयर 2001 ने 4 जीवन वीमाओं का भी वर्णन किया जो संकट द्वारा प्रभावित होती है वे है शारीरिक, मनोवैज्ञानिक सामाजिक व नैतिक या आत्यात्मिक जीवन वीमा।

सात सोपान मॉडल - वह सात सोपान मॉडल रॉबटस ने 1990 में दिया इसके सात सोपान निम्न है -

1 खतरे का मूल्यांकन व मानसिक स्वास्थ्य -इसमें खतरे का जैविक मनोवैज्ञानिक व सामाजिक रूप से मूल्यांकन किया जाता है। साथ ही आत्मधाती, समाजघाती मनोवेज्ञानिक खतरा, चिकित्सकीय ध्यान, एल्कोहल व नषे का इस्तेमाल तथा नकारातमक समायोजी प्रविधियों का अध्ययन किया जाता है साथ ही प्रतिरोधक क्षमता, रक्षात्मक कारक, परिवार व अन्य सहयोगी तंत्रों का अध्ययन किया जाता है।

2 संबंध स्थापित करना-इसमें मनोवैज्ञानिक सम्पर्क व संबंध स्थापित होता है। परामर्शदाता स्वीकार्यता व सम्मान देकर परामर्शग्राही के साथ उपचारात्मक संबंध स्थापित करता है परामर्शदाता का तटस्थ व अनिर्णायक व्यवहार इसमें महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है।

3 प्रधान समस्याओं की पहचान -इसमें परामर्श दाता समस्या व संकट की सभी वीमाओं को जांचता व परिभाषित करता है व चुनौतियों व मुख्य समस्याओं की पहचान करता है।

4 भावनाओं को संबोधित करना - परामर्शदाता ध्यानपूर्वक परामर्शग्राही को सुनकर, उत्साहवर्धक वाक्यों का इस्तेमाल कर उसे प्रतिक्रिया करने, स्वयं को व्यक्त करने के लिए प्रेरित करता है व उन व्यक्त बातों से भावनाओं व संवेगों का अन्वेशण करता है भावनाओं का परिवर्तन (reflection) व कही गई बातोंका भावानुवाद भी भावनाओं व संवेगों को जानने में सहयोग करते है।

5 वैकल्पिक समायोजी विधियां खोजना -इसमें परामर्शदाता भूतकालीन, धनात्मक, समायोजी विधियों व विकल्पों की खोज व जांच करता है। वह परामर्शग्राही को एक साधन संपन्न व प्रतिरोधक क्षमतापूर्ण व्यक्ति के रूप में देखता है जिसकी संभावित क्षमताएं व विकल्प इस प्रक्रम में सहायक होसकते है। संकट हस्तक्षेप देने वाला कार्यकर्त्ता सृजनात्मकता व लचीलेपन की क्षमता युक्त होना चाहिए ताकि वह उपलब्ध सहायक संसाधनों का प्रभावी उपयोग कर सके।

6 कार्य योजना बनाना - सब चीजोंका पता लगा अब सहायता के लिए तैयार कार्य योजना का क्रियान्वयन किया जाता है।

7 **प्रक्रम समाप्ति व दुबारा मिलना -**प्राथमिक हस्तक्षेप कुछ समय पश्चात दुबारा मिलने की व्यवस्था की जाती है। ताकि परामर्शदाता आष्वस्त हो सके की संकट समाप्त हो गया है।

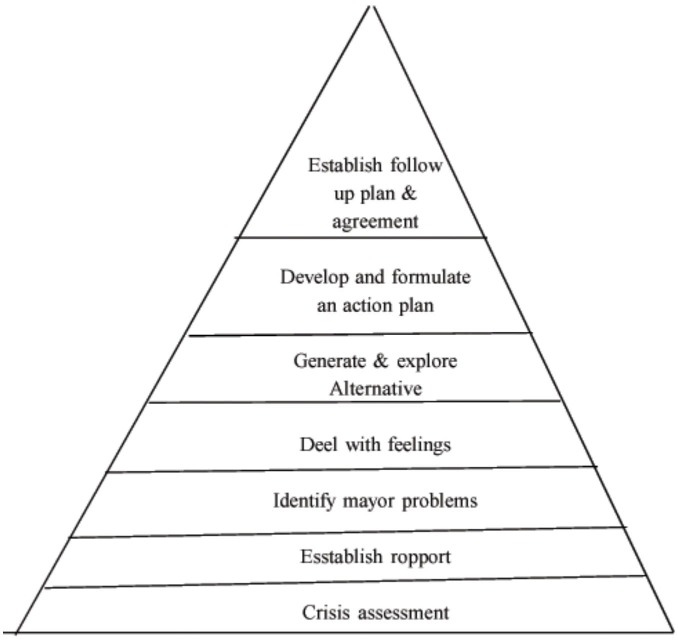

Robert 7 stage ciris intervention model

6.11 सारांश

संकट हस्तक्षेप एक आकस्मिक मनोवैज्ञानिक चिकित्सा है। जिसका उपयोग पीड़ित व्यक्ति को मनोवैज्ञानिक ट्रोमा से बाहर निकालने के लिए किया जाता है यह वास्तव में परामर्श ना होकर एक तुरंत सहायता विधि है जिसके अल्पकालीन व विशिष्ट लक्ष्य होते है संकट हस्तक्षेप का मुख्य उद्देश्य उस परिस्थिति में तुरंत सहायता प्रदान करना है। संकट परिस्थिति दुर्घटना, मृत्यु, तलाक, बीमारी, प्राकृतिक आपदा किसी भी कारण से उपस्थित हो सकती है।

संकट में व्यक्ति शारीरिक, मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रियाएं व्यक्त करता है जैसे निंद्रा संबंधी परेषानी, डर, अवसाद,चिन्ता, क्रोध, पेशीय तनाव, कमजोर पाचन, क्षमता, काम में मन न लगना इत्यादि। संकट एवं अचानक प्रेरित घटना या दीर्घकालीन तनाव का परिणाम है जिसमें व्यक्ति अत्यधिक दुख कठनाई खतरा,हानि, अपमान, अनियंत्रण व दैनिक क्रियाकलापों में अवरोध महसुस करता है।

संकट प्रक्रम की तीन अवस्थाएं है-

1 तीक्ष्ण

2 बाहरी समायोजन

3 एकीकरण

संकट हस्तक्षेप के लिए मूल्यांकन के लिए तीन मॉडल्स कावर्णन किया गया है

1 गिलीलैंड का छ: सोपान मॉडल

2 हाइएज मूल्यांकन तंत्र

3 रोबर्ट का सात सोपान मॉडल

6.12 बोध प्रश्न

1 संकट हस्तक्षेप से आप क्या समझते हैं? यह सामान्य परामर्श से किस प्रकार भिन्न है?

2 संकट हस्तक्षेप की विशेषताओं पर प्रकाश डालिये?

3 संकट हस्तक्षेप के समय परामर्शग्राही की प्राथमिक प्रतिक्रियाओं का वर्णन कीजिए।

4 संकट के प्रकारों का वर्णन कीजिए।

5 संकट हस्तक्षेप की आवश्यकता किन किन परिस्थितियों में हो सकती है?

6 संकट हस्तक्षेप के उद्देश्यों की संक्षेप में लिखिए?

7 संकट हस्तक्षेप के लिए आवश्यक दिशा-निर्देशों का वर्णन कीजिए।

8 संकट अवस्थाओं को समझाइये

6.13 संदर्भ ग्रंथ

1 Counseling: Theory and practice Ricky L. George and Therese S. Cristiani

2 A Practical approach to trauma (Empowering intervention) – Priscilla Dass - Brailsford
3 Crisis Counseling intervention– Mark Walsh MBACP
4 Crisis intervention and pretention – Jack Son – Chey Erofrd
5 0Crisis intervention handbook: Assessment, treatment and research – A.R.Roberts
6 Trauma and Recovery – J.L.Herman
7 Crisis intervertion :theory and methodology D.Aguilera
8 Assessment for crisis intervention: Triage assessment - Myer
9 An approach to community Mental Health - Coplan
10 Principles of preventive psychiatry – Caplan
11 Medical Crisis couselling : Short term therapy for long term illness I.Pollin

इकाई – 7

पुर्नवास परामर्श

इकाई की रूपरेखा

7.1 उद्देश्य
7.2 पुनर्वास परामर्श : प्रस्तावना
7.3 शारीरिक चुनौति युक्त व्यक्तियों का परामर्श
7.4 मानसिक मंदता युक्त व्यक्तियों का निर्देशन एवं परामर्श
7.5 प्रतिभाशाली एवं सृजनशील व्यक्तियों का निर्देशन एवं परामर्श
7.7 सारांश
7.8 बोध प्रश्न

7.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- पुनर्वास परामर्श की संकल्पना बता सकेंगे
- शारीरिक चुनौति युक्त बालकों/ व्यक्तियों के परामर्श की व्याख्या कर सकेंगे।
- मनसिक मंदतायुक्त व्यक्तियों को निर्देशन एवं परामर्श बता सकेंगे।
- प्रतिभाशाली बालकों एवं सृजनशील बालकों के निर्देशन एवं परामर्श की व्याख्या कर सकेंगे।

7.2 पुनर्वास परामर्श : प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपने परामर्श के विभिन्न पहलुओं को सीखा। इस इकाई का केन्द्र है पुनर्वास, परामर्श, जिसमें हम विशिष्ट आवश्यकता वाले बालकों एवं व्यक्तियों के निदेशक एवं परामर्श पर चर्चा करेंगे। इस इकाई में चर्चा के लिये मुख्यत: तीन श्रेणी के विशिष्ट व्यक्तियों को सम्मिलित किया गया है। शारीरिक अक्षमता युक्त व्यक्ति, मानसिक मंदता युक्त व्यक्ति एवं उच्च बौद्धिक समता युक्त व्यक्ति। इकाई की भाषा यथासंभव सरल एवं सुगम रखी गयी है।

7.3 प्रस्तावना

बालकों, किशोरों एवं वयस्क व्यक्तियों के शैक्षिक, व्यावसायिक, व्यक्तिगत एवं उपव्यावसायिक निर्देशन से सम्बन्धित अनेक प्क्षों पर पिछले अध्यायों में प्रकाश डाला गया। वर्णित तथ्यों, विचारों, विधियों आदि का सम्बन्ध सामान्य की श्रेणी में आने वाले व्यक्तियों से है। कुछ लोग सामान्य व्यक्तियों से अनेक दृष्टियों से भिन्न होते हैं, उनकी समस्याएं नितान्त पृथक होती है अत: उनकी निर्देशन सम्बन्धी आवश्यकताएं भिन्न प्रकार की होती है। इन लोगों की भिन्नता का आधार जैविक एवं मानसिक दोनों ही हो सकता है। कुछ लोगों की शारीरिक रचना उनके सम्मुख अनेक प्रकार की चुनौतियां प्रस्तुत करती है अत: उनके निर्देशन कार्य में सम्मिलित प्रश्न और सम्बन्धित समाधान का स्वरूप अलग श्रेणी में रखे जाने योग्य होता है। उनके निर्देशन हेतु संसाधन अनेक विशिष्ट स्रोतों से संकलित किये जाने की आवश्यकता होती है। कुछ अन्य लोगों को शिक्षा, व्यवसाय और समायोजन के क्षेत्र में अपनी मन्द बुद्धि और अधिगम की मन्द गति के कारण सामान्य क्षमता वाले व्यक्तियों के बीच पिछड़ेपन की अपमानजनक अनुभूति का सामना करना पड़ता है। अपनी अपमानजनक दशा के कारण उनका जीवन-यापन कठिन हो जाता है। निर्देशन उनके लिए उपयोगी होता है किन्तु निर्देशन कार्यक्रम का संगठन उनकी विशिष्ट आवश्यकताओं के संदर्भ में किया जाना चाहिए। इसलिए उनके बारे में अलग से विचार करने की आवश्यकता है। शारीरिक और मानसिक चुनौतियां का सामना करने में अपनी क्षमता की कमी के कारण कठिनाई का अनुभव करने वाले व्यक्तियों से भिन्न व्यक्तियों की एक दूसरी श्रेणी भी होती है जो प्रतिभाशाली और सृजनशील होते हैं। अपनी बौद्धिक विशिष्टता, अधिगम की तीव्र गति, समस्याओं का त्वरित समाधान की क्षमता के कारण सामान्य व्यक्तियों के साथ समायोजित होने में, शिक्षा ग्रहण करने में और अच्छा परिवेश पाने में वंचित रह जाने पर उत्पन्न कुण्ठा की असाधारण दशा के कारण उनका व्यक्तित्व विकास बाधित हो जाता है। अत: ऐसे लोगों के लिए निर्देशन कार्यक्रम के सन्निहित तत्व उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप होने चाहिए। इस अध्याय में निर्देशन की अनेक विशिष्ट समस्याओं में से तीन को विचार हेतु चुना गया है।

7.4 शारीरिक चुनौती प्रापत व्यक्तियों का निर्देशन

कुछ व्यक्तियों में एक या अनेक आंगिक दोष पाये जाते हैं जिनके कारण उनका व्यवहार, जीवन-यापन के उनके साधन सामान्य व्यक्तियों से भिन्न होते हैं। सामान्य शब्दावली में उन्हें शारीरिक विकलांग कहा जाता है किन्तु, आधुनिक मनोवैज्ञानिकों एवं सामाजिक कार्यकत्ताओं की दृष्टि में ये लोग विकलांग नहीं है क्योंकि उनके पास सामथ्र्य की कोई कमी नहीं होती हैं इनको चुनौतियों का सामना करना पड़ता है किन्तु थोड़े से सहयोग के आधार पर अपनी शारीरिक चुनौतियों का सामना दृढ़तापूर्वक करके सफल होने मं इनकी सामथ्र्य की बराबरी सामान्य व्यक्तियों के लिए अकल्पनीय होती है। इसलिए इनकी समस्याओं को 'शारीरिक चुनौती कहना अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है। इनकी आवश्यकता किसी दयालु व्यक्तित्व से कृपा पाकर कृपापात्र बनने की नहीं होती है। इन्हें व्यवस्थित निर्देशन कार्यक्रम के माध्यम से उस सहयोग की आवश्यकता होती है जो निर्देशन के दर्शन और अभिमत के अनुसार इन लोगों का स्वाभाविक अधिकार है। जिस प्रकार सभी सामान्य व्यक्तियों का अधिकार है कि निर्देशनात्मक सहयोग के आधार पर वे अपना अधिकतम संभव विकास करें और आत्म सिद्धि प्राप्त करें उसी प्रकार शारीरिक

चुनौतियों का सामना कर रहे व्यक्तियों को भी कुछ विशिष्ट शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण, उप व्यावसायिक अधिगम एवं समायोजन के क्षेत्र में ऐसे निर्देशनात्मक सहयोग की आवश्यकता होती है जो इन्हें अपने सामथ्र्यों का अधिकाधिक उपयोग करने, समाज की उत्पादक, संतुष्ट और मानसिक रूप से स्वस्थ इकाई बनने की सक्षमता प्रदान करें।

शारीरिक चुनौती शारीरिक अक्षमताओं के कारण उत्पन्न होती है किन्तु सभी शारीरिक सुधारात्मक उपचार प्रणालियों द्वारा अनेक शारीरिक क्षमताओं को पुन: प्रतिष्ठित नहीं किया जा सकता है उनके रहते हुए पुनर्वास प्रक्रिया द्वारा व्यक्ति को अपनी अक्षमताओं के बावजूद प्रकट हुई चुनौती का सामना करने हेतु समर्थ बनाया जा सकता है। व्यक्ति अपनी सामथ्र्य को बटोरकर अक्षमताओं के रहते हुए भी जीवन को अधिकतम प्रभावशाली ढंग से व्यतीत कर सकता है।

शारीरिक चुनौती के विविध पक्ष - कोई भी व्यक्ति अपने समाज और आयुवर्ग के अन्य लोगों की भांति ही जीवनन्यापन करना चाहता है किन्तु शारीरिक अक्षमताओं द्वारा प्रस्तुत कीगयी चुनौतियों के कारण उसे अतिरिक्त प्रयत्न करने पड़ते है। शारीरिक अक्षमताओं का क्षेत्र अधापन, बहरापन, गू्ूगापन, मांसपेशीय रचना दोष या अपंगता, दु:साध्य रोग जैसे कैंसर, एड्स, गठिया, पोलियों, मिर्गी आदि से सम्बन्धित हो सकता हैं इनका व्यक्ति के जीवन पर प्रभाव समस्या के क्षेत्र और दोष की मात्रा से प्रभावित होता है। प्रत्येक व्यक्ति के सम्मुख प्रकट हुई चुनौती के कारण उत्पन्न होने वाली मानसिक समस्याएं व्यक्ति के लिए अद्वितीय होती है। इस अद्वितीयता के तीन पक्ष है -

1- अक्षमताओं से सम्बन्धित प्रथम मनोवैज्ञानिक समस्या यह है कि बाल्यावस्था में सम्पन्न होने वाले विकास कार्य कुप्रभावित और अवरूद्ध हो जाते हैं, अथवा, यदि अक्षमता व्यक्ति के जीवन में बाद में दुर्घटना आदि के कारण उत्पन्न हुई रहती है तो व्यक्ति के जीवन के अन्दर और बाहर अनेक व्यवस्थाएं विघटित हो जाती है। आरम्भिक का व्यावसायिक पुनर्वास सुनिश्चित करना होता है। इस सेवा के बारे में इससे पूर्व पुस्तक में अन्यत्र पर्याप्त वर्णन नहीं किया गया है क्योंकि पुनर्वास एक ऐसी सेवा है जो कि विशिष्ट समस्याओं के क्षेत्र में प्रदान की जाती है। इस अध्याय में आगे इस बिंदु का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है।

(vi) शारीरिक चुनौतियां व्यक्ति की पारिवारिक, सामाजिक और नागरिक जिम्मेदारियों और अधिकारों को प्रतिबंधित नहीं कर सकती है। ऐसे लोग अपने उत्तरदायित्वों और अधिकारों के अनुरूप कार्य कर सके इसे ध्यान में रखकर इन व्यक्तियों को इस दिशा में विकास हेतु निर्देशन सेवा प्रदान की जानी चाहिए।

(vii) शारीरिक अक्षमताओं और चुनौतियों के कारण व्यक्तित्व विकास एवं अन्तर्वेयक्तिक सम्बन्धों के विकास पर बुरा प्रभाव पड़ता है अत: माता-पिता और अध्यापकों के साथ सहयोग करके ऐसे प्रभावों को न्यूनतम किया जाना चाहिए।

पुनर्वास प्रक्रिया -

ऐसे लोगों के पुनर्वास के लिए, जिनके समक्ष शारीरिक अक्षमताओं के कारण चुनौतियां उत्पन्न होती है, व्यक्तिगत स्तर पर परामर्श देने से भी अधिक आवश्यक एक ऐसे मनोवैज्ञानिक परिवेश का विकास करना होता है, जिससे द्वारा वंचना क्षति/ हानि और अपमान से सम्बन्धित अनुभूतियों से बाहर निकलने में,

सहायता प्राप्त हो। इस दृ्ृष्टि से निर्देशन कार्मिकों (अध्यापक, परामर्शदाता, फिजियोथिरेपिस्ट) की चुनौती का सामना कर रहे व्यक्ति के अतिरिक्त उन लोगों के साथ भी अन्तक्रिया होनी चाहिए जो कि उस व्यक्ति की देखभाल में विभिन्न रूपों में सहायक होते हैं। इन अन्य लोगों में जीवन साथी, परिजन, मित्र एवं सेवायोजकों की भूमिका महत्वपूर्ण है। पुनर्वास प्रक्रिया के छः तत्व होते हैं -

1- व्यक्ति के साथ परामर्शदाता द्वारा मानवीय सम्बन्धों की स्थापना,

2- शारीरिक पुनः प्रतिष्ठापन,

3- मानसिक पुनः प्रतिष्ठापन,

4- सकारात्मक उद्देश्यपूर्ण क्रियाएं

5- परामर्शन, एवं

6- शारीरिक चुनौती का सामना करने वाले अन्य व्यक्तियों के साथ सम्बन्ध।

(1) परामर्शदाता द्वारा व्यावसायिक मानवीय सम्बन्धों की स्थापना - परामर्शदाता द्वारा शारीरिक चुनौती का सामना कर रहे व्यक्ति के साथ व्यावसायिक ढंग से मानवीय सम्बन्धों की स्थापना महत्वपूर्ण सोपान है। परामर्शदाता अपने व्यवहार से ऐसा प्रदर्शित करता है कि वह वस्तुतः चिन्तित है, उसकी रूचियां दिखावा नहीं हैं, वह उस व्यक्ति का सम्मान करता है, उसे क्लायंट या केस (एक और मरीज) के रूप में नही देख रहा है। परामर्शदाता के ऐसे व्यवहार के कारण व्यक्ति में सकारात्मक एवं सहयोगात्मक प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है। परामर्शदाता द्वारा अपनी सम्मानजनक, लगावपूर्ण एवं आश्वस्त करने वाली अभिवृत्ति के बार-बार संप्रेषित किये जाने से व्यक्ति का पुनर्वास के लिए अभिप्रेरणा का स्तर ऊँचा बना रहता है। इसके विपरीत पारस्परिक सम्मान के अभाव के कारण पुनर्वास के लक्ष्य की प्राप्ति में बाधा आती है।

शारीरिक, मनोवैज्ञानिक , एवं व्यावसायिक पुनर्वास की प्रक्रिया दीर्घ अवधि तक चलती रहती है अतः अन्तरवैयक्तिक सम्बन्धों के जैसे प्रारूप को विकसित किया जायेगा, वैसी ही मानवीय अनुभूतियां प्रकट होगी और पुनर्वास कार्य सहजता या कठिनाई के साथ पूरा होगा।

(2) शारीरिक पुनः पुनः प्रतिष्ठापन- शरीर के अंगों की क्षति को स्वास्थ्य तकनीकी की प्रगति के माध्यम से बहुत हद तक ठीक करना संभव है। प्लास्टिक सर्जरी या कॉस्मेटिक सर्जरी शारीरिक कुरूपता को दूर करने में सहायक सिद्ध हो सकती है। शारीरिक अंगों और सौंदर्य का पुनर्निर्माण व्यक्ति के आत्म -प्रतिबिम्ब को सुधारने में सहायक होता है, व्यक्ति के अपने बारे में अर्द्ध- मानव जैसे प्रत्यक्षण को दूर करने में सहायता मिलती है। किन्तु प्रायः यह देखा गया है कि व्यक्ति अपनी शारीरिक अक्षमता को दूर करने के लिए किये जाने वाले प्रयत्न का विरोध करते हुए वे जैसे है वैसे ही बने रहना चाहते हैं। ऐसा विरोध उनकी निराशा का परिचायक भी हो सकता है किन्तु शारीरिक पुनः प्रतिष्ठापन सम्पन्न होने के पश्चात उनके आत्म प्रत्यक्षण में सुधार होता है और मनोवैज्ञानिक तथा व्यावसायिक पुनर्वास की दिशा में सहायता मिलती है।

(3) मनोवैज्ञानिक पुनः प्रतिष्ठापन - कृत्रिम अंगो को स्वीकार करने के पश्चात अनेक व्यक्तियों में ऐसा पाया गया है कि जब उनके कृत्रिम अंगों को खराब हो जाने बदलना होता है तो बहुधा वे अपने पुराने अंग

को ही अपनाये रखना चाहते है क्योंकि कृत्रिम अंग उनके अभाव की पूर्ति इस रूप में करता है कि उनके जीवन में कृत्रिम अंग वास्तविक अंग का स्थान मनोवैज्ञानिक रूप में भी ले चुके होते हैं। आधुनिक तकनीकों की सहायता बने कृत्रिम अंग मनोवैज्ञानिक क्षति (अंग के अभाव का बोध) दूर करने में सहायक होते हैं।

(4) उद्देश्यपूर्ण क्रियाएँ - अपरिवर्तनीय बीते हुए दिनों के प्रभावों को समाप्त करने के लिए, विषाद की अवस्था को दूर करके आशा और उत्साह स्थापित करने हेतु, और शीघ्रातिशीघ्र पुनर्वास की प्रक्रिया पूरी करने के लिए शारीरिक अंग की क्षति की अभावपूर्ति (कृत्रिम अंग प्रतिष्ठापन दूरी) के पश्चात व्यक्ति को जितनी शीघ्रतापूर्वक उचित गतिविधियों में सम्मिलित कर लिया जाय उतना ही अच्छा होता है। इन कार्यों को करते समय व्यक्ति को निरन्तर उपयुक्त एवं वास्तविकतापूर्ण प्रोत्साहन तथा आवश्वासन दिया जाना चाहिए। व्यक्ति को अपने संसाधनों के मूल्यांकन, जीवन के लक्ष्यों के पुनर्निधारण और विकास के लिए व्यक्ति का अभिप्रेरित होना और कार्य में संलिप्त हो जाना आवश्यक है।

(5) परामर्श - शारीरिक क्षति के कारण जब व्यक्ति की देखभाल की मात्रा में वृद्धि होती है तब उसके अन्दर अन्य लोगों पर निर्भर होने की प्रवृत्ति विकसित हो जाती है। निर्भरता की प्रवृत्ति के पुनर्वास में बाधक होती है अत: परामर्शदाता को मनोपचारात्मक प्रणालियों की सहायता से इस प्रवृत्ति को दूर करना चाहिए। नेफ्फ के अनुसार परामर्शदाता को व्यक्ति में उपयुक्त अनुकूलनात्मक व्यवहार उद्दीपन करना चाहिए जिससे व्यक्ति अपने अहं और कार्य निष्पादन में अन्तर स्थापित कर पाये, ऐसा न हो कि व्यक्ति कार्य से दूर रहे और अहं ही सब कुछ हो जाये।

(6) शारीरिक चुनौती का सामना कर रहे अन्य व्यक्तियों के साथ सम्बन्ध - शारीरिक क्षति या अक्षमता के कारण जब व्यक्ति शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक एवं व्यावसायिक चुनौतियों का सामना कर रहा होता है उस समय उस श्रेणी के अन्य व्यक्तियों के साथ सम्पर्क का स्थापित होना दो प्रकार से लाभदायक होता है (i) व्यक्ति को अपनी श्रेणी के अन्य समायोजित व्यक्तियों के माध्यम से अनेक प्रकार के व्यवहारों का अधिगम करने का अवसर प्राप्त होता है। तथा (ii) निराशा, तनाव आदि के संदर्भ में समूह मनोपचार जैसा लाभ प्राप्त होता है।

7.5 मानसिक मन्दन एवं मन्थर गति से अधिगम करने वाले व्यक्तियों का निर्देशन

किसी भी व्यक्ति के शैक्षिक, व्यावसायिक एवं वैयक्तिक समायोजन हेतु दिशाओं में विकास सम्बन्धी लक्ष्यों का पूरा होना आवश्यक है। विकास परिपक्वता और अधिगम का प्रतिफल होता है। अधिगम क्रियाओं के क्षेत्र में यदि व्यक्ति किसी भी कारण से पिछड़ जाता है तो विकास अधूरा रह जाता है, व्यक्ति जीवन के लक्ष्यों को प्राप्त करने में विफल रह जाता है और समायोजन कुप्रभावित हो जाता है। अधिगम के लिए अधिगम एवं प्रशिक्षण की उपयुक्त तकनीकों एवं परिस्थितियों की रचना होनी चाहिए लेकिन अधिगम के लिए सबसे अधिक आवश्यक तत्व बुद्धि हैं बुद्धि मन्द होने के परिणामस्वरूप व्यक्ति की अधिगम की गति मन्द/मन्थर हो जाती है, सरलतापूर्वक आवश्यक क्षमताओं, कुशलताओं, निपुणताओं,

योग्यताओं एवं विशेषताओं का विकास नही हो पाता हे, और समायोजन की दशा स्थापित नहीं हो पाती है।

मन्द बुद्धि : स्वरूप एवं विशेषताएँ - अमेरिकन साइट्रिक एसोसिएशन द्वारा दी गई परिभाषा के अनुसार मानसिक दुर्बलता निम्न सामान्य बौद्धिक प्रकार्य की दशा है जो कि विकासात्मक अवस्था में उत्पन्न होती है जिसका सम्बन्ध अधिगम और सामाजिक समायोजन या परिपक्वता, अथवा दोनों की क्षति होने से है।''

"Mental retardation is subnormal general intellectual functioning which originates during the developmental period and is associated with impairment of either learning and social adjustment or maturation, or both."

मानसिक रूप में मन्द और मन्थर गति वाले व्यक्तियों की विशेषताओं और इनकी विशेषताओं के प्रति अन्य महत्वपूर्ण व्याक्तियों की प्रतिक्रियाओं में सामान्य बुद्धि वाले व्यक्तियों की तुलना में अन्दर पाया जाता है। मन्द व्याक्तियों का ध्यान केन्द्रित नहीं हो पाता है, वाचिक अधिगम का अच्छी प्रकार विकास नही हो पाता है, मन्दता तीव्र होने पर भाषा और वाणी का विकास बाधित हो जाता है, अमूर्त चिन्तन की क्षमता कम होती है, संप्रत्यय निर्माण भली प्रकार नहीं हो पाता हैं मांशपेशीय सहयोग सहयोग प्राय उचित बना रहता है किन्तु शैक्षिक और सामाजिक भागीदारी में कठिनाई होती है। साधारण नियमों को वह सरलतापूर्वक सीख नहीं पाता है जिसके कारण अस्वीकार्य व्यवहार करने और खतरनाक गतिविधियों में इनके सम्मिलित होने का खतरा बढ़ जाता है।

मन्द बुद्धि व्यक्तियों या मन्थर गति से अधिगम करने वाले बच्चों के प्रति अन्य लोगों का व्यवहार उपेक्षापूर्ण होता है। समवयस्क या अन्य लोग प्राय: इन्हें चिढ़ाते रहते हैं, उनका दुरूपयोग (यहॉ तक कि यौनिक दुरूपयोग) करते हैं बहुधा अन्य लोगों का व्यवहार इनके प्रति क्रूरतापूर्ण होता है। अन्य लोगों के विपरीत माता-पिता का व्यवहार अपने मन्द बुद्धि बच्चे के प्रति ऐसा होता है कि वे अपने बच्चों की बुद्धि की कमी को स्वीकार नहीं करते हैं। ऐसी अभिवृत्त के कारण (i) माता-पिता बच्चों के सम्मुख ऊँचे लक्ष्य स्थापित कर देते हैं जिन्हें प्राप्त कर पाना उनके लिए कठिन होता है और विफलता एवं कुण्ठा की संभावना बढ़ जाती है, तथा (ii) अपने मन्द बुद्धि बच्चे के शैक्षिक व्यावसायिक एवं व्यक्तिगत विकास के लिए उन्हें जैसे प्रयत्न करने चाहिए अथवा जिन विशिष्ट शिक्षा प्रणालियों का उपयोग करना चाहिए, वैसा उनका प्रयास नहीं होता है। जब एक मन्द बुद्धि व्यक्ति तिरस्कृत होता है, चिढ़ाया जाता है, अन्य सहपाठियों के साथ बराबरी नहीं कर पाता है, लोगों की अपेक्षाओं पर खरा नहीं उतरता है तब उसका व्यवहार आक्रामक हो जाता है।

सीमावर्ती अथवा सौम्य मन्दबुद्धि बच्चे अन्य श्रेष्ठ छात्रों के बीच में महत्व प्राप्त करने के लिए या उनकी मैत्री और सहयोग अर्जित करने के लिए अतिरिक्त प्रयास करते हुए पाये जाते है। ऐसे प्रयासों में मॅहगे उपहार देना और उपहार आदि भेंट करने के लिए पैसे चुराना भी उनकी आदतों का अंग बन जाता है।

मन्द बुद्धि व्यक्तियों की विशेषताओं में मानसिक ह्रास की अलग-अलग मात्राओं के कारण व्यापक अन्तर पाया जाता है अत: उनकी निर्देशन और परामर्शन सम्बन्धी आवश्यकताए एवं पुनर्वास कार्यक्रम

की रूपरेखा तथा सफलता की संभावना पृथक-पृथक होती है। ए पी ए (A P A) ने बुद्धि लब्धांक के आधार पर बुद्धि मन्दन को पाँच श्रेणियों में विभाजित किया है। यहाँ यह ध्यान दिलाना आवश्यक प्रतीत होता है कि बुद्धि लब्धांक का मापन सदैव बुद्धि की वास्तविक कमी का मापन नहीं होता है क्योंकि जिस प्रकार बुद्धि की मात्रा का मापन किया जाता है उसमें दोषपूर्ण श्रवण, दृष्टि, अपंगता आदि के कारण बौद्धिक क्षमता रहते हुए भी बुद्धि लब्धांक कम प्राप्त होता है, तथापि बुद्धि लब्धांक (I Q) के आधार पर कम बुद्धि वाले लोगों का श्रेणीयन साधारणत: उपयोगी होता है। पाँच श्रेणियाँ अधोवर्णित हैं-

(1) सीमावर्ती बौद्धिक क्षमता (Borderline Intelligence)- इनकी बुद्धि लब्धांक सीमा 68-83 निर्धारित की गयी है। प्राय: इनकी गिनती मन्द बुद्धि सम्बन्धी गणना में नहीं की जाती है किन्तु सामान्य बुद्धि वाले व्यक्तियों की तुलना में ऐसी श्रेणी लोगों की अधिगम की गति मन्द (slower in learning) होती है तथा जटिल विचारों के अधिगम और सामान्यीकरण की क्षमता कम होती है। इन लोगों के मानसिक मन्दन का प्रभाव वाचिक अधिगम के क्षेत्र होता है किन्तु क्रियात्मक या मांसपेशीय अधिगम और निष्पादन पर कोई हानिकारक प्रभाव नहीं पड़ता है। ऐसे व्यक्तियों का सामाजिक समायोजन पर्याप्त उपयुक्त होता है तथापि सहयोगी अभिकरणों की सहायता इनके लिए वांछित होती है।

(2) सौम्य मानसिक मन्दन (Mild mental retardation)- इस श्रेणी की बुद्धि लब्धाक सीमा 50-69 मानी गयी है। वयस्क व्यक्ति के रुप में इनकी मानसिक क्षमता 8 से 11 वर्ष आयु वर्ग के बच्चों के समान पायी जाती है। साधारणत: इसमें शारीरिक और मस्तिष्क विकृति नहीं पायी जाती है। साधारणत: इन्हें अपने कार्यों और व्यवहारों के परिणाम का पूर्वानुमान नहीं होता है। आरम्भ में निदान हो जाने पर माता-पिता के सहयोग से विशिष्ट शैक्षिक कार्यक्रमों में प्रशिक्षित होकर इस श्रेणी के अधिकतर लोगों में शैक्षिक, व्यावसायिक और समायोजनात्मक सामथ्र्य विकसित हो जाती है। सीमावर्ती मानसिक, मन्दन को छोड़ दें तो अन्य मन्द बुद्धि व्यक्तियों में इनकी संख्या 89 प्रतिशत पायी जाती है।

(3) मध्यम मानसिक मन्दन (Moderate mental retardation) - इस उपवर्ग के व्यक्तियों की बुद्धि लब्धांक सीमा 35-49 निर्धारित की गयी है। ऐसे व्यस्क व्यक्तियों की मानसिक क्षमता 4-7 वर्ष के बच्चों के बराबर पायी जाती है। इनमें से थोड़े अच्छे लोगों को कुछ पढ़ना-लिखना सिखाया जा सकता है, भाषा का पर्याप्त विकास हो सकता है लेकिन इनकी अधिगम गति तथा संप्रत्ययन क्षमता मन्द पायी जाती है। इन लोगों की शारीरिक बनावअ में अनाड़ीपन दिखता है, शारीरिक विकार पाये जाते हैं और मांसपेशीय कुशलता का अभाव होता है, क्रियात्म्क सहयोग सीमित होता है।

आरम्भ में निदान हो जाने पर माता-पिता के सक्रिय सहयोग और विशिष्ट प्रशिक्षण कार्यक्रमों की सहायता से इन्हें इस योग्य बनाया जा सकता है कि अपनी दैनिक क्रियाओं की देखभाल कर सकें। पारिवारिक या अन्य संरक्षित परिस्थितियों में ऐसे लोग आर्थिक दृष्टि से भी उत्पादक सिद्ध हो सकते हैं।

(4) तीव्र मानसिक मन्दन (Severe mental retardation) - ऐसी श्रेणी व्यात्तियों की बुद्धि लब्धांक सीमा 20-34 निर्धारित की गयी है। इनके क्रियात्मक और वाणी विकास में तीव्र मन्दता होती है, अनेक संवेदी और क्रियात्मक विकार पाये जाते हैं, प्रशिक्षित किये जाने पर अपनी थोड़ी बहुत देखभाल

कर सकते हैं लेकिन मुख्यत: जीवन पर्यन्त अन्य लोगों पर निर्भर रहते हैं। विशेष प्रशिक्षण देने पर अन्य लोगों की देखरेख में कुछ अतयन्त सरल व्यावसायिक कार्य कर सकते हैं।

(5) गम्भीर मानसिक मन्दन (Profound mental retardation)- इस श्रेणी के लोगों का बुद्धि लब्धांक 20 से कम होता है, वाणी विकास अत्यन्त आरम्भिक अवस्था का होता है। शारीरिक विकृतियाँ, स्नायुमण्डल का विकार, शारीरिक विकास मन्द होना तथा गूँगापन और बहरापन इनकी सामान्य विशेषताएँ होती है। स्वास्थ्य और रोग प्रतिरोध क्षमता भी कम होती है। पूरे जीवन इन्हें भरपूर देखरेख की आवश्यकता होती है।

मानसिक मन्दन की समस्या के क्षेत्र में परामर्शदाता की भूमिका (Role of Counselors in the Area of Mental Retardation) - मानसिक मन्दन के क्षेत्र में कार्यरत परामर्शदाताओं और अन्य निर्देशन कार्मिकों की भूमिका (i) मानसिक रुप से मन्द बच्चों के लिए विशिष्ट संस्थाओं (ii) विशिष्ट रुप से प्रशिक्षित अध्यापकों (iii) मन्दबुद्धि बच्चों के माता-पिता और अभिभावकों (iv) मन्द बुद्धि बच्चों और (v) अन्य सामान्य बुद्धि के साथ ऐसे सहयोगात्मक सम्बन्धों को स्थापित करना होता है जिससे मन्द बुद्धि व्यक्तियों के शैक्षित, व्यावसायिक और समयोजनात्मक विकास के लक्ष्य को प्राप्त करना संभव हो सके। परामर्शदाता की भूमिकाएँ निम्नवत होती है-

(i) मानसिक मन्दन से प्रभावित व्यक्तियों के लिए पाठयक्रम के विकास में सहयोग देना

(ii) मानसिक बुद्धि बच्चों की बुद्धि का मापन करके उन्हें उपयुक्त वर्ग में विभाजित करना अर्थात उनकी विशेषताओं और आवश्यकताओं का निर्धारण करना(

(iii) मानसिक क्षमता के आधार पर मन्द बुद्धि बच्चों को उपयुक्त कक्षाओं में प्रवेश दिलना

(iv) विद्यालयों के साथ सहयोग करके मन्द बुद्धि बच्चों के लिए शिक्षण एवं प्रशिक्षण विधियों के चयन करने और आवश्यकतानुसार अध्यापकों को इस दिशा में प्रशिक्षित करने में सहयोग देना

(v) मन्द बुद्धि बच्चों को प्रगति की निरन्तर देखरेख करना और समय-समय पर आवश्यकताओं और वांछित सेवाओं का निर्धारण करना

(vi) समायोजनात्मक समस्याओं के प्रति सतर्क रहना, आत्मविश्वास में वृद्धि के लिए कार्य करना

(vii) विद्यालय के अन्तर्गत चल रहे शैक्षिक एवं सह-शैक्षिक कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए मन्द बुद्धि बच्चों को प्रोत्साहित करना

(viii) बच्चों के अतिरिक्त माता-पिता का मार्गदर्शन करना समान रुप से महत्वपूर्ण है। माता-पिता ऐसे बच्चों की विशिष्ट समस्या के संदर्भ में परामर्श एवं प्रशिक्षण देना(

(ix) माता-पिता का मानसिक मन्दन के क्षेत्र में अनुभव रखने वाले अन्य अभिभावकों के साथ सम्पर्क स्थापित कराने में सहयोग देना, माता-पिता को विशिष्ट विद्यालयों का सहयोग प्राप्त करने हेतु सहयोग देना

(x) सीमावर्ती मानसिक मन्दन और सौम्य मानसिक मन्दन की दशा में कक्षा में अध्ययनरत अथवा पास-पड़ोस में रहने वाले अन्य सामान्य बुद्धि वाले छात्र अनेक प्रकार से सहयोगी सिद्ध हो सकते हैं अत: शैक्षिक, व्यावसायिक और समायोजनात्मक क्षेत्र में उनका सहयोग प्राप्त करना।

मन्द बुद्धि वाले बच्चों के लिए विशिष्ट शिक्षण कार्यक्रम (Special Education Programs for Mentally Retarded) - मानसिक मन्दन के जिन विभिन्न स्वरुपों और प्रकारों का ऊपर वर्णन किया गया है उससे स्पष्ट है कि इस श्रेणी के बच्चों की अधिगम सामथ्र्य सीमित होती है(अधिगम की गति कम होती है, ध्यान केन्द्रित कर पाने की समस्या होती है(वाचिक अधिगम और संप्रत्यय निर्माण करने, विचारों को समझने में पिछड़े होते हैं(स्मृति क्षमता कम होती है अत: इन बच्चों के लिए शिक्षण पाठ्यक्रम और प्रशिक्षण प्रणाली पृथक प्रकार की होनी चाहिए। चूँकि इन लोगों की अमूर्त चिन्तन की क्षमता कम होती है अत: शिक्षण व्यवस्था में मूर्त तत्वों की अधिकता होनी चाहिए। अभिप्रेरणात्मक और आत्म विश्वास के स्तर में कमी को ध्यान में रखकर इन्हें इनकी छोटी-छोटी उपलब्धियों के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

मंद गति से अधिगम करने वाले मंद बुद्धि बच्चों के शिक्षण कार्यक्रम में मुख्यत : निम्न बातों पर बल दिया जाता है (क्रो एवं क्रो, 1960)--

(1) सामाजिक एवं सामुदायिक गतिविधियों में भागीदारी को प्रोत्साहित करना तथा सम्मान करना

(2) खेल-कूद में भागीदारी

(3) घरेलू कार्यों और जिम्मेदारियों (यथा-भोजन पकाना, सफाई करना। बच्चों की देखभाल करना आदि) का विकास

(4) मानसिक क्षमता के अनुरुप उपयुक्त व्यावसायिक कार्यों में प्रशिक्षित (मुख्यत:) शारीरिक कुशलता से संबंधित कार्यों में प्रशिक्षण) करना

(5) चूँकि मन्द बुद्धि बच्चे मन्द गति से अधिम करते हैं अत: 17-21 वर्ष आयु अवधि में भी निचले स्तर पर दी जाने वाली शिक्षा प्रदान करते रहने की उस समय तक व्यवस्था करना जब तक कि ये लोग व्यवसाय अपनाने योग्य न हो जायें।

प्रतिभाशाली एवं सृजनशील व्यक्ति(Gifted and Creative Person)

घर, विद्यालय, व्यवसाय क्षेत्र या समाज, सर्वत्र कुछ लोग ही ऐसे होते हैं जो अत्यन्त जटिल समस्याओं का समाधान करते हैं, महत्वपूर्ण शोध कार्य करते हैं(नये विचार प्रस्तुत करते हैं या नये उत्पाद विकसित करते हैंस। ऐसे लोगों का उनकी प्रतिभा के कारण या सृजनात्मकता के कारण सम्मान किया जाता है ये इतिहास में भी प्रतिष्ठित हो जाते हैं। समाज और शिक्षा संस्थान को लोगों की प्रतिभा और सृजनशीलता का अधिकतम उपयोग करने हेतु सचेष्ठ देखा जा सकता है। उपयुक्त परिवेश के विकास और अवसरों की उपलब्धता, तथा समुचित निर्देशन के अभाव में समाज अपने श्रेष्ठतम मानवीय संसाधनों का लाभ प्राप्त कर पाने की दिशा में विफल रह जायेगा जो कि समाज और मानव जाति के लिए अपूण्र्ाीय क्षति होगी। अब यहाँ एक प्रश्न यह उपस्थित होता है कि क्या प्रतिभाशाली (Gifted/Genius) होना और सृजनशील (Creative) होना एक ही बात है(क्या सभी प्रतिभाशाली या श्रेष्ठ बुद्धि वाले व्यक्ति

सृजनशील होते हैं(और क्या सृजनशील होने के लिए बुद्धि या प्रतिभा की श्रेष्ठता आवश्यक है। यह प्रश्न मूलत: प्रतिभा और सृजनात्मकता की परिभाषा का है। समाज में प्रतिभाशाली और सृजनशील व्यक्ति बहुत कम पाये जाते हैं। डार्विन, गाल्टन(लिओनार्डों द विंसी जैसे लोग अपनी प्रतिभा और सृजनशीलता के कारण इतिहास में उन कुछ लोगों में गिने जाते हैं जिनका नाम हाथों की ऊँगलियों में ही सिमट जाय। इन लोगों की न तो प्रतिभा पर संदेह है और न उनकी सृजनशीलता की व्यापकता पर प्रश्नचिह्न लगता है किंतु मनोविज्ञान के विद्यार्थियों के लिए बुद्धि की श्रेष्ठता और सृजनशीलता के मध्य का सम्बन्ध सदैव जटिल रहा है। इस पुस्तक के पृष्ठों की सीमाओं एवं फोकस की भिन्नता के कारण इस विषय पर व्यापक विचार नहीं किया जा सकता है किंतु संक्षेप में एक व्यक्ति की प्रतिभा और सृजनशीलता के बीच के सम्बन्ध पर विचार किया जाना आवश्यक है।

लोकप्रिय अर्थों में सृजन की पहचान अन्तिम उत्पाद (product) के माध्यम से की जाती है लेकिन आधुनिक मनोविज्ञान सृजनात्मकता को एक प्रक्रिया (process) के रुप में स्वीकार करता है-- एक ऐसी प्रक्रिया जिसके द्वारा कोई नई रचना, वस्तु या विचार का नया रुप अथवा नियोजन उत्पन्न होता है। इस दृष्टिकोण में बल कुछ नया करने की प्रक्रिया पर दिया जाता है न कि अन्तिम उत्पाद पर। सृजनात्मक कार्य लक्ष्योन्मुख होता है(इसके फलस्वरुप कुछ नवीन, अद्वितीय, समाजोपयोगी या व्यक्ति के लिए उपयोगी उत्पाद की रचना होती है। सृजनात्मकता अपसारी चिन्तन (divergent thinking) द्वारा आती है जबकि पतिदिन का समस्या समाधान अभिसारी चिन्तन (convergent thinking) द्वारा सम्पन्न होता है। सृजनात्मकता बुद्धि का पर्याय नहीं है किन्तु सृजनात्मकता स्वीकृत ज्ञान के आधार पर नवनिर्माण करने की प्रक्रिया है और यह ज्ञान बुद्धि के आधार पर ही प्राप्त किया जाता है। सृजनात्मक हेतु नियंत्रित कल्पना की भी आवश्यकता होती है।

ऐसा प्राय: पाया जा सकता है कि एक व्यक्ति की बुद्धि श्रेष्ठ है तो वह परिवेश का सूक्ष्मता के साथ अवलोकन करता है। उसकी अधिगम की गति तीव्र होती है(शिक्षण एवं प्रशिक्षण की स्मृति अच्छी होती है, तार्किक चिन्तन और मौलिक चिन्तन में स्पष्टता होती है, बौद्धिक जिज्ञासा की अधिकता होती है तथा उसमें अनौपचारिक रुप से अर्जित ज्ञान की व्यापकता होती है, वाचिक सामथ्र्य और अध्ययन में रुचि की अधिकता होती है(उन्हें अपनी कमियों का बोध रहता है तथा उसे दूर करने का प्रयत्न करते हैं। श्रेष्ठ बुद्धि वाले व्यक्तियों की शिक्षण, प्रशिक्षण, व्यवसाय एवं समायोजन सम्बन्धी समस्याओं का आगे वर्णन किया जायेगा।

श्रेष्ठ बुद्धि और अत्यन्त सृजनात्मक व्यक्तियों के उदाहरण प्राय: देखे जा सकते हें लेकिन सभी श्रेणी बुद्धि वाले व्यक्ति आवश्यक रुप में सृजनात्मक नहीं होते हैं। श्रेष्ठ बुद्धि के साथ-साथ सृजनात्मक का होना या न होना अनेक परिवेशीय एवं व्यक्तिगत कारकों द्वारा नियंत्रित होता है। अध्ययनों द्वारा ज्ञात हुआ है कि सृजनात्मक कार्य करने के लिए समय की उपलब्धता, एकान्त, प्रोत्साहन, कुछ ऐसी सामग्री जिसके माध्यम से खेला और अन्वेषण दोनों साथ-साथ हों, घर, विद्यालय और समाज में अपसारी चिंतन का प्रोत्साहन(लोकतांत्रिक शैली के माता-पिता, अभिभावक और अध्यापक एवं ज्ञान अर्जित करने के लिए पर्याप्त सुविधाएँ प्राप्त होनी चाहिए। उक्त के भिन्न परिस्थितियाँ प्रतिभाशाली व्यक्तियों की सृजनात्मकता

का हनन करती हैं। हरलॉक का इस विवाद के संदर्भ में यह कथन है कि यह कहना सुरक्षित है कि यदि परिवेशीय बाधाओं को हटा दिया जाय तो अधिक बुद्धिमान (प्रतिभाशाली) बच्चे अधिक सृजनात्मक होंगे लेकिन यह एक प्रश्नचिह्न है कि क्या सर्वोत्तम परिस्थितियों में भी कोई निम्न बुद्धि या औसत श्रेणी का बच्चा भी सृजनशील बन सकता है कि नहीं। श्रेष्ठ बुद्धि और सृजनात्मकता के मध्य धनात्मक सहसम्बन्धों को देखते हुए इन दो श्रेणियों के व्यक्तियों को प्रतिभाशली (Gifted or Genius) और सृजनात्मक/सृजनशील प्रतिभाशाली (Creative Talent) व्यक्ति कहा जाना श्रेयस्कर होगा। तात्पर्य यह है कि श्रेष्ठ बुद्धि या प्रतिभासंपन्न व्यक्तियों के लिए अच्छे, सहयोगी परिवेश का निर्माण किया जाना चाहिए जिसमें उनकी सृजनशीलता के विकास के लिए पूरे अवसर प्राप्त हों। इस परिवेश और दशा के निर्माण का भार निर्देशन कार्मिकों के कन्धों पर आता है।

7.6 प्रतिभाशाली एवं सृजनशील प्रतिभाशाली का निर्देशन

प्रतिभाशाली (Gifted) और सृजनशील प्रतिभाशाली (Creative talent) व्यक्तियों की सामान्य व्यक्तियों की तुलना में श्रेष्ठता होती है अत: दोनों ही वर्गों के मानवीय संसाधनों का संरक्षण करना चाहता है इसलिए विशिष्ट निर्देशन कार्यक्रम की आवश्यकता का अनुभव किया गया है। सामान्य और सामान्य से निम्न श्रेणी के बच्चों के बीच में इस श्रेणी के बच्चों की शैक्षिक, व्यावसायिक और व्यक्तिगत विकास की व्यवस्था किये जाने पर (i) इनकी प्रतिभा का हनन होती है, और (ii) अनेक समायोजनात्मक एवं व्यक्तित्व विकास सम्बन्धी समस्याएँ प्रकट होती हैं। किन्तु इन लोगों को पृथक वर्ग में रखने पर भी व्यक्तित्व विकास क कुछ दूसरे प्रकार की समस्याएँ प्रकट होती है। अत: निर्देशन कार्मिकों के समक्ष यह प्रश्न प्रकट होता है कि प्रतिभाशाली एवं सृजनशील प्रतिभाशाली व्यक्तियों को शिक्षण एवं प्रशिक्षण हेतु किस प्रकार के समूहों में विभाजित किया जाय।

निर्देशन उपागम : समजातीय एवं विषमजातीय समूह गठन (Guidance Approaches : Homogeneous and Heterogenous Grouping) - कुछ विचारकों का मत है कि श्रेष्ठ छात्रों को एक पृथक समूह में रखकर उनके शिक्षण एवं प्रशिक्षण की व्यवस्था करने से लाभ यह है कि पाठ्यक्रम और शिक्षण विधि को छात्रों की आवश्कयताओं के अनुरुप ढाला जा सकता है। ऐसा करने से छात्रों की अधिगम आवश्यताओं और रुचियों का ध्यान रखा जाना संभव हो पाता है किंतु इसका अर्थ यह नहीं हुआ कि इस उपागम के साथ सब कुछ अच्छा ही अच्छा रहता है। जब एक श्रेणी के छात्रों के मध्य ही किसी बालक का विकास होता है तब अन्य श्रेणी के लोगों के साथ मिलजुलकर कार्य करने की प्रवृत्ति का विकस नहीं हो पाता है। इसके अतिरिक्त श्रेष्ठ वर्ग के बालकों में अपना श्रेष्ठता और दूसरे बालकों के संदर्भ में दंभी अभिवृत्ति विकसित हो जाती है।

विषम जातीय प्रकार का समूह गठन करने पर एक ही कक्षा में विभिन्न बौद्धिक श्रेणियों के बच्चों को एक साथ रखने पर बुद्धि लब्धांकों का विस्तार 75 या 80 से 150 या अधिक तक हो सकता है। अन्य निम्न श्रेणी के बच्चों के भी साथ में होने पर इन्हें भी दूसरों को समझने तथा उनके साथ में कार्य करने का अवसर प्राप्त होता है(अन्य बच्चों की तुलना में अपनी श्रेष्ठता और कमजोरी को जानने का अवसर मिलता है(तथा, अपने दृष्टिकोणों और व्यवहारों को परिस्थितियों के अनुरुप ढालने एवं समायोजन

स्थापित करने की बाध्यकारी दशा की प्राप्ति होती है। इस प्रकार व्यक्तित्व का ज्यादा अच्छा विकास हो पाता है किन्तु सामान्य या सामान्य से कम बुद्धि वाले बच्चों के साथ अध्ययन करने पर श्रेष्ठ बच्चों के ऊबने और फलस्वरुप अध्ययन से विरत होकर अन्य प्रकार की रुचियों और उपद्रवी कार्यों में लिप्त हो जाने की आशंका रहती है। इसके समाधान के लिए एक सुझाव यह दिया जाता है कि एक कक्षा में पृथक मानसिक क्षमता वाले छात्रों को सम्मिलित तो किया जाय किन्तु बुद्धि लब्धांकों का लम्बा विस्तार न हो या परीक्षाफल की दृष्टि से कुछ समीपवत्री श्रेणियों को एक कक्षा में तथा दूसरे समीपवर्ती श्रेणियों को दूसरी कक्षा में रखा जाय जिससे कि अति श्रेष्ठ और निम्नतर को एक साथ पाठयक्रम आदि पर समझौता न करना पड़े।

प्रतिभाशाली बच्चों का निर्देशन (Guidance of the Gifted Children) - अनेक प्रतिभाशाली बच्चे अपनी रुचियों की व्यापकता, सामान्य या निम्न स्तर के बच्चों के साथ समायोजन समस्याओं के कारण शीघ्र ही कक्षाओं से ऊबने लगते हैं तथा अध्ययन से विरत होने लगते हैं अत: उनके निर्देशन के लिए विशेष उपागम की आवश्यकता होती है।

प्रतिभाशाली बच्चों का निर्देशन करने वाले कार्मिकों की जिम्मेदारियाँ निम्नलिखित होती हैं:-

(1) प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान करना। इस हेतु मानक परीक्षणों का उपयोग करने के अतिरिक्त अध्ययन क्षेत्र में सफल बच्चों की पहचान अध्यापकों और विद्यालय अभिलेख के माध्यम से की जा सकती है(

(2) प्राथमिक स्तर पर बच्चों को अध्ययन हेतु भरपूर प्रोत्साहित करना(साथ ही यह भी ध्यान रखना कि अध्ययन के अत्यधिक दबव के मध्य बाल्यकालीन रुचियों, जिनकी पूर्ति व्यक्तित्व विकास के लिए महत्वपूर्ण होती है (जैसे खेलकूद, अन्य सहपाठियों के साथ खेल एवं अन्य कार्य), की उपेक्षा न होने पाये(

(3) माता-पिता के साथ सम्पर्क स्थापित करके उन्हें इस दिशा में परामर्श देना कि सतत अध्ययन करते रहने के लिए दबाव डालने, अतिसंरक्षण प्रदान करने और किसी बच्चे का बढ़ा-चढ़ाकर करने से अंतत: उस बच्चे को विविध रुप में हानि होती है(अत: उन्हें बच्चों के वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन की दिशा में प्रेरित किया जाना चाहिए(

(4) प्रतिभाशाली बच्चों की आकांक्षा का स्तर उच्च होता है(संवेदनशील और अक्षम अध्यापकों की आलोचना करते हैं(किसी प्रिय अध्यापक से अत्यन्त प्रभावित होते हैं तथा उन्हें अपना मॉडल स्वीकार कर लेते हैं अत: अध्यापकों एवं परामर्शदाआताओं को (i) उन बच्चों में आत्म-बोध (अपने बारे में समझ) विकसित करने के लिए सहयोग देना चाहिए((ii) उसके नेतृत्व गुणों का समादर करना चाहिए, (iii) उसे ज्ञान अर्जित करने के अतिरिक्त ज्ञान का अपने एवं सामाजिक हित के लिए उपयोग करने हेतु और अपनी बौद्धिक उत्सुकता का उपयोग करते हुए व्यावहारिक शोध करते रहने के लिए अभिप्रेरित करना चाहिए(तथा (iv) विद्यालय को प्रतिभाशाली बच्चों के तीव्र अधिगम गति और बृहत्तर आवश्कयताओं की पूर्ति के लिए पुर्नगठित करने हेतु सहयोग देना चाहिए(

(5) प्रतिभाशाली बच्चों की तीव्र गति से अधिगम कर पाने की क्षमता को देखते हुए उनका अध्यापन कार्य तेज गति से सम्पन्न किया जाना चाहिए और पाठ्यक्रम के अतिरिक्त और भी अधिक प्रासंगिक अध्ययन सामग्री उपलब्ध करायी जानी चाहिए(

(6) चूँकि प्रतिभाशाली विद्यार्थी निर्धारित पाठ्यक्रम को तेज गति से पूरा कर लेते हैं अत: यह बात संदर्भ में रखकर कि खाली बचा हुआ समय उनके लिए उबाऊ हो जाता है, इन विद्यार्थियों के लिए उच्चीकृत विशेष या 'सम्मान पाठयक्रम' (honours course) की व्यवस्था की जानी चाहिए कि यह पाठ्यक्रम ऐसा नहीं हो कि इसमें अध्ययन करने के कारण इन प्रतिभाशाली छात्रों का परीक्षा परिणाम साधारण पाठ्यक्रम में अध्ययनरत सामान्य बुद्धि वाले सहपाठियों की तुलना में खराब न आ जाये, क्योंकि ऐसा होने पर उत्पन्न हुई कुण्ठा अनावश्यक और अनुचित निरुत्साह को उत्पन्न कर सकती हैं।

सृजनशील प्रतिभा का निर्देशन (Guiding Creative Talents) - सृजनशील प्रतिभा के विकास में सहायक तत्वों का उल्लेख इससे पहले किया गया है। निर्देशन कार्यक्रम प्रतिभाशाली बच्चों के लिए अनेक लक्ष्यों की सिद्धि में सहायक हो सकते हैं। टारेंस ने (Paul E. Torrence, in the book Guiding Creative Talents) सृजनशील प्रतिभा के स्वस्थ विकास की कुछ आवश्यक दशाओं और विशिष्ट लक्ष्यों का विस्तृत वर्णन किया है जिसे यहाँ संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है -

प्रमुख आवश्यक दशाएँ निम्नांकित हैं-

(1) 'स्व' के लिए किसी गंभीर खतरे की अनुपस्थिति और जोखिम उठाने की इच्छाशक्ति(

(2) आत्म-बोध, अपनी भावनाओं के साथ सम्पर्क,

(3) आत्म-विभेदन-स्वयं को अन्य लोगों से भिन्न व्यक्ति के रुप में देखना(

(4) अन्य लोगों के विचारों को ग्रहण करने के लिए खुलापन एवं अपने प्रत्यक्षण तथा विचारों में आत्मविश्वास(

(5) अन्तरवैयक्तिक सम्बन्धों में पारस्परिकता--सामाजिक सम्बन्ध बनाने के लिए अत्यधिक प्रयत्न और अन्य लोगों को विकृत ढंग से तिरस्कृत कर देने जैसी द्विक्षुवीय व्यवहार प्रणालियों के स्थान पर सामाजिक संबंधों में आवयश्क संतुलन बनाये रखना।

सृजनशील प्रतिभाशाली व्यक्तियों के निर्देशन कार्य में कुछ विशिष्ट लक्ष्य निम्नांकित है:

(1) विभिन्नतापूर्ण योगदानों को पुरस्कृत करना (Rewarding Diverse Contributions)-अनेक शोधकार्यों से ज्ञात हुआ है कि अध्यापकों और परामर्शदाताओं को सृजनशील प्रतिभाशाली छात्रों के प्रश्नों, विचारों और अन्य योगदानों के प्रति सहज ढंग से प्रतिक्रिया करना चाहिए।

7.7 सारांश

इस इकाई में आपने देखा कि परामर्श एवं निर्देशन विशिष्ट आवश्यकता वाले व्यक्तियों यथा शारीरिक अक्षमतायुक्त, बौद्धिक असमता युक्त व्यक्तियों एवं प्रतिभाशाली एवं सृजनशील व्यक्तियों के लिये भी

आवश्यकता है जो उन्हें उसकी समस्या का समाधान करने में मदद करता है और उन्हें अपनी विशिष्ट आवश्यकताओं के साथ एक सुखी जीवनयापन करने में मदद करता है।

7.8 बोध प्रश्न

1 पुनर्वास परामर्श की संकल्पना स्प ष्ट करें और इसकी आवश्यकता पर चर्चा करें।
2 शारीरिक अक्षमतायुक्त व्यक्तियों के परामर्श की आवश्यकता और उसकी विधियों की चर्चा करें।
3 मानसिक मंदता। बौद्धिक अक्षमता युक्त व्यक्तियों के परामर्श की आवश्य कता और उसकी विधियों की चर्चा करें।
4 प्रतिभाशाली बालकों के परामर्श की विधियों एवं उसकी आवश्यकता पर प्रकाश डालें।
5 सृजनशील बालकों के लिये परामर्श क्यों आवश्यक है? उनके परामर्श की विभिन्न विधियो पर चर्चा करें।

इकाई – 8

मादक-द्रव्य दुरुपयोग एवं परामर्श

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 मादक द्रव्य दुरुपयोग : संकल्पना एवं परिभाषा प्रकार

8.2.1 मादक द्रव्य दुरुपयोग : परिभाषा एवं परिचय

8.2.2 मादक द्रव्यों के दुरुपयोग का संक्षिप्त इतिहास

8.2.3 मादक द्रव्यों के प्रकार

8.2.4 मादक द्रव्यों के दुरुपयोग का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय परिदृश्य

8.3 मादक द्रव्यों के दुरुपयोग के कारण, उनका प्रभाव

8.3.1 मादक द्रव्यों के प्रयोग के कारण

8.3.2 विभिन्न मादक द्रव्यों का व्यक्ति के स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव

8.3.3 मादक द्रव्य के दुरुपयोग का परिवार और समाज पर प्रभाव

8.4 मादक द्रव्यों के दुरुपयोग एवं परामर्श

8.4.1 मादक द्रब्य दुरुपयोग के शिकार व्यक्ति के लिए परामर्श की आवश्यकता

8.4.2 संक्षिप्त हस्तक्षेप

8.4.3 संकटकालीन परामर्श

8.4.4 परामर्शदाता के गुण, एवं नैतिक व्यवहार

8.4.5 मादक द्रब्य दुरुपयोग की आदत से ग्रस्त व्यक्ति को परामर्श देने में सावधानियां

8.5 सारांश

8.6 बोध प्रश्न

8.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप

- मादक द्रव्य दुरुपयोग को परिभाषित करने में सक्षम हो सकेंगे
- मादक द्रब्यों के प्रयोग का संक्षिप्त इतिहास बता पाने में सक्षम हो सकेंगे
- मादक द्रब्यों के विभिन मानदंडों के आधार पर विभिन्न प्रकारों को बता सकेंगे
- मादक द्रब्यों के बढ़ते दुरूपयोग के वैश्विक परि–श्य पर चर्चा कर सकेंगे
- मादक द्रव्यों के दुरुपयोग के विभिन्न कारणों की व्याख्या कर सकेंगे
- मादक द्रव्यों के दुष्परिणामों के बारे में बता पाएंगे
- मादक द्रब्यों के दुरुपयोग का व्यक्ति के स्वास्थ्य के ऊपर पड़ने वाले प्रभावों को बता सकेंगे
- मादक द्रव्यों के प्रयोग के प्रति विभिन्न मिथकों को बता पाने में सक्षम होंगे
- मादक द्रब्यों का व्यक्ति के परिवार पर पड़ने वाले प्रभावों की संक्षिप्त व्याख्या कर सकेंगे
- मादक द्रब्यों के दुरूपयोग से ग्रस्त व्यक्ति के सामाजिक संबंधों पर चर्चा कर सकेंगे
- मादक द्रब्यों के दुरूपयोग ग्रस्त व्यक्ति के लिए परामर्श की भूमिका पर चर्चा कर सकेंगे
- मादक द्रब्यों के दुरपयोग के सन्दर्भ में परामर्श की विशिस्ट विधिओं के बारे में बता सकेंगे
- मादक द्रब्य दुरूपयोग की समस्या से ग्रस्त व्यक्ति के परामर्श के दौरान ध्यान रखे जाने यौग्य विभिन्न नैतिक एवं मानवीय मूल्यों को बता सकेंगे

8.1 प्रस्तावना

परामर्श की पिछली इकाइयों में आप पढ़ चुके हैं की परामर्श का उद्देश्य किसी समस्याग्रस्त व्यक्ति को उसके उपलब्ध संसाधनों के द्वारा उसके अपने प्रयासों से उस समस्या से निजात दिलाने में मदद करना है। इस इकाई में हम परामर्श के एक महवपूर्ण भाग मादक द्रव्य दुरुपयोग की समस्या से ग्रस्त व्यक्ति के लिए परामर्श पर चर्चा करेंगे। इकाई के पहले भाग में हम मादक द्रव्य, उनके प्रकार, और मादक द्रव्यों के प्रोयोग के संक्षिप्त इतिहास पर एक –ष्टि डालेंगे।

मादक द्रब्यों का दुरूपयोग न केवल व्यसैनी व्यक्ति को बल्कि उसके पुरे परिवार और समाज को भी बुरे तरह से प्रभावित करता है। दूसरी उप इकाई में हम मादक द्रब्यों के दुरूपयोग का व्यक्ति के व्यक्तिगत जीवन, पारिवारिक जीवंज एवं सामाजिक जीवन् पार पड़ने वाले विभीन प्रभावों का अध्ययन करेंगे।

तीसरी इकाई में हम मादक द्रव्य दुरूपयोग के व्यसनी व्यक्ति को व्यसन मुक्त करने एवं उसका पिछला क्रियात्मक स्तर वापस लेने में परामर्श और परामर्शदाता के भूमिका की चर्चा करेंगे।

चौथी इकाई में हम परामर्श की विशिष्ट युक्तिओं पर विचार करेंगे जो इस विशिस्ट परामर्श में सहयोगी हो सकती हैं साथ ही हम मादक द्रव्य दुरूपयोग से सम्बंधित परामर्श के दौरान विभिन्न नैतिक और मानवीय मूल्यों का अध्ययन करेंगे जो एक परामर्श दाता से अपेक्षित होती है

8.2 मादक द्रव्य दुरुपयोग : संकल्पना

8.2.1 मादक द्रव्य दुरुपयोग : परिभाषा एवं परिचय

द्रव्य संबंधी विकृतियों का अर्थ सामान्यत: उन विकृतियों से है जो औषधियों अथवा अन्य द्रव्यों के चिरकालिक उपयोग तथा अनुपयुक्त उपयोग एवं परित्याग से विकसित होती है। इन्हे द्रव्य-दुरुपयोग विकास भी कहा जाता है। (खुले मान एवं)

DSM IV (डायग्नोंस्टिक एवं स्टैटिस्टिकल मैनुअल IV जो कि मानसिक विकारों के वर्गीकरण की अग्रणी संस्था है, के द्वारा दी गई परिभाषा के आलोक में, डेविसन एवं नील के अनुसार : द्रव्य संबंधी विकृतियाँ वे विकृतियाँ हैं, जिनमें दवाइयों/द्रव्यों का दुरुपयोग इस हद तक किया जाता है जिससे व्यक्ति कुसमायोजित हो जाता है, सामाजिक एवं व्यावसायिक कार्य बाधित हाते हैं और दुरुपयोग की प्रवृत्ति पर नियंत्रण असंभव दिखने लगता है। संदर्भित मादक द्रव्य पर व्यक्ति की निर्भरता या तो मानसिक होता है या शारीरिक।

उपर्युक्त परिभाषा का विश्लेषण करने पर हम, मादक द्रव्यों के दुरुपयोग से उत्पन्न विकारों का स्वरूप निम्नांकित है :

1- औषधियों का अति दुरुपयोग (Excessive abuse of Drugs) मादक द्रव्य संबंधी विकृति में, औषधियों का अत्यधिक दुरुपयोग किया जाता है इनमें मदिरापान एवं तम्बाकू सेवन प्रमुख हैं।

2- कुसमायोजी व्यवहार (Mal Adaptive behaviour) द्रव्य संबंधी विकृतियों वाले व्यक्ति कुसमायोजी व्यवहार प्रदर्शित करते हैं। कभी विषादी मुद्र कभी उत्त्ोजक व्यवहार की अभिव्यक्ति करते हैं और वातावरण के अनुसार स्वयं को ढाल पाने में अक्षम होते हैं।

3- विकृत सामाजिक संबंध (Impaired social Relatioship) द्रव्य दुरुपयोग संबंधी विकृतियों का एक प्रमुख लक्षण विकृत सामाजिक क्रिया भी है। इन विकारों से ग्रस्त व्यक्तियों के सामाजिक संबंध गंभीर रूप से प्रभावित होते हैं।

4- विकृत व्यावसायिक क्रियाएँ (Impaired Occupational Functioning) द्रव्य संबंधी विकृतियो से ग्रस्त लोग, अपने व्यावसायिक क्षेत्र में भी विकृति प्रदर्शित करते हैं और अपने व्यावसायिक दायित्व को निभा पाने में पूर्ण सक्षम नहीं होते।

5- औषधि अवलंब/द्रव्य निर्भरता : द्रव्य संबंधी विकृतियों में व्यक्ति एक बार उनका आदी होने के बाद उन पर शारीरिक और मानसिक निर्भरता विकसित कर लेता है।

8.2.2 मादक द्रव्यों के प्रयोग का संक्षिप्त इतिहास

मादक द्रव्यों के उपयोग और दुरुपयोग का इतिहास मानव इतिहास जितना ही पुराना है। मानवता के आरंभ से ही, आदमी में विभिन्न पदार्थों, जो उसे उत्त्ोजना, विश्रांति अथवा मस्ती की अनुभूति काराए,

के सेवन की प्रवृत्ति पाई जाती रही है। कृषि का आरंभ लगभग 6000 ई. पू. हुआ और लगभग इसी समय में अनाज के 'किण्वन' के द्वारा शराब के उत्पादन का भी आरंभ हुआ। अनाज के अलावा फलों के रस एवं शहद के किण्वन द्वारा भी 'शराब' के उत्पादन का इतिहास पुराना है। किण्वन से निर्मित पेय पदार्थों का प्रयोग आरंभिक इजिप्टियन समाज में प्रचलित था। चीन में भी, किण्वित पेय प्रदार्थों 7000 ई. पू. प्रयोग के प्रमाण मिले हैं । माराजुआना के चीन में औषधीय प्रयोग के विवरण 2737 ई. में मिलते हैं।

19वीं सदी के पूर्व तक, प्राय: प्राकृतिक मादक द्रव्यों के प्रयोग एवं दुरुपयोग के विवरण मिलते है। वैज्ञानिक-विकास के साथ ही, 19वीं सदी से, मादक द्रव्यों के प्रयोगशाला में निर्माण का आरंभ हुआ। धीरे-धीरे मादक द्रव्यों के व्यक्तिगत, सामाजिक एवं राष्ट्रीय दुष्परिणामों की वजह से अमेरिका में 1875 में पहला कानून बनाया गया। 2000 ई. पू. के भारतीय इतिहास में भी मादक पेय 'सुरा' के प्रयोग का विवरण प्राचीन भारतीय हिन्दू धार्मिक ग्रंथों में मिलता है। प्राचीन हिन्दू धार्मिक ग्रंथों के अनुसार 'सुरा' देवताओं का प्रिय पेय रहा है और इसी कारण इसका नाम 'सुर' (देवता) से व्युत्पन्न है, 'सुरा' अर्थात् 'दैवीय'। 700 से 800 ई. में चाइना और भारत में अफीम के प्रयोग के प्रमाण मिलते हैं जो प्रारंभ में चिकित्सकीय उपयोग में लाया जाता था, पर बाद में मादक पेयों के निर्माण में दुरुपयोग किया जाने लगा।1100 से 1200 ई. के मध्य भारत और चीन में अफीम की खेती की जाने लगी, और लोग मादक पेय के रूप में इसका प्रयोग करने लगे। सिपाहियों/सैनिकों का साहस बढ़ाने के लिए सैनिकों के लिए विशेष रूप से इसका प्रयोग किया जाता था।

1250 ई. में यूरोप 'आसवन' की विधि से परिचित हो चुका था। जिसकी वजह से ज्यादा शक्तिशाली और उपयुक्त, मादक पेय बनाया जाना संभव हुआ। 16वीं शताब्दी तक, आसवित मादक पेयों का चिकित्सकीय एवं धार्मिक प्रयोग यूरोप में लोकप्रिय था। इसके असाधरण रोगहारी गुणों के कारण इसे जीवन जल कहा जाता था।

1300-1450 ई. के दौरान 'अरब' के लोग कॉफी के उत्पादन एवं उपयोग से परिचित हो चुके थे। यमन में काफी के उत्पादन एवं उसके प्रयोग का फैलाव 1450-1475 के बीच बड़ी तेजी से हुआ। हालांकि तब तक 'अरबों' के द्वारा कॉफी का प्रयोग औषधीय एवं धार्मिक उद्देश्यों के लिए ही किया जाता था। 1475-

द्रव्य का प्रकार	**वर्तमान व्यापकता दर**
तम्बाकू	55.8
शराब	21.4
कैनाबिस	3
हेरोइन	0.2
अफीम	0.5
अफीम निर्मित अन्य पदार्थ	0.1

1500 के मध्य विभिन्न मुस्लिक 'दरवेशों' ने मक्का और मदीना के लोगों को कॉफी के प्रयोग से परिचित कराया इस दौरान वहाँ कई कॉफी हाउस खाले गए, एवं कुछ धर्म-गुरूओं द्वारा इस्लाम के विरुद्ध होने का प्रमाण देकर कॉफी का विरोध भी किया गया।

भारत में अफीम अरब व्यापारिओं के द्वारा पश्चिम तटीयमार्ग से नौवीं शताब्दी के मध्य लाया गया था जिसका प्रारंभिक उपयोग औषधियो के रूप में होता था। प्रथम मुगल सम्राट बाबर द्वारा ~~(घ†„†-घ†…å)~~ इसवी के दौरान अफीम की खेती को प्रोत्साहित करने के प्रमाण भी मिलते हैं। 1757 ईसवी आते आते ईस्ट इंडिया कम्पनी द्वारा अफीम के प्रयोगों को बढावा दिया गया और उसके व्यापर पर एकाधिकार कर लिया गया ताकि धन एकत्र किया जा सके। 18 वीं सदी के आरम्भ में 1720 इसवी के दौरान चीन द्वारा 15 टन अफीम का भारत से आयत किया गया था जो की 1773 आते आते बढकर 75 टन हो गया। 1969 से 1978 के दौरान किये गए विभिन शोधों में पाया गया की 0.04 से 17: तक लोगों ने किसी मादक पदार्थ का प्रयोग किया था। 1980 के आरम्भ तक भारत विश्व का सबसे बड़ा कानूनी रूप से अफीम निर्यातक देश था। बाद के वषोर् में अफगानिस्तान विश्व का सबसे बड़ा अफीम निर्यातक देश (90:) बन गया। नेशनल होसेहोल्ड सर्वे (2002) के एक अनुमान के अनुसार भारत में पुरुषों में विभिन्न प्रकार के द्रव्यों के दुरुपयोग का निम्नलिखित विवरण सामने आया

8.2.3 मादक द्रव्यों के प्रकार

विभिन्न मानदंडों के आधार पर, सामान्यत: दुरुपयोग किए जाने वाले द्रव्यों का निम्नांकित वर्गीकरण किया जा सकता है।

1. व्यक्ति के ऊपर पड़ने वाले मनोशारीरिक प्रभावों' के आधार पर वर्गीकरण
2. उत्पत्ति के आधार पर वर्गीकरण
3. कानूनी मान्यता के आधार पर वर्गीकरण

1. मादक द्रव्यों का **'व्यक्ति के ऊपर पड़ने वाले मनोशारीरिक प्रभावों'** के आधार पर उन्हें निम्नांकित चार वर्गों में बाँटा जा सकता है :

   पीड़ा नाशक / उपशामक औषध (Narcotic Analgesics) : ये वे मादक द्रव्य हैं औषधियाँ हैं जो उपशामक और पीड़ानाशक का गुण अपने अंदर रखती है और प्राय: चिकित्सार्थ 'पीड़ानाशकों' के रूप में प्रयोग किए जाते हैं।इनके सेवन से व्यक्ति को दर्द से आराम मिलता है, उसे अस्थायी शांति एवं उल्लास का अनुभव होता है। इस प्रकार की औषधियों/द्रव्यों में अफीम और उससे निर्मित उत्पाद अत्यंत प्रमुख हैं(जैसे- मॉर्फीन, हेरोइन, काडाइन आदि। हेरोइन मॉर्फीन से भी शक्तिशाली मादक द्रव्य है, जो एक बार सेवन करने के बाद व्यक्ति को अपनपे आप निर्भर बना लेता है।ये अफीम अथवा अफीम के कृत्रिम विकल्प होते हैं, स्नायुतंत्र को गतिहीन कर देते हैं, और आदमी को शारीरिक पीड़ा से निजात दिलाते हैं। चूँकि ये आसानी से, विभिन्न दवा दुकानों पर, चिकित्सकीय प्रयोग के लिए उपलब्ध होते हैं, अत: मादक पदार्थों के रूप में इनके प्रयोग की संभावना, सुलभता के कारण बढ़ जाती है।

a. **उत्ोजक (Stimulants) :** ये प्राय: वे मादक द्रव्य होते हैं, जिनसे केंद्रीय स्नायुतंत्र की सक्रियता में वृद्धि होती है और वह उत्ोजित होता है। ये व्यक्ति की शारीरिक अथवा मानसिक या दोनों की सक्रियता में अस्थायी वृद्धि में प्रकट होते हैं। ये व्यक्ति के केंद्रीय तंत्रिका तंत्र और पेरीफेरल तंत्रिका तंत्र दोनों को उत्तेजित कर देते हैं। सुप्रसिद्ध 'डोविंग' के मामलों में प्राय: खिलाड़ी इन्हीं का दुरुपयोग करते हैं। डोयामाइन और फनाईलएमाइन आदि इसके उदाहरण हैं।

b. **अवसादक/शमक (Depressants) :** अवसादक वे मादक द्रव्य होते हैं जो केंद्रीय तंत्रिका तंत्र प्रणाली की क्रियाशीलता को कम कर देते हैं फलत: व्यक्ति का मस्तिष्क शिथिल हो जाता है, और शांति एवं नींद प्रदान करने में सहायक होते हैं। ये भी प्राय: विभिन्न मनोरोगों के कारण उत्पन्न उत्तेजना अथवा अनिद्र के इलाज के लिए प्रयोग किए जाते हैं। ये उत्तजकों के ठीक विपरीत कार्य करते हैं। ये प्रमुखत: उत्तोजक और अनिद्रा के इलाज के लिए चिकित्सकों द्वारा प्रयोग किए जाते हैं। इनमें प्रमुख हैं, ऐल्कोहॉल, मॉर्फीन, हेरोइन आदि।

c. **मतिभ्रमकारी (Hallucinogens) :** कुछ मादक द्रव्य व्यक्ति के चिंतन, मनोभावों एवं संपूर्ण मानसिक प्रक्रिया एवं चेतना को प्रभावित करके मत्ति-भ्रम उत्पन्न करते हैं, वे मतिभ्रमकारी कहलाते हैं। इनके प्रयोग से विभिन्न विकृत मानसिक स्थितियाँ यथा उतावलापन, भ्रम, शंका, चिंता, स्वच्छंदता आदि का अनुभव होता है। विभिन्न मतिभ्रमकारी पदाथों में **LSD (लाइसर्जिक एसिड डाइ इथाइलानाइड) और PCP (फिनाइल साइक्लोहेक्सी पाइपरीडाइन)** भाग आदि प्रमुख हैं।

2. उत्पत्ति के आधार पर वर्गीकरण

उत्पत्ति के आधार पर मादक द्रव्यों को तीन भागों में बाँटा जा सकता हैं

(i) प्राकृतिक मादक द्रव्य (Natural Drugs) : ये प्राकृतिक रूप से उत्पन्न होते हैं(जैसे-अफीम, भांग इत्यादि। इनके उत्पादन के लिए कोई रासायनिक प्रक्रिया की आवश्यकता नहीं है।

(ii) कृत्रिम मादक द्रव्य (Synthatic Drugs) : ये मादक द्रव्य प्रयोगशाला में कृत्रिम रूप से विभिन्न रसायनों के प्रयोग से तैयार किए जाते हैं(जैसे-मेथाडॉन, बारबीटेट्स आदि।

(iii) अर्द्ध-कृत्रिम मादक द्रव्य (Semi Synthetic Drugs) : ये मादक द्रव्य प्राकृतिक मादक द्रव्यों में, कुछ रसायनों का प्रयोग करके प्रयोगशाला में तैयार किए जाते हैं। शराब, हेरोइन आदि इसके प्रमुख उदाहरण हैं।

3. कानूनी मान्यता के आधार पर मादक द्रव्यों को दो भागों में बाँटा जा सकता है।

a. **कानूनी मादक द्रव्य (Legal/Licit substances):** ये वे मादक द्रव्य हैं, जिनका राष्ट्र विशेष में सीमित उत्पादन, कानूनन वैध है। इस श्रेणी में प्राय: वे पदार्थ आते हैं जिनका चिकित्सकीय प्रयोग बहुतायत से होता है(जैसे-दर्द निवारक औषधियाँ उत्तेजक, शामक आदि।

b. **गैर-कानूनी मादक द्रव्य (Illegal/Illicit Substances) :** ये वे मादक द्रव्य हैं जिनका चिकित्सकीय प्रयोग अत्यल्प है और राष्ट्र विशेष में दुरुपयोग की संभावना को देखते हुए उत्पादन गैर-कानूनी है(जैसे-हेरोइन, मॉर्फीन आदि। वैसे मादक द्रव्य, कोई भी हो उसका उत्पादन,यदि राष्ट्र के स्थानीय मानकों के अनुसार, पूर्वानुमती से किया जा रहा हो तो वह कानूनी है, अन्यथा गैर-कानूनी। अधिकांश **मति भ्रमकारी गैर-कानूनी मादक द्रव्य** की श्रेणी में आते हैं।

8.2.4 मादक द्रव्यों का दुरुपयोग : वैश्विक परिदृश्य

मादक द्रव्य दुरुपयोग पर 1997 में किए गए सर्वे में 192 में से 80 देशों ने मादक द्रव्य दुरुपयोग पर अपनी रिपोर्ट भेजी। जिनमें केवल सात देशों ने 'कैनाबिस' के प्रयोग में कमी बताई, बाकी अन्य सभी देशों ने 'कैनाबिस' के बढ़ते प्रयोग की जानकारी दी। 25 देशों ने 'कोकीन' के बढते प्रयोग को स्वीकार किया। 'कैनाबिस' सर्वाधिक दुरुपयोग किए जाने वाला मादक द्रव्य है जिसकी व्यापकता दर (2.5%) प्रतिवर्ष वैश्विक जनसंख्या में आँका गया है। (यूनीसेफ, 1999) कैनाबिस के प्रयोग/आदि 37% तक बालकों और युवाओं में, कुछ देशों में पाया गया है। भारत में, 1999 के सर्वेक्षण के अनुसार, आजीवन मादक द्रव्य निर्भरता की व्यापकता दर 4.7% पाई गई। मदक द्रव्य दुरुपयोग की भयावहता का अनुभाग सिर्फ इस बात से लगाया जा सकता है कि हेरोइन जैसे मादक पदाथ्र जिसकी अत्यल्प मात्रा (5-10 मि.ग्रा.) नशे के लिए काफी है, का वार्षिक वैश्विक खपत लगभग 340 टन है, और इसका वैश्विक व्यापार 430-450 टन होने का अनुमान है। 430 टन के वैश्विक व्यापार में लगभग 380 टन हेरोइन और मॉर्फीन का वार्षिक उत्पादन अफगानिस्तान में होता है। लगभग 5 टन हेरोइन और मॉर्फीन अफगानिस्तान में प्रयोग किया जाता है या जब्त किया जाता है और शेष लगभग 375 टन को अफगानिस्तान की सीमा से लगे पड़ोसी देशों के मध्य से वैश्विक बाजार में पहुँचा दिया जाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ के विश्व मादक द्रव्य रिपोर्ट (2013) पूरे विश्व में 15-64 वर्ष की आयु के 16.5 मिलियन व्यक्ति (लगभग 0.4% जनसंख्या) हेरोइन और अफीम के आदी हो चुके हैं। इनका (हेरोइन और अफीम) का सबसे बड़ा उत्पादक देश अफगानिस्तान है जहाँ अफीम के कुल उत्पादन का लगभग 74% उगाया जाता है। (विश्व औषधि रिपोर्ट, 2013 संयुक्त राष्ट्र संघ)। 2011 में लगभग 15-64 वर्ष के आयु वर्ग में 33.8 मिलियन व्यक्तियों वैश्विक जनसंख्या का (0.7%) ने ATS (एक्फेटामिन टाइप स्टिमुलेंट) का सेवन किया था। मादक द्रव्य दुरुपयोग में कैनाबिस का नाम अग्रणी है, जिनका 15-64 वर्ष आयु वर्ग की कुल जनसंख्या का लगभग (4%) आदी हैं। (180.6 मिलियन व्यक्ति)

इसके अलावा वैज्ञानिक और चिकित्सकीय शोधों के कारण नए मादक द्रव्यों का प्रचलन भी तेजी से बढ़ा है। जिन्हें, संयुक्त राष्ट्र संघ ने NPS (New Psyechoactive Substances) का नाम दिया है। 2009 में जहाँ मात्र 166, NPS की सूचना सं. रा. संघ को दी गई थी वहीं, 2012 में 50% की वृद्धि दर्ज करते हुए 251 NPS रिपोर्ट किए गए। पहली बार सूचित NPS की संख्या में, (251) अंतरराष्ट्रीय नियंत्रण (234) से ज्यादा NPS रिपोर्ट किए गए। NPS एक वृहत पद है जो उन समस्त मादक द्रव्यों को समाहित करता है जो अनियंत्रित एवं गैस्-कानूनी रूप से बाजार में उपलब्ध हो रहे हैं, और नियंत्रित द्रव्यों

के समान प्रभाव पैदा करते हैं। 2008 से 2012 के दौरान NPS का प्रचलन आश्चर्य जनक रूप से बढ़ा हुआ पाया गया। बढ़ती हुई इंटरनेट तकनीक का NPS के व्यापार में महत्वपूर्ण योगदान (कुल व्यापार का लगभग 88%) पाया गया। 2011 के एक अनुमान के अनुसार 15 से 64 वर्ष के आयु वर्ग के वैश्विक जनसंख्या का कुल (3.61-6.9%) मादक द्रव्यों के सेवन का आदी होने का अनुमान है अर्थात् संपूर्ण विश्व में कुल 163-315 मिलियन लोग मादक द्रव्यों के आदी पाए गए हैं।

8.3 मादक द्रव्यों के दुरुपयोग के कारण, एवं उनका प्रभाव

8.3.1 मादक द्रव्यों के दुरुपयोग के कारण

मादक द्रव्यों का प्रथम प्रयोग करते समय प्राय: व्यक्ति यह विचार रखता है कि वह इसका आदी नहीं होगा, और सिर्फ अस्थायी रूप से परिस्थिति विशेष में उसका प्रयोग करेगा। धीरे-धीरे, मादक द्रव्य विशेष पर उसकी निर्भरता बढ़ती जाती है, और अंतत: व्यक्ति उसका आदी हो जाता है। मादक द्रव्यों के सेवन किए जाने के कारणों का विवरण अत्यंत कठिन है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे से भिन्न है और, व्यक्तिगत भिन्नता के कारण, प्रत्येक व्यक्ति के मादक पदार्थों के सेवन का कारण भी भिन्न है। परंतु सभी प्रकार के मादक द्रव्यों के सेवन में उभयनिष्ठ यह है कि व्यक्ति द्वारा उसका प्रयोग तात्कालिक खुशी के लिए किया जाता है। मादक द्रव्य, व्यक्ति के तंत्रिका तंत्र को उत्तेजित करके, व्यक्ति में एक 'अकारण प्रसन्नता' का भाव उत्पन्न करते हैं, फलत: उनके आदि व्यक्ति अपनी जीवन की विभिन्न समस्याओं, जो उसकी खुशी को कम कर रही है, को तात्कालिक विस्मृति हेतु मादक द्रव्यों का प्रयोग करते हैं।

मादक द्रव्यों के प्रयोग के कुछ प्रमुख कारण निम्नांकित हैं:

- ❖ **अनुकरण (Imitation) एवं जिज्ञासा (Curiosity)**

  अनुकरण (Imitation) मादक द्रव्यों के सेवन का एक बहुत बड़ा कारण है। प्राय: यह देखा गया है। जिन बच्चों के माता-पिता मादक द्रव्यों का सेवन करते हैं, उनमें प्राय: यह आदत उनकी देखा देखी विकसित हो जाया करती है। अपने से बड़ों को मादक द्रव्यों का सेवन करते देखकर प्राय: युवा/किशोर सहज जिज्ञासावश, एवं स्वानुभव के लिए मादक द्रव्यों का सेवन करते हैं और धीरे-धीरे उसके आदी हो जाते हैं।

- ❖ **साथियों का दबाव (Peer Pressure)**

  प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में हम उम्र व्यक्तियों द्वारा, हमारे विभिन्न क्रिया कलापों का समर्थन (Peer Approval) बहुत मायने रखता है। किशोरों में सहपाठी समर्थन (Peer Approval) की इच्छा ज्यादा पाई जाती है। यदि किसी व्यक्ति के सहपाठी/सहकर्मी/हमउम्र व्यक्तियों में, मादक द्रव्यों का सेवन की आदत है तो, वे उस व्यक्ति पर भी इसके लिए दबाव बनाते हैं और ऐसा न करने पर, वे विभिन्न तरीकों से उसका मजाक उड़ाते हैं। ऐसे में सहपाठी दबाव (Peer Pressure) भी एक अत्यंत महत्वपूर्ण कारक है जिसकी बजट से व्यक्ति में मादक द्रव्य के सेवन

की आदत का विकास होता है। क्योंकि, व्यक्ति को मित्र-समूह की स्वीकृति (Peer Approval) एवं उस समूह की सदस्यता चाहिए तो उसे स्वीकार करना होगा।

❖ अकेलापन (Alienation)

कई बार व्यक्ति स्वयं को अपने आस-पास के समुदाय/समाज/मित्र समूह से अलग एवं अकेला महसूस करने लगता है। चूँकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, अत: अकेलेपन की यह अवस्था व्यक्ति में तनाव उत्पन्न करती है, जिससे राहत पाने की इच्छा उसे मादक द्रव्यों के सेवन की ओर प्रेरित कर सकती है। प्रतिक्रिया स्वरूप व्यक्ति विभिन्न व्यसनों का शिकार हो जाता है। इस संदर्भ में यह भी महत्वपूर्ण है कि ऐसी स्थिति में, व्यक्ति अपने समान, अकेलेपन की भावना से युक्त, अन्य साथियों को भी एकत्र कर लेते हैं और सामूहिक मादक द्रव्य पान करते हैं। प्रत्येक नए व्यक्ति का उस समूह में स्वागत किया जाता है।

❖ सामाजिक संरचना में परिवर्तन

सूचना क्रांति के वर्त्तमान समय में सामाजिक परिवर्तन की गति बड़ी तीव्र है। कई बार व्यक्ति इस परिवर्तन के अनुकूल सामाजिक सामंजस्य बनाने में कठिनाई महसूस करता है जो उसमें मानसिक तनाव उत्पन् करते हैं, और इस मानसिक तनाव को कम करने की इच्छा उसे मादक द्रव्यों के सेवन का लती बना देती है।

❖ बेरोजगारी (Unemployment)

बढ़ती बेरोजगारी मादक द्रव्यों के सेवन के एक प्रमुख कारणों में से एक है। यह एक युवा मन को दो प्रकार से प्रभावित करता है : **उसके पास कुछ काम न होना :** प्रचीन कहावत है कि खाली दिमाग शैतान का घर होता है। बेरोजगारी के कारण, युवाओं के पास कोई काम न होने पर, उनकी यह ऊर्जा, नकारात्मक कार्यों जिनमें मादक द्रव्य सेवन भी एक है कि ओर प्रवृत्त हो जाती है।बेरोजगारी के कारण, व्**यक्ति अपनी इच्छाएँ/आवश्यकताएँ पूर्ण करने में स्वयं को सक्षम नहीं पाता,** जो उसमें मानसिक तनाव, अनिद्रा जैसे लक्षण उत्पन्न करते हैं। इन विषय मानसिक परिस्थितियों से तात्कालिक राहत पाने के लिए वह, मादक द्रव्य सेवन की ओर उन्मुख हो जाता है।

❖ माता-पिता के द्वारा बच्चों को पर्याप्त समय न देना

वर्तमान समय में जीवन, अत्यंत भागदौड़ की एवं प्रतियोगिता पूर्ण हो गई है। कई बार, माता-पिता बच्चों को पर्याप्त समय नहीं दे पाते, विशेषकर तब जब, माता-पिता दोनों कार्यरत हों, तब बच्चों को न तो पर्याप्त प्यार मिल पाता है और न निर्देशन जो विशेषकर किशोरों को, मादक द्रव्य सेवन की ओर उन्मुख करता है।

❖ दूरदर्शन और चलचित्र मिडिया

वर्तमान सामाजिक क्षरण में मीडिया की भूमिका दूरदर्शन, चलचित्र आदि अत्यंत महत्वपूर्ण है। विभिन्न प्रकार के संचार माध्यम, चलचित्र आदि 'मादक पदार्थों' को तनाव मुक्ति के एक साधन

के रूप में प्रचारित करते हैं। ऐसा दिखाया जाता है। इन पदार्थों का सेवन करके नायक अत्यंत प्रसन्न हो गया है, या उसमें अद्भुत शक्ति आ गई है या सारी चिंता परेशानियों को भूल गया है। किशोर मन पर इसका व्यापक प्रभाव पड़ता है और चलचित्र/मीडिया के द्वारा दिखाए नायको की तरह वह भी उन्हें रोल मॉडल (आदर्श) मानते हुए, व्यसन का शिकार हो जाता है।

❖ **मनोरंजन के साधनों का अभाव :** मनोरंजन के साधनों का अभाव भी व्यक्ति को विभिन्न मादक पदार्थों का आदी बनना में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। इनके अभाव में, जिंदगी, एक-रस हो जाती है, जिसमें परिवर्तन लाने हेतु व्यक्ति व्यसन का शिकार हो सकता है।

❖ **व्यक्ति पर पड़ने वाले मनोवैज्ञानिक दबाव :** कई बार विभिन्न वजहों से व्यक्ति के ऊपर पड़ रहे मनोवैज्ञानिक दबाव जैसे पढ़ाई, काम का बोझ, प्यार में धोखा, असफलता आदि भी व्यक्ति को मादक द्रव्यों का सेवन करके उनसे अल्प समय के लिए ही सही, परंतु तात्कालिक राहत पाने की ओर उन्मुख करते हैं।

❖ **मादक द्रव्यों का धंधा करने वाले व्यक्तियों के जाल में फँस जाना :** कई बार जब व्यक्ति मादक द्रव्यों के अवैध धंधे में लिप्त व्यक्तियों के संपर्क में आता है। अपना धंधा विकसित करने के लिए वे उसे नशे के लिए उकसाते हैं, विभिन्न प्रकार के प्रलोभन देते हैं, मादक द्रव्य की प्रारंभिक खुराक मुफ्त प्रदान करते हैं ऐसे में व्यक्ति विशेषकर (अपरिपक्व) किशोर वय के बालक उनके चंगुल में फँस जाते हैं, और व्यसन के आदी हो जाते हैं।

❖ **सभ्यता एवं संस्कृति:**

कई बार मादक द्रव्यों को दी गई सांस्कृतिक मान्यता भी लोगों को इसका व्यसनी बना देता है। भारत में हिन्दुओं में होली के त्यौहार के दौरान कैनाबिस अर्थात भंग के प्रयोग की छूट होती है। ठंढई के नाम पर बहुतायत से इसका प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त भारतीय आयुर्वेदिक ग्रंथों में भी भंग के विभिन्न औषधीय गुण बताये गए हैं जो लोगो को इसका आदी बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

मादक द्रव्यों के सेवन के और भी अनेक कारण हो सकते हैं यथा-बच्चों को आवश्यकता से अधिक दिया जाने वाले जेब खर्च, सामाजिक-नैतिक मूल्यों में उत्तरोत्तर आ रही गिरावट, मादक द्रव्यों के दुष्परिणाम के बारे में अनभिज्ञता, शहरीकरण, बच्चों व किशोरों का शारीरिक मानसिक उत्पीड़न आदि। मादक द्रव्यों के सेवन का तात्कालिक कारण कोई भी हो, परंतु 'तनाव से मुक्ति' अधिकांश व्यक्तियों को मादक द्रव्यों के सेवन के लिए प्रेरित करता है।

8.3.2 विभिन्न मादक द्रव्यों का व्यक्ति के स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव

सामान्य शारीरिक प्रभाव

❖ नींद की कमी, असामान्य नींद , असामान्य आलस्य

❖ भूख में कमी ज्यादा भूख लगना, खाने पिने की आदतों में बदलाव

❖ हाथ सर अथवा पेरों में कम्पन

- ❖ लाल पानी युक्त आँखें पुत्लियन सिकुडी अथवा असामान्य रूप से फैलाव
- ❖ घ्राण क्षमता का शरास
- ❖ के दस्त, अनियमित हृदयगति
- ❖ कफ में असामान्य वृद्धि
- ❖ भावहीन चेहरा
- ❖ अत्यधिक पसीना
- ❖ अतिसक्रियता वाचालता

व्यावहारिक

- ❖ अभिवृतिय एवं संपूर्ण व्यक्तित्व में परिवर्तन
- ❖ कार्य क्षमता में कमी
- ❖ आदतोंध्शौक में परिवर्तन
- ❖ ध्यान केन्द्रण में कठिनाई
- ❖ भूलने की आदत
- ❖ चिडचिडापन, सनक
- ❖ अत्यधिक अकेलेपन की इच्छा
- ❖ संदेहास्पद व्यवहार
- ❖ चोरी, पैसे की अनावश्यक मांग

Cannabis (मराजुआना भांग थाई स्टिक ध् पॉट)

स्वस्थ्य पर प्रभाव विभ्रम, तेज भूख, बढ़ी हृदय गति, शारीरिक और मानसिक कार्य करने में कठिनाई, मनोवैज्ञानिक निर्भरता, अन्य सभी कायोर्ं में रूचि ख़त्म, फेफड़ों का कैंसर, स्वसन से संबध बीमारि, ज्यादा मात्र में लेने पर अनावश्यक आवाज सुनाई देना, अनावश्यक गंध महसूस होना, उत्तेजनात्मक विकृति,

Cocaine (कोकीन)

स्वस्थ्य पर प्रभाव भूख की कमी, तेज साँस, तेज हृदय गति और बड़ा शारीर का तापमान, हिंसक व्यवहार, हृदयगति रुकना, फिट्स , ब्रेन हमरेज, कोकीन और अल्कोहल का मिश्रण एक तेज जहर

Heroine (हेरोइन ध् स्मैक ध् वाइट लेडी)

स्वस्थ्य पर प्रभाव तेज साँस, तेज हृदय गति और बड़ा शारीर का तापमान, हिंसक व्यवहार, हृदयगति रुकना, फिट्स , ब्रेन हमरेज

8.3.4 मादक द्रव्य के दुरुपयोग का परिवार और समाज पर प्रभाव

मादक द्रव्यों के व्यसनी के प्रति परिवार की प्रतिक्रिया : मादक द्रव्यों के व्यसनी व्यक्ति के परिवार की प्रतिक्रियाओं में निम्नलिखित प्रमुख है :

i. **नकारना (Denial) :** व्यसनी व्यक्ति के परिवार के लोग सर्वप्रथम इस तथ्य से इनकार करते हैं, परंतु पुख्ता प्रमाण मिलने के पश्चात् भी व्यसनी के मादक द्रव्य सेवन को विभिन्न तर्कों एवं बहानों के द्वारा उचित ठहराने का प्रयास करते हैं साथ ही व्यसन ग्रस्त व्यक्ति को संदर्भित मादक द्रव्य के सेवन से रोकने के लिए विभिन्न शारीरिक एवं मनोवैज्ञानिक दबाव बनाना शुरू करते हैं।

ii. **समाज से विलगाव :** यदि परिवार के किसी व्यक्ति की व्यसन की समस्या, लंबे समय तक बनी रहती है तो धीरे-धीलरे परिवार स्वयं को विभिन्न सामाजिक गतिविधियों एवं समाज से काटने लगता है। ताकि परिवार की इस समस्या का अन्य लोगों को पता न चले।

iii. **अनियंत्रण :** कई बार व्यसनी के व्यसन के लंबे समय से प्रभावित हो रहा परिवार का सदस्य आत्मनियंत्रण खो बैठता है और व्यसनी के प्रति क्रोध एवं तिरस्कार का भाव प्रदर्शित करने लगता है।

iv. **परिवार की व्यवस्था का पुनर्गठन :** जब परिवार को लगने लगता है कि व्यसन ग्रस्त व्यक्ति में परिवर्तन की संभावनाएं क्षीण होती जा रही है तब परिवार के लोग पारिवारिक जिम्मदारियों का पुनर्आवंटन कर लेते हैं। वे चाहते हैं कि व्यसनी व्यक्ति भी हर संभव, इन जिम्मेदारियों में शामिल रहे। ऐसे में, परिवार के बड़े बच्चे पर सर्वाधिक प्रभाव तब पड़ता है जब व्यसनी व्यसनी परिवार का मुखिया हो। बच्चे को शिक्षा से दूर होकर, परिवार के जीविकोपार्जन एवं भरण-पोषण के लिए काम करने पर मजबूर होना पड़ता है।

v. **व्यसनी व्यक्ति को परिवार से अलग कर देना :** जब परिवार के सदस्यों को लगने लगता है कि व्यसनी व्यक्ति का व्यसन से मुक्त हो पाना कठिन है और उसके कारण परिवार को आर्थिक-सामाजिक मनोवैज्ञानिक समस्याओं का समाना करना पड़ रहा है तब परिवार के लोग व्यसनी को अलग-थलग कर देते हैं। इस अलग करने की तीव्रता व्यसनी के व्यसन की तीव्रता एवं उससे हो रहे नुकसान की गंभीरता पर निर्भर करती है और अति गंभीर स्थिति में व्यसनी को घर से बाहर निकालने से लेकर पति-पत्नी के बीच तलाक तक की नौबत आ सकती है।

vi. **व्यसनी को उसके हाल पर छोड़ देना :** अंतिम परिस्थिति में, परिवार के लोग, व्यसनी को पूर्णतया उसके हाल पर छोड़ देते हैं और उससे किसी भी प्रकार का संबंध रखने से दूर भागते हैं। कई बार अतिगंभीर स्थिति में, समाज के सामने उससे किसी भी प्रकार का संबंध होने से इनकार भी करते हैं।

बच्चों पर प्रभाव

यूनीसेफ (2007) के अनुसार

परिवार के किसी व्यक्ति के मादक द्रव्यों के सेवन का आदी हो जाने पर बच्चों पर उसका निम्नांकित दुष्प्रभाव होता है।

i. बच्चे की आधारभूत आवश्यकताएँ भोजन और पोषण की पूरी स्वास्थ्य, शिक्षा आदि नहीं हो पाती है।

ii. उम्र के साथ-साथ बच्चा शारीरिक एवं भावनात्मक उपेक्षा का शिकार हो सकता है। माँ-बाप के मादक द्रव्य दुरुपयोग का शिकार होने की वजह से, बच्चे उनसे धीरे-धीरे, सुरक्षात्मक युक्तियों के रूप में, दूर होने लगते हैं जो बाद के जीवन में भावानात्मक एवं सामाजिक विकृति पैदा कर सकते हैं।

iii. बच्चा मादक द्रव्यों के शिकार सदस्य की हिंसा का शिकार हो सकता है।

iv. एक बच्चे का बचपन छिन जाता है चूँकि उसे परिवार की अन्य जिम्मेदारियाँ, उठानी पड़ सकती हैं।

v. बच्चा झूठ बोलने के लिए मजबूर किया जा सकता है।

vi. यदि माता-पिता दोनों ही मादक द्रव्य के शिकार हों, तो सबसे बड़े बच्चे पर माता-पिता की देखभाल, छोटे भाइयों की देख-भाल आदि की जिम्मेदारी आ जाती है और उसे न पूरा करने पर, वह घरेलू हिंसा का शिकार हो सकता है।

vii. बच्चों में क्रोध, उदासी, उत्तेजना, शर्म, सामाजिक अलगाव आदि के मिश्रित लक्षण प्रकट हो सकते हैं।

viii. निरंतर मादक द्रव्यों के संपर्क में रहने की वजह से बच्चा भी मादक द्रव्यों के दुरुपयोग का शिकार हो सकता है।

ix. बच्चा तीव्र मनो-शारीरिक दबाव महसूस करता है। यदि मादक द्रव्य दुरुपयोग के कारण अभिभावकों के बीमार होने की स्थिति में आर्थिक कठिनाइयों का सामना करते हुए, पढ़ने की उम्र में ही, पैसे कमाने के लिए मजबूर हो सकता है।

परिवार के अन्य सदस्यों पर प्रभाव : मादक द्रव्यों के व्यसनी व्यक्ति का प्रभाव न केवल उस व्यक्ति पर, बल्कि घर के बच्चों पर क्या प्रभाव पड़ता है यह आपने पढ़ा। चूँकि परिवार वह छोटी इकाई है जिसमें प्रत्येक सदस्य एक दूसरे से भावनात्मक रूप से जुड़ा होता है। अत: प्रत्येक की गतिविधि अन्य व्यक्तियों, सदस्यों को प्रभावित करता है। व्यसनी व्यक्ति के परिवार में प्राय: कलहपूर्ण वातावरण होते हैं और सभी सदस्य तनावपूर्ण जीवन जीने के अभिशप्त होते हैं। इसके अलावा, परिवार में व्यसनी व्यक्ति अन्य महत्वपूर्ण एवं आवश्यक खर्चो में कटौती करके येन-केन प्रकारण अपने व्यसन को सर्वोपरि रखता है, फलत: परिवार आर्थिक तंगी का सामना करने को अभिशप्त होता है। इसके अतिरिक्त, परिवार में आए दिन होने वाले झगड़ों, एवं कलहपूर्ण माहौल के कारण परिवार की सामाजिक प्रतिष्ठा में उत्तरोत्तर गिरावट आती है। इसके अतिरिक्त यदि, यह व्यसन एक गरीब परिवार में है और व्यसनी को वांछित मादक द्रव्य की वांछित मात्रा उपलब्ध नहीं हो पा रही है, तो वह धीरे-धीरे अपराधिक कृत्यों की ओर अग्रसर होता है

ताकि उसे मादक द्रव्य उपलब्ध होते रहे हैं। इस क्रम में शुरुआत घर में चोरी, परिवार के सदस्यों आदि के साथ मार-पीट से होती है जो भविष्य में चोरी, डकैती जैसे गंभीर अपराध करने पर मजबूर कर देती है।

8.4 मादक द्रव्य दुरुपयोग एवं परामर्श(Substance Abuse Counselling)

8.4.1 मादक द्रब्य दुरुपयोग के शिकार व्यक्ति के लिए परामर्श की आवश्यकता

अभी तक आपने पढ़ा की परामर्श सामान्य अथोर्ं में किसी समस्या से ग्रस्त व्यक्ति के जीवन में परिवर्तन लाने की उस प्रक्रिया से है जिसमे परामर्शदाता व्यक्ति को परिस्थिति विशेष में अपनी परेशानियो को, उपलब्ध संसाधनों और सीमाओं में सफलता पूर्वक हल करने के संभव तरीके बताता है और प्रगति का आवधिक मूल्याङ्कन एवं आवश्यक संधोधन करता है। मादक द्रब्य दुरुपयोग के शिकार व्यक्ति के लिए परामर्श आवश्यक है क्यों की एक एक मादक द्रब्य का प्रयोग बंद कर देने पर व्यक्ति में कई मानसिक और शारीरिक समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं। परामर्श के दौरान परामर्शदाता प्रभावित व्यक्ति को नया – ष्टिकोण, अपनी तार्किक क्षमता का प्रयोग, सम्प्रेषण कुशलता, और विस्तृत जांचों के आधार पर देता है और उसे आपनी सकारात्मक पहचान को वापस प्राप्त करने में उसकी मदद करता है। जैसा की आपने पीछे पृष्ठों में देखा की मादक द्रब्यों के दुरूपयोग का विनाशकारी प्रभाव न केवल व्यक्ति के शारीरिक एवं मानसिक स्वस्थ्य पर बल्कि उसके वैयक्तिक संबंधों पारिवारिक संबंधों एवं सामाजिक जीवन पर भी पड़ता है। उपरोक्त विनाशकारी प्रभावों की वजह से उसके मस्तिष्क में एक डर बैठ जाता है जो उसे मादक द्रब्यों का प्रयोग करने के लिए प्रेरित करता रहता है ताकि वह उस मानसिक डर से बचा रहे।

व्यसन मुक्ति के लिए विशेष हस्तक्षेपरू

व्यक्ति के व्यसन मुक्ति के पीछे की अभिप्रेरणा का आकलन

इसका सामान्य अर्थ है कि प्रभावित व्यक्ति परिवर्तन के लिए कितना इच्छुक है इसका आकलन किया जाये यदि व्यक्ति इसके लिए जरा भी अभिप्रेरित नहीं है तब परामर्शदाता को व्यसन से हो रहे नुकसान और उसे छोड़ देने के फायदे बताकर सर्वप्रथम व्यक्ति को प्रेरित किया जाना चाहिए

मादक द्रब्यों के दुरुपयोग से ग्रस्त व्यक्ति के परामर्श में उपयोगी विशेष युक्तियाँ

8.4.2 संक्षिप्त हस्तक्षेप (Brief Intervention)

मादक पदाथोर्ं यथा (तम्बाकू, शराब, अफीम, भांग आदि) के सन्दर्भ में परामर्श एक चुनौतीपूर्ण कार्य है क्योकि कई बार इसके व्यसन से ग्रस्त व्यक्ति इसके प्रति अंनजान होते हैं अथवा अपनी इस आदत से बाहर आना नहीं चाहते परिवर्तन के प्रति उनकी अभिप्रेरणा अत्यंत कम होती है।कई बार व्यसंनग्रस्त व्यक्ति उपयुक्त सहयोग नहीं करता अथवा विभिन्न बहानो से अपनी आदत को सही साबित करने का प्रयास करते हैं।विभिन्न परामर्श की तकनीकों में संक्षिप्त हस्तक्षेप को आरंभिक दौर / अल्प व्यसन ग्रस्त व्यक्तिओं पर अत्यंत प्रभावी पाया गया है मनोसक्रिय पदाथोर्ं के व्यसनी व्यक्तिओं पर यह ज्यादा प्रभावी देखा गया है **।संक्षिप्त हस्तक्षेप का तात्पर्य व्यक्ति को न्यूनतम परामर्श प्रदान करते हुए मितव्ययी और समयबद्ध तरीके से विभिन्न युक्तिओं का सामूहिक प्रयोग कर के मुख्यतः मादक द्रब्यों की**

आवश्यकता को कम करने और उससे हो रहे नुकसान को न्यूनतम करने की कोशिश है (मल्होत्रा एवं मल्होत्रा, 2002)

संक्षिप्त हस्तक्षेप की ऊपर वर्णित परिभाषा का विश्लेषण करने पर निम्नाकित विसेॅतायें सामने आती हैं

- संक्षिप्त हस्तक्षेप में न्यूनतम आवश्यक परामर्श प्रदान किया जाता है।
- समस्या समाधान के लिए अल्पव्ययी तरीकों का प्रयोग किया जाता है।
- यह परामर्श की प्रक्रिया समयबद्ध होती है।
- संक्षिप्त हस्तक्षेप में एकाधिक युक्तिओं का सामूहिक प्रयोग किया जाता है।
- इसका मुख्या लक्ष्य मादक द्रव्य की आवश्यकता को कम करना और उस से हो रहे नुकसान को युनतम करना है।

संक्षिप्त हस्तक्षेप के चरण

पहचान (Identification) सर्वप्रथम विभिन युक्तिओं यथा व्यक्ति से साक्षात्कार, विबिन प्रश्नावली का प्रयोग, उसके परिवार आदि से पूछ कर उसके मादक द्रव्य के व्यसन की विस्तृत जानकारी एकत्र की जाती है और व्यक्ति के मादक द्रव्य की लत की पहचान की जाती है।

परिवर्तन के लिए व्यसंग्रस्त व्यक्ति कि आतंरिक इच्छा का आकलन इस उधेश्य के लिए व्यावहारिक परिवर्तन का **प्रोक्सका एवं देक्लेमेंट (घ‹Šˆ)** के आधार पर किया जा सकता है जो उस प्रक्रिया की व्याख्या प्रस्तुत करता है जिसके द्वारा व्यक्ति बिना इलाज के परिवर्तन की और अग्रसर होते हैं।

इसके अनुसार प्राकृतक परिवर्तन के निम्नाकित चरण होते हैं

पूर्वचिंतन चरण (Pre-contemplation) इस चरण पर व्यक्ति अपने जीवन से खुश होता है। अपनी आदत से उसे कोई परेशानी महसूस नहीं होती वह उसके दुष्परिणामों से से अंजन होता है अथवा वह उसे ज्यादा लाभप्रद समझता है।इस स्तर पर परामर्शदाता को चाहिए की वह पहले उसे मादक द्रव्यों के दुस्परिनाम और उसे शीघ्र छोड़ने के लाभ बता कर उसे सर्वप्रथम मादक द्रव्य छोडने के लिए प्रेरित करे।

चिंतन अवस्था (Contemplation) यह वह अवस्था है जब व्यक्ति अपनी लत छोड़ने के बारे में सोचने लगता है। इस स्तर पर वह मादक द्रव्य के फायदे और नुकसान के बारे में सोचने लगता है परन्तु उसे यह पता नहीं होता वह छोडे तो कैसे। इस स्तर पर परामर्श डाटा को चाहिए की वह उसका अभिप्रेरणा स्तर रखने में उसकी सहायता करे और और उसे अनुकूलित तरीकों और विकल्पों के बारे में बताये जिसके प्रयोग से वह अपनी आदत से छुटकारा पा सकता है। उसे उसके मजबूत पक्षों, जिनका प्रयोग करके वह अपने व्यसन से मुक्त हो सकता है के बारे में बताये और उसके फायदे के बारे में भी बताये।

निर्धारण / पुर्वतैयारी (Determination / Preperation) इस स्तर पर व्यक्ति मादक द्रव्य के फायदे और नुकसान को समझता है और अपने इस आदत को छोड़ने का जो अच्छा विकल्प उसे दिकता है उस पर अमल करना शुरू कर देता है। इस स्तर पर परामर्शदाता को चाहिए की वह उसे अन्य विकल्पों

के बारे में बताये और उसका अभ्प्रेरना स्तर बरक़रार रकने में उसकी मदद करे साथ ही वह उसे विस्तृत कार्य योजना बनाने में मदद करे।

कार्यात्मकता (Action) इस स्तर पर व्यक्ति अपनी योजना को पूरा करने में सक्रिय हो जाता है जैसे परामर्श दाता तक जाना, उसके सुझावों को मानना गृह काकार्य को पूरा करना आदि। इस स्तर पर परामर्शडाटा को चाहिए की वह उसके अभिप्रेरणा को बरक़रार रखने में लगातार उसकी मदद करे, उन परिस्थितिं को पहचानने में उसकी मदद करे जिसकी वजह से उसे फिर अपनी लत पर वापस जाने का खतरा हो।

निरंतरता (Maintainance) इस स्तर पर परामर्शदाता को व्यक्ति की अल्प मदद करते हुए उसे अपने व्यसन मुक्त आदत को निरंतर बनाये रखने के लिए प्रेरित करता रहे।

व्यसन मुक्ति या पुन: व्यसन की गिरफ्त में जाना (Either termination or relapse) लगातार मदद करते रहने पर व्यक्ति व्यसन मुक्त हो सकता है परन्तु निरंतरता के स्तर पर लापरवाही होने पर वह नशे की गिरफ्त में पुन: जा सकता है। पुन: नशे की गिरफ्त में जाना एक्स सामान्य बात है जिससे परामर्शदता को परेशां नहीं होना चाहिए। परामर्शदाता को इसके लिए पहले से तैयार होना चाहिए और इस परिस्थिति में अपने कार्य योजना की समीक्षा कर के आवश्यक संशोधनों के साथ पुन: कोशिश करनी चाहिए।

उपरोक्त विधि को निम्नलिखित शब्द संक्षेप के आधार पर अच्छे से समझा जा सकता है

FRAMES

F-Feedback यथोचित आकलन के द्वारा व्यक्ति को एक उपयुक्त पृष्ठ पोषण देना अर्थात उसके मादक द्रब्य प्रयोग की मात्र उसके फायदे नुकसान आदि

R-Resposibility व्यक्ति को सोचने और निर्णय लेने के लिए प्रेरित करना उसे उसकी अपनी जिम्मेदारिओं का एहसास कराना

A-Advice आकलन पर आधारित उपयुक्त सलाह देना

M-Menu समस्या के विस्तृत विश्लेषण के आधार पर कई विअक्ल्प प्रस्तुत करना

E-Empathy मैत्री पूर्ण और आत्मीय व्यव्हार

Self Efficacy व्यक्ति की स्वप्रभाविता के भाव को मजबूत करना

8.4.3 संकटकालीन परामर्श (Crisis Counselling)

मादक द्रब्यों का दुरूपयोग एक अत्यंत जटिल समस्या है, जिसमे कई बार सामान्य मनोवैज्ञानिक युक्तिओं के आलावा कुछ विशेष युक्तियां भी आवश्यक हैं **संकटकालीन परामर्श (Crisis Counselling)** उनमे से एक प्रमुख युक्ति है।

संकट कालीन परामर्श का उधेश्य मुख्यत: समस्याग्रस्त व्यक्ति की पिछला कार्यात्मक स्तर पुन: प्राप्त करने में सहायता प्रदान करना होता हैप् संकट कालीन परामर्श का मॉडल वारेन एल जोस द्वारा प्रतिपादित किया गया हैरू

A (Achieving Contact) व्यक्ति के साथ संपर्क बनायें

B (Boiling Down the problem to essentials) समस्या को यथासम्भव कम करना

C (Coping actively to the problem) समस्याओं का सक्रियता से सामना करना

व्यक्ति के साथ संपर्क बनाना (Achieving Contact) रू इस स्तर पर परामर्शदाता समस्याग्रस्त व्यक्ति के साथ मत्रिपूर्ण सम्बन्ध बनाने का प्रयास करता है ताकि व्यक्ति की समस्या उसकी प्रकृति एवं व्यक्ति के दैनिक जीवन पर उसका प्रभाव का विस्तृत अध्ययन एवं मूल्याकन किया जा सके। इस स्तर पर परामर्शदाता को चाहिए की व्यक्ति का स्वागत करते हुए संक्षेप में यथोचित आदर के साथ आपना परिचय दें तथा उसे अपनी समस्या विस्तृत रूप से बताने के लिए प्रेरित करेप् साथ ही वह व्यसन की समस्या से ग्रस्त व्यक्ति साथ मैत्री पूर्ण बिना शर्त स्वीकार करे, उसे यथोचित आदर दे और उसे अपनी भावनाओं की स्वतंत्र अभिव्यक्ति का पूर्ण अवसर प्रदान करेप्

समस्या को यथा संभव कम करना (Boiling Down the problem to essentials)रू समस्या ग्रस्त व्यक्ति द्वारा दी गई सूचनाओं का, मौखिक संकेतों एवं सूत्रों का विश्लेषण करे और उस से निम्नांकित सूचनाएं प्राप्त करने का प्रयास करे रू

1. समस्या बढ़ने वाले तथ्य
2. व्यसंग्रस्त व्यक्ति को व्यसन के कारन आ रही पारिवारिक एवं सामाजिक कठिनाइयाँ
3. व्यक्ति द्वारा कठिनाइयों का सामना करना की विधियाँ
4. व्यवधान जो व्यक्ति को इन कथिनैओन का सामना करने से रोक रही हों या भविष्य में रोक सकती हों
5. मादक द्रब्य दुरूपयोग के कारन व्यक्ति के कार्यात्मक स्तर में व्यावहारिक, सामाजिक, शैक्षिणिक, एवं व्यावसायिक क्षेत्रों में आ रही समस्याएं
6. इन सबकी वजह से व्यक्ति में उत्पन्न तनाव

इस स्तर पर परामर्शदाता को व्यक्ति का समस्या पूर्व व्यावहारिक, सामाजिक, व्यावसायिक और शैक्षिक क्रियात्मक स्तर का भी पता लगाना चाहिए तत्पश्चात तीसरे चरण में समस्याओं का सक्रियता से सामना करने की और बढना चाहिए

समस्याओं का सक्रियता से सामना करना (Coping actively with the problem)

यह संकटकालीन परामर्श का तीसरा एवं सबसे महत्वपूर्ण चरण है। समस्या के वृहत मूल्यांकन के पश्चात इस स्तर पर, परामर्शदाता की भूमिका अत्यंत महत्व पूर्ण हो जाती है। समस्या किस थिति का सामना करने के लिए, व्यक्ति को उपलब्ध संसाधनों उसकी निपुणताओं और सीमाओं का ध्यान रखा जाना अति आवश्यक है समस्याओं का सामना करने की इस प्रक्रिया के भी निम्नलिखित पांच उपचरण हैं।

लक्ष्य निर्धारित करना (Establishing goals)

सर्वप्रथम परामर्शदाता को, समस्याग्रस्त व्यक्ति की समस्या से उसे छुटकारा दिलाने के लिए समस्या के विभिन्न पहलुओं के आलोक में लक्ष्यध्लक्ष्यों का चुनाव करना चाहिए चुने गए दीर्घावधि लक्ष्यों को

छोटे छोटे मापनीय अल्पावधि लक्ष्यों में बांट दिया जाना चाहिए एक एक कर के प्रत्येक लघु अवधि लक्ष्यों की निर्धारित समय सीमा के बाद समीक्षा की जानी चाहिए

संसाधनों का पता लगाना (Identifying Resources)

इस उपचरण में समस्याग्रस्त व्यक्ति के पास उपलब्ध , बाह्य एवं आतंरिक उन संसाधनों की पहचान करता है जो उसे इस समस्या से निजत दिलाने में मदद कर सकते हैं

विकल्पों का निर्धारण (Formulating Alternatives)

इस उपचरण में उपलब्ध समस्त संसाधनों के प्रयोग से समस्या समाधान के विभिन्न विकल्पों पर विचार किया जाता है। एक बार सभी विकल्पों की सूची बनाने के बाद उसमे से अनूकुलतम विकल्प का चयन किया जाता है। मादक द्रव्य परामर्श के सन्दर्भ में इस चरण का महत्व ज्यादा है क्योंकी कई बार इसमें परामर्श के साथ साथ कुछ दवाओं की भी आव्यश्यकता हो सकती है और कई बार दुरुपयोग किये जा रहे मादक द्रव्य का सेवन अचानक बंद करा देना व्यक्ति को ज्यादा नुकसान पहुंचा सकता है।

विकल्पों की लागू करना (Implementation of Alternatives)

एक बार समस्या समाधान के विकल्पों पर विचार कर लेने के बाद उन विकल्पों को कार्य रूप में परिवर्तित करने की आवश्यकता होती है हो सकता है की व्यसन ग्रस्त व्यक्ति को विकल्पों की जानकारी न हो या वह उसका विरोध करे ऐसी स्थिति में परामर्श दाता व्यसनी व्यक्ति को विकल्पों के बारे में तार्किक रूप से विस्तृत जानकारी देकर उसे संतुष्ट करने का प्रयास करे उसे यह भी बताया जाना आवश्यक है की ये विकल्प उसके जीवन में कितना परिवर्तन ला सकते हैं

समीक्षा और पुनर्विश्लेषण (Follow up)

एक्स बार जब विकलप लागू कर दिए जाएँ तब निश्चित समयावधि पर परामर्श दाता द्वारा उसकी समीक्षा एवं पुनर्विश्लेषण किया जाना चाहिए

व्यक्ति के व्यसन मुक्ति के पीछे की अभिप्रेरणा का आकलन

इसका सामान्य अर्थ है कि प्रभावित व्यक्ति परिवर्तन के लिए कितना इच्छुक है इसका आकलन किया जाये यदि व्यक्ति इसके लिए जरा भी अभिप्रेरित नहीं है तब परामर्शदाता को व्यसन से हो रहे नुकसान और उसे छोड़ देने के फायदे बताकर सर्वप्रथम व्यक्ति को प्रेरित किया जाना चाहिए

एक परामर्शदाता के रूप में आप को चाहिए कि आप सर्वप्रथम निम्नांकित सूचना प्रभावित व्यक्ति से प्राप्त करने का प्रयास करेंरू

- मादक द्रव्य सेवन का विस्तृत विवरण
- प्रभावित व्यक्ति के मादक द्रव्य सेवन के कारण प्रभावित होने वाले अन्य सगे सम्बन्धी यथा माता पिता, भाई बहन, पुत्र पुत्री आदि
- प्रभावित व्यक्ति का सामाजिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमी
- दुरुपयोग किये जाने वाले द्रव्य की मात्रा आवृति और उसकी अवधि
- संदर्भित मादक द्रव्य का शारीरिक, सामाजिक, कानूनी, एवं मानसिक प्रभाव

- परामर्श की व्यक्ति सापेक्ष प्रभावी योजना

मादक द्रव्य दुरुपयोग की समस्या से ग्रस्त व्यक्ति के परामर्शदाता के रूप में आपसे आपेक्षित कौशलरू

- प्रभावित व्यक्ति के प्रति अपनत्व पूर्ण अभिवृति
- प्रभावित व्यक्ति के प्रति आदर और सम्मान
- वस्तुनिष्ठता
- उत्तम सम्प्रेषण कौशल
- उत्तम श्रवण कौशल
- उत्तम शाब्दिक सम्प्रेषण कौशल
- नेतृत्व की क्षमता

8.4.5 मादक द्रब्य दु रुपयोग की आदत से ग्रस्त व्यक्ति को परामर्श देने में सावधानियां

मादक द्रब्य दुरुपयोग की आदत से ग्रस्त व्यक्ति को परामर्श देते समय परामर्शदाता को निम्नलिखित विशेष सावधानियां बरतनी चाहिय

1. मादक द्रव्यों की आदत, उसके दुरूपयोग से उत्पन्न लक्षण, और अत्यधिक दुरूपयोग के दुस्परिनामों के बारे में विस्तृत जानकारी परामर्शदाता को होनी अत्यंत आवश्यक है।
2. प्राय: नकारात्मक संबोधन यथा शराबी अफीमची आदि संबोधन जो समाज में लोकप्रिय है के प्रयोग से परहेज किया जाना चाहिए।
3. मादक द्रव्यों का दुरुपयोग की आदत केवल व्यक्तिगत समस्या नहीं बल्कि एक पारिवारिक समस्या है, अत: इस आदत से ग्रस्त व्यक्ति के परामर्श की प्रक्रिया में जहाँ तक संभव हो, उसके परिवार वालों को भी समाहित करें और उनका सहयोग लें।
4. मादक द्रव्यों के लती व्यक्ति की प्रमुख समस्या मादक द्रब्य लेने की है जिसे वह छुपा सकता है अथवा उसे तकोर्ं द्वारा सही ठहराने का प्रयास कर सकता है।
5. व्यसन करता के नैतिक सामाजिक मूल्य एवं परिस्थित्ति विशेष में उसके अनुभव अन्य व्यक्तिओं, परामर्शदाता से अलग हो सकते हैं। उसके व्यक्तिगत विचारों को ध्यान से आदर सहित सुने और व्यक्तिक भिन्नता के अस्तित्व को स्वीकार करें।
6. व्यसन मुक्ति का यह कार्यक्रम व्यावहारिक एवं मापनीय शब्दों में लिखे एवं देर्घवधि लक्ष्य के साथ साथ अल्पावधि लक्ष्य भी निर्धारित करें ताकि उसकी प्रगति का सही मूल्याङ्कन किया जा सके।
7. व्यसन ग्रस्त व्यक्ति की समस्या सुनते, उसपर विचार करते एवं उसका पुनर्स्वास्थ्य लाभ कार्यक्रम बनाते समय उसके पारिवारिक, सामाजिक एवं आर्थिक वातावरण का ध्यान अवश्य रखें।

8. आरंभिक आकलन एवं मूल्याड्कन के आधार पर प्रभावित व्यक्ति को पारस्परिक व्यक्तिगत, पारिवारिक, एवं सामाजिक संबंधों की पुनर्स्थापना में सहायता करें।
9. संयम की योजना प्रारंभ में तात्कलिक हनी को कम करने वाली हों और ज्यादा कठिन न हों इसका ध्यान रखें।
10. व्यसन के आदी व्यक्ति के परिजनों को इस आदत से छुटकारा पाने में उसकी मदद करने के लिए प्रेरित करें।

8-5 सारांश

अब तक संदर्भित इकाई में आपने मादक द्रव्यों की संकल्पना और मादक द्रव्य दुरूपयोग परिभाषाओं के बारे में पढ़ा। मादक द्रव्यों औषधियों का अति प्रयोग जो व्यक्ति में विभिन्न प्रकार के विकारों को जन्म देती है और व्यक्ति को उसका आदी बना लेती है, मादक द्रव्य दुरूपयोग कहलाता है। मादक द्रव्यों के दुरूपयाग का इतिहास मानव सभ्यता जितना ही पुराना है।

आगे आपने पढ़ा कि अलग अलग मानदडों के आधार मादक द्रव्यों को अलग अलग प्रकार माने गये हैं। व्यक्ति के उपर पड़ने वाले मनोषारीरिक प्रभावों के आधार पर पीडानाषक, उत्तेजक और अवसादक उनकी उत्पत्ति के आधार पर प्राकृतिक, कृत्रिम, और अर्द्ध कृत्रिम एवं उनकी कानूनी मान्यता के आधार के कानूनी और गैर कानूनी द्रव्यों की श्रेणियों में बांटा गया है। मादक द्रव्यों के दुरूपयोग के प्रमुख कारणों में व्यक्ति की चिंता दुख, अकेलापन, मित्रों का स्वाब आदि प्रमुख हैं। मादक द्रव्यों के दुरूपयोग के सामान्य लक्षणों में भूख की कमी, नींद न आना, उनींदापन, घ्राण क्षमता का हास, भ्रम, विनम्र आदि हैं। मानक द्रव्यों के व्यसनी व्यक्ति के प्रति उसके परिवार की प्रतिक्रिया और उसका व्यसनी व्यक्ति के परिवार एवं समाज पर पड़ने वाले प्रभावों के मादक द्रव्यों के बारे में भी आपने सीखा।

मादक द्रव्यों की आदत से ग्रस्त व्यक्ति के लिये परामर्श की विभिन्न विधियों तथा संक्षिप्त हस्तक्षेप और संकटकालीन मादक द्रव्य दुरूपयोग ग्रस्त व्यक्ति के परामर्श के दौरान बहती जानी वाली सावधांनियां भी सीखी।

8.6 अभ्यास प्रश्न

1 मादक द्रव्यों दुरूपयोग की परिभाषा दें और उसके कारणों की चर्चा करें।
2 मादक द्रव्यों के विभिन्न प्रकारों का वर्णन करें।
3 मादक द्रव्य दुयपयोग से ग्रस्त व्यक्ति के विभिन्न लक्षणों का उल्लेख करें।
4 मादक द्रव्य के दुरूपयोग का व्यक्ति के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों का वर्णन करें।
5 मादक द्रव्य के दुरूपयोग का व्यक्ति के परिवार और बच्चों पर पड़ने वाले प्रभावो का वर्णन करें।
6 मादक द्रव्यों के दुष्प्रभाव का संक्षिप्त इतिहास का वितरण दें।
7 मादक द्रव्यों के दुरूपयोग से ग्रस्त व्यक्ति के लिये परामर्श बतायें और उसके परामर्श की विधियों की चर्चा करें।

8 संकटकालीन परामर्श की विधि की व्याख्या मादक द्रव्यों द्रव्य दुरूपयोग ग्रस्त व्यक्ति के परामर्श के संदर्भ में करें।

8.7 संदर्भ ग्रंथ

- यूनीसेफ (2007), मादक द्रव्य दुरुपयोग एवं बच्चों एवं युवाओं पर इसका प्रभाव विभिन्न तथ्य
- मादक द्रव्य दुरुपयोग और परामर्श(2013) गुल्ली बाबा प्रकाशन, नयी दिल्ली
- मादक द्रव्य दुरुपयोग मनो सामाजिक हस्तक्षेप मैन्युअल (2002) निमहांस, बैंगलोर
- मादक द्रव्य दुरुपौयोग विभिन तथ्य (2011) डब्लू एच् ओ
- विश्व मादक द्रव्य रिपोर्ट (2013) डब्लू एच् ओ
- http://www.forcon.ca/learning/drug_abuse.html
- http://www.infoplease.com/encyclopedia/science/drug-addiction-drug-abuse-history.html
- http://www.ibogaine.desk.nl/drugmain.html
- http://www.unicef.org/malaysia/Drug_Abuse_and_its_Impact_of_Children.pdf
- http://www.unodc.org/unodc/en/drug-trafficking/index.html:

इकाई – 9

मानसिक स्वास्थ्य और परामर्श

इकाई की संरचना

9.0 उद्देश्य
9.1 प्रस्तावना
9.2 मानसिक स्वास्थ्य का अर्थ
9.2.1 मानसिक स्वास्थ्य के तत्व
9.2.2 मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति की विशेषताएं
9.2.3 मानसिक स्वास्थ्य का महत्व
9.2.4 मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारक
9.2.5 मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाते के उपाय
9.3 मानसिक स्वास्थ्य संबंध समस्याएं व परामर्श
9.3.1मानसिक तनाव
9.3.2 चिन्ता विकृति
9.3.3 दुश्चीर्ति
9.3.4 भीषिका विकृति
9.4 सारांश
9.5 बोध प्रश्न

9.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

- मानसिक स्वास्थ्य का अर्थ बता सकेंगे।

- मानसिक स्वास्थ्य के विभिन्न तत्वों को बता सकेंगे।
- मानसिक स्वास्थ्य के विभिन्न क्षेत्रों की व्याख्या कर सकेंगे।
- मानसिक स्वस्थ्य पर व्यक्ति के जीवन चर्चा करने मे सक्षम होगे।
- मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों की व्याख्या कर सकेंगे।
- विभिन्न प्रकार की स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं व अर्थ व उनमें परामर्श का योगदान।

9.1 प्रस्तावना

आधुनिक जगत में विभिन्न मानसिक रोग इतने विविध और जटिल हैं कि किसी एक परिस्थिति को किसी एक रोग के कारण नहीं कहा जा सकता। किसी एक मानसिक रोग की व्याख्या और विष्लेशण करने के लिए व्यक्ति के जीवन से संबंधित सम्पूर्ण परिस्थितियों, घटनाओं और अनुभव का अध्ययन करना पड़ेगा। प्राय: सभी व्यक्तियों के सामने ऐसी दबावपूर्ण स्थितियां उत्पन्न होती हैं जिनका सामना करने में वह असमर्थ होता है। वे सभी स्थितियों व्यक्ति को असामान्य बनाती है और उसका व्यवहार असामान्य हो जाता है। जो प्रकारातंर से व्यक्ति को मानसिक एवं शारीरिक रूप से प्रभावित करता है। वर्तमान समय में मानसिक स्वास्थ्य पर ध्यान देने की की आवश्यकता दिन पर दिन बढ़ती जा रही है तेज दोड़ती दिनचर्या, प्रतिस्पर्धा व प्रतियोगिता युग में यह जरूरी है कि व्यक्ति का मानसिक स्वास्थ्य बना रहे।

9.2 मानसिक स्वास्थ्य का अर्थ

मानसिक स्वास्थ्य सामान्यत: यह समझा जाता है कि जब व्यक्ति किसी भी तरह की मानसिक बीमारी से मुक्त हो और उसकी इस अवस्था को मानसिक स्वास्थ्य की संज्ञा दी जाती हैं। कुछ चिकित्सकों का मत है कि मानसिक स्वास्थ्य को मानसिक बीमारी की अनुपस्थिति कहना उपयुक्त नही दीख पड़ता है। क्योंकि मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति में भी कभी-कभी मानसिक बीमारी के लक्षण जैसे- आवेगशीलता सांवेगिक अस्थिरता, अनिद्रा आदि के लक्षण दिखाई पड़ते हैं इसलिए आधुनिक नैदानिक मनोवैज्ञानिक ने मानसिक स्वास्थ्य को समायोजनशीलता की क्षमता को मुख्य कसौटी मानकर इसे परिभाषित किया हैं इसी संदर्भ में स्ट्रेन्ज ने मानसिक स्वास्थ्य को इसे परिभाषित करते हुए कहा है, ''मानसिक स्वास्थ्य से तात्पर्य वैसे सीखे गए व्यवहार से होता हे जो सामाजिक रूप से अनुकूली होते है। और जो व्यक्ति को अपनी जिन्दगी के साथ पर्याप्त रूप से मुकाबला करने की अनुमति देता है।'' हारविज तथा स्कीड ने मानसिक स्वास्थ्य को इस प्रकार परिभाषित किया है,''मानसिक स्वास्थ्य में कई आयाम सम्मिलित होते हैं-आत्म-सम्मान, अपने अंतशक्तियों का अनुभव, सार्थक एवं उत्तम संबंध बनायें रखने की क्षमता तथा मनोवैज्ञानिक श्रेष्ठता।''

कार्ल मेनिंगर के अनुसार ''मानसिक स्वास्थ्य अधिकतम खुशी तथा प्रभावशीलता के साथ वातावरण एवं उसके प्रतयेक दूसरे व्यक्ति के साथ मानव समायोजन है- वह एक संतुलित मनोदशा, सतर्क बुद्धि, सामाजिक रूप से मान्य व्यवहार तथा एक खुश मिजाज बनाए रखने की क्षमता है।''

इन परिभाषाओं का विश्लेषण करने पर हमें मानसिक स्वास्थ्य के स्वरूप के बारे में निम्नांकित तत्व प्राप्त होते हैं-

(i) मानसिक स्वास्थ्य की मूल कसोटी अर्जित व्यवहार हैं इस तरह का व्यवहार का स्वरूप कुछ ऐसा होता है जिससे व्यक्ति को सभी तरह के समायोजन करने में मदद मिलती है।

(ii) मानसिक स्वास्थ्य एक संतुलित मनोदशा की अवस्था होती है, जिसमें व्यक्ति अपने जिन्दगी के विभिन्न हालातों में समाजिक तथा सांवेगिक रूप से एक मान्य व्यवहार बनाए रखता है।

DSM-IV (1994) के अनुसार

प्रत्येक मानसिक विकृति को एक नैदानिक रूप से साथ व्यवहारपरक या मनावैज्ञानिक संलखण या पैटर्न जो व्यक्ति में उत्पन्न होता है, के रूप में समझा गया हैं ओर यह वर्तमान तकलीफ या नियोग्यता से संबंधित है। चाहे उसका मौलिक कारण जो भी हो, इसमें वर्तमान समय में व्यक्ति में व्यवहारपरक मनोवैज्ञानिक या जैविक दुष्क्रिया की अभिव्यक्ति अवश्यक मानी गयी है। न तो कोई विचलित व्यवहार (जैसे राजनैतिक, धार्मिक या लैगिंक) और न ही व्यक्ति तथा समाज के बीच होने वाला संघर्ष को मानसिक रोग माना जा सकता है अगर ऐसा विचलन या संघर्ष व्यक्ति में दुष्क्रिया का लक्षण हो।''

डेविड मैकानिक ने मानसिक बीमारी को इस ढंग से परिभाषित किय है, ''मानसिक बीमारी एक तरह का विचलित व्यवहार है। इसकी उत्पति तब होती है जब व्यक्ति की चिंतन प्रक्रियाएँ, भाव एवं व्यवहार सामान्य प्रत्याशाओं या अनुभवों से विचलित होते है तथा प्रभावित व्यक्ति या समाज के अन्य लोग इसे एक ऐसी समस्या के रूप में परिभाषित करते हैं जिसमें हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है।'' यदि हम मानसिक बीमारी की उक्त परिभाषाओं पर ध्यान दे तो यह स्पष्ट होगा कि सामान्यत: मानसिक बीमारी के दो पहलू होते हैं-

(i) मानसिक बीमारी से उत्पन्न चिंतन, भाव एवं व्यवहार व्यक्ति के लिए दुखदायी या विघटनकारी होता है।

(ii) यह समस्या व्यक्ति में किसी न किसी दुष्क्रिया के कारण उत्पन्न होता हैं। दूसरे शब्दों में, मन या उसके शरीर का कोई न कोई पहलू उस ढंग से काम नही कर रहा होता है जिस ढग से उसे कार्य करना चाहिए।

मानसिक बीमारी तथा मानसिक स्वास्थ्य में अंतर निम्नांकित बिंदुओं पर मोटे तौर पर किया जा सकता हैं :-

1. मानसिक बीमारी में सामान्यत: व्यक्ति में समायोजन संबद्ध समस्याएँ प्रधान होंती हैं परंतु मानसिक स्वास्थ्य में सामान्यत: व्यक्ति को समायोजन संबद्ध कठिनाएयाँ या समस्याएँ न के बराबर होती हैं।
2. मानसिक बीमारी में उपचार एक अहम् पहलु होता है। यदि उसका उपचार नहीं किया जता है, तो उसकी उग्रता तीव्र होती जाती है। परंतु मानसिक स्वास्थ्य में उपचार जैसे पहलु की अहमियत नहीं होती है। भले ही उसे उन्नत बनाने के लिए कुछ सुधारात्मक उपाय की जरूरत पड़ती है।

3. अधिकतर मानसिक बीमारियों का एक स्पष्ट जैविक आधार होता है। इस तथ्य की पुष्टि अनेकों अध्ययनों से हो चुकी है। यही कारण है कि हम पाते हैं कि अगर किसी व्यक्ति में कोई मानसिक रोग है, तो उसके संतानों में भी संबद्ध मानसिक रोग उत्पन्न होने की संभावना बढ जाती है।
4. मानसिक बीमारी तथा मानसिक स्वास्थ्य में मानसिकों रोगों का अध्ययन नैदानिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा और तुलनात्मक रूप से अधिक गया हैं, क्योंकि यह समाज के लिए और स्वयं व्यक्ति के लिए भी एक बड़ी चुनौती के समान है।
5. मानसिक बीमारी के अध्ययन क्षेत्र की व्यपकता मानसिक स्वास्य के अध्ययन क्षेत्र की व्यापकता से काफी अधिक है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि मानसिक स्वास्थ्य एवं मानसिक रोग एक दूसरे से किस प्रकार भिन्न है।

9.2.1 मानसिक स्वास्थ्य के तत्त्व

मानसिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में किए गए विभिन्न अध्ययनों को कुछ मनोवैज्ञानिकों जैसे-कार्ल रोजर्स, मैसलो एवं मिटिलमैन एवं मिटिलपैन(Maslow & Mittleman,1951) द्वारा समीक्षा की गयी और उसके आधार पर कुछ ऐसे सूचकों की सूची तैयार की है जिसे धनात्मक मानसिक स्वास्थ्य का प्रमुख तत्व के समझा गया हैं जिनमें निम्नांकित को महत्वपूर्ण बतलाए गए हैं:-

1. सामान्य वर्धन एवं विकास (normal growth and development)
2. अपने प्रति उचित मनोवृत्ति (appropriate attitude towards self)
3. भविष्य की ओर उन्मुखता (orientation towards future)
4. स्वतंत्रता (autonomy)
5. अधिकतम स्तर तक अपनी क्षमता का उपयोग करना
6. जिन्दगी के प्रति समन्वित दृष्टिकोण तथा तनाव के प्रति प्रतिरोध
7. वास्तविकता का प्रत्यक्षण तथा आवश्यकता विकृति से स्वतंत्रता
8. अहम् पहचान का ज्ञान
9. स्वस्थ्य आत्म-सामान पर आधारित ज्ञान
10. अन्य लोगों के साथ स्नेह एवं विश्वास का भाव कायम करना
11. सुरक्षा का भाव
12. तर्कसंगत निर्भरता
13. तर्कसंगत आक्रामकता
14. समूह की आवश्यकताओं को सम्पन्न करने की क्षमता
15. उत्तम अन्तवैयक्तिकघनिष्ठता विकसित करने की क्षमता
16. अनुभवों में खुलापन
17. कल्याणकारी संवेगों जैसे खुशी, हर्ष, सुखद भाव आदि उत्पन्न करने की क्षमता

18. प्रयोगात्मक आँकड़ों के अनुरूप उचित संकेतीकरण का प्रयोग।
19. नवीनतम क्षणों के साथ सर्जनात्मक अनुकूलन
20. अपने अनुभवों के साथ आत्म-संरचनाओं की संगतता
21. लचीलापन

जहोड़ा ने समीक्षा करके यह बताया है कि धनातमक मानसिक स्वास्थ्य के निम्नांकित छह प्रमुख तत्त्व होते है:-

1. आत्मन् के प्रति धनात्मक मनोवृत्ति
2. आदर्श वर्धन, विकास एवं आत्म-सिद्धि
3. मानसिक समन्वय
4. वैयक्तिक स्वतंत्रता
5. वातावरण का वास्तविक प्रत्यक्षण
6. पर्याप्त वातावरणीय निपुणता

स्कौट ने अपने समीक्षा के आधार पर मानसिक स्वास्थ्य के निम्नांकित सात प्रमुख तत्व बताये हैं:-

1. समायोजनशीलता एवं लचीलापन
2. अपनी आवश्यकताओं को संतुष्ट करने की क्षमता
3. अन्य लोगों के साथ सम्पर्क एवं सद्भाव बनाए रखने की क्षमता
4. बौद्धिक क्षमता
5. सांवेगिक नियंत्रण
6. स्वतंत्रता, उत्पादकता एवं अपने मूल्य का ज्ञान
7. समन्वय एवं साम्यधारण

ए.के.सिंह एवं डॉ अल्पना सेनगुप्ता (1989) ने धनात्मक मानसिक स्वास्थ्य के विभिन्न तत्वों की समीक्षा करके निम्नांकित छह तत्वों को सर्वोपरि माना है-

1. समायोजन (adjustment)
2. सांवेगिक स्थिरता (emotional stability)
3. बुद्धि (intelligence)
4. स्वतंत्रता (security-insecurity)
5. सुरक्षा-असुरक्षा (security-insecurity)
6. क्रिया-स्तर (activity-level)

इस प्रकार हम देखते है कि स्पष्ट हुआ कि मानसिक स्वास्थ्य के कई तत्व हैं। जिनके संयोग से धनात्मक मानसिक स्वास्थ्य के संप्रत्यय का प्रादुर्भाव हुआ है।

9.2.2 मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति की विशेषताएं

नैदानिक मनोवैज्ञानिकों ने मानसिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्तियों की कुछ खास-खास विशेषताओं का उल्लेख किया हैं जिनमें निम्नांकित प्रमुख है:-

1. आत्म-ज्ञान :-मानसिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्ति की एक प्रमुख विशेषता यह है कि उसे अपनी प्रेरणा, इच्छा, भाव, आकांक्षाओं आदि का पूर्ण ज्ञान होता है। वह यह पूर्णत: समझता है कि वह क्या कर रहा है, क्यों उसमें अमुक ढंग का भाव उतपन्न हो रहा है, उसकी आकांक्षाएँ क्या हैं, आदि आदि।

2. आत्म-मूल्यांकन - मानसिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्ति आसानी से अपने गुण-दोष की परख कर लेता है। वह अपने प्रत्येक व्यवहार को तटस्थ होकर अध्ययन करता है तथा अपने व्यवहार की परिसीमाओं की परख करता है।

3. आत्म-श्रद्धा - मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति में आत्म-श्रद्धा काफी होती है। जिसके कारण उसमें आत्म-विश्वास, आत्म-बल तथा अपने भावों को स्वीकार करते हुए कार्य करने की क्षमता होता है।

4. सुरक्षा का भाव :- मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति में यह भावना तीव्र होती हैं कि वह समाज का स्वीकृत सदस्य है तथा लोग उसके भाव का आदर करते हैं वह दूसरों के साथ निडर होकर अन्त: क्रिया करता हैं तथा खुलकर हँसी-मजाक में भाग लेता हैं समूह का दबाव पड़ने के बावजूद भी वह अपनी इच्छाओं को दमित नहीं करने की कोशिश करता है।

5. संतोषजनक संबंध बनाए रखने की क्षमता :- मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति की एक विशेषता यह है कि दूसरों के साथ संतोषजनक संबंध बनाए रखने से प्रसन्न होते हैं। वह कभी भी दूसरों के सामने अवास्तविक माँग नहीं पेश करता है। फलस्वरूप, उसका संबंध दूसरों के साथ हमेशा संतोषजनक बना रहता है।

6. शारीरिक इच्छाओं की संतुष्टि :- मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति की यह भी एक विशेषता है कि अपने शरीरिक अंगों के कार्यों के प्रति एक स्वच्छ एवं धनातमक मनोवृत्ति रखता है। वह अनके कार्यों से पूर्णरूपेण अवगत रहते हुए भी उसमें किसी प्रकार की आसक्ति नहीं दिखलाता है।

7. उत्पादी एवं खुश रहने की क्षमता :- मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति अपनी क्षमता को उत्पादी कार्य में लगाते हैं तथा उससे वे काफी खुश रहते हैं वह ऐसे कार्य में अच्छा उत्साह एवं मनोबल दिखलाता है और अपने को खुशमिजाज साबित करता है।

8. तनाव एवं अतिसंवेदनशीलता की अनुपस्थिति :- मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति में मानसिक तनाव उत्पन्न नहीं हो पाता है और यदि कभी हुआ भी तो वह तुंरत ही नियंत्रित कर लिया जाता है। ऐसे व्यक्ति दूसरों द्वारा किए गए प्रशंसा या आलोचना का प्रभाव अपने ऊपर अधिक नहीं पड़ने देते हैं दूसरे शब्दों में, इसमें संवेदनशीलता के गुण की कमी होती है।

9. अच्छा शारीरिक स्वास्थ्य :- मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति की एक विशेषता यह भी होती हे कि इनका शारीरिक स्वास्थ्य अच्छा एवं आकर्षक होता हैं यह विशेषता उस कहावत से जुड़ी हुई है कि स्वस्थ मस्तिष्क स्वस्थ शरीर में रही रहता है।

10. जिन्दगी का एक स्पष्ट सिद्धान्त :- मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति अपने जीवन में कुछ ठोस सिद्धान्त के अनुकूल कार्य करते हैं। ऐसे व्यक्तियों के सिद्धान्त में मानसिक संघर्ष, विरोधाभास जैसी चीजों की सर्वथा कमी होती है।

11. वास्तविक प्रत्यक्षण :- मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति किसी वस्तु, घटना या चीज का प्रत्यक्षण वस्तुनिष्ठ ढग से करते हैं। वे इन चीजों का प्रत्यक्षण ठीक उसी ढंग से करने की कोशिश करते हैं जो वास्तविक होता है। वे अपनी ओर से प्रत्यक्षण करते समय कुछ काल्पनिक तथ्यों का सहारा नहीं लेते हैं।

12. स्पष्ट जीवन लक्ष्य :- मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति का एक स्पष्ट जीवन लक्ष्य होता है। वह जीवन लक्ष्य को निर्धारित कर उसे प्राप्त करने का हर संभव प्रयास करता है। प्राय: वह अपने जीवन लक्ष्य निर्धारित करने में अपनी क्षमताओं, योग्यताओं एवं दुर्बलताओं को मद्देनजर रखता है।

स्पष्ट हुआ कि मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति की कुछ खास-खास विशेषताएँ होती हैं, जिसके आधार पर उसकी पहचान की जाती है तथा उसे एक मानसिक रोगी से भिन्न समझा जाता है।

9.2.3 मानसिक स्वास्थ्य का महत्व

मनोविज्ञान में मानसिक स्वास्थ्य तथा मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान की महत्वपूर्ण स्थान रखता है। काफी बतायी गयी है। मानसिक स्वास्थ्य के महत्वों को निम्नलिखित ढंग से उजागर किया गया है:-

1. निरोधात्मक, उपचारात्मक एवं संरक्षणात्मक महत्व:- नैदानिक मनोवैज्ञानिकों के द्वारा व्यक्तियों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन सिर्फ इसलिए नहीं किया जाता हे कि ऐसे व्यक्तियों की पहचान करके उन्हें कुसमायोजित एवं असंतुलित व्यक्तियों से अलग रखा जाए तथ कुसमायोजित एवं असंतुलित व्यक्तियों को फिर ठीक ढंग से उपचार किया जासके ताकि वे भी मानसिक रूप से स्वस्थ हो जाए, बल्कि इसलिए भी किया जाता है कि मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति अपनी समायोजनशीलता को और भी अधिक उत्तम एवं आदर्श बना सके ताकि उसके व्यवहार को एक मॉडल मानकर अन्य लोग भी वैसा ही व्यवहार करने के लिए प्रेरित हों।

2. बाल मार्गदर्शन संबंधी महत्व:- बाल मार्गदर्शन में मानसिक स्वास्थ्य एवं मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के नियमों एवं सिद्धान्तों की महिमयत काफी बतायी गयी हैं। बाल मार्गदर्शन का उद्देश्य बालकों का संवेगात्मक विकास, शारीरिक विकास तथ मानसिक विकास, सामाजिक विकास, शैक्षणिक विकास आदि जो तभी किया जा सकता है। इन्हें तभी किया जाना संभव हैं जब बालक के मानसिक स्वास्थ्य ठीक हो या उनके मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने के लिए पर्याप्त उपाय किए गए हों। बाल मार्गदर्शन में स्कूल के शिक्षकों एवं माता-पिता की भूमिका अहम होती हैं शिक्षक तथा माता-पिता क्रमश: स्कूल एवं घर में बच्चों के सर्वांगीण विकास के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाते हैं उनका यह प्रयास तभी सफल हो पाता हैं जबकि बालकों के मानसिक स्वास्थ्य की उचित देख-रेख की गयी हो। मानसिक रूप से स्वस्थ बच्चों को

वास्तविकता का समुचित ज्ञान रहता हैं तथा वे सर्वांगीण विकास के लिए किये गए प्रयासों का भरपूर फायदा भी उठाने में सफल हो पाते है।

3. **व्यक्ति संबंधी महत्व:-** मानसिक स्वास्थ्य का महत्व व्यक्ति विकास में भी काफी हैं। व्यक्ति के बौद्धिक, शारिरिक एवं संवेगात्मक विकास तभी तीव्र व सही होसकते है। जब वह मानसिक रूप से स्वस्थ हो। यह आवश्यक है कि उसके व्यक्तित्व में संतुलन हो एवं उसका मानसिक स्वास्थ्य अच्छा हो।

4. **सामाजिक महत्व :-** मानसिक स्वास्थ्य का सामाजिक महत्व भी है। मानसिक स्वास्थ्य से सामाजिक जीवन में जागरूकता आता है और समाज का चौमुखी विकास होता है। जब किसी समाज के अधिकतर व्यक्तियों का मानसिक स्वस्थ उत्तम होता है तो उससे समाज का मनोबल ऊँचा होता है तथा उनमें संगठनातमक प्रक्रियाएँ सक्रिय होती है। इससे समाज का भविष्य सुरक्षित रहता हैं तथा समाज कल्याणकारी दिशा में अग्रसर रहता हैं। समाज का मानसिक रूप से स्वस्थ नेता मिलता हैं जिनके नेतृत्व में फिर समाज का सर्वांगीण विकास संभव हो पाता है।

इस प्रकार आपने देखा कि मानसिक स्वास्थ्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है। शायद यही कारण है कि नैदानिक मनोवैज्ञानिक मानसिक स्वास्थ्य को एक महत्वपूर्ण संप्रत्यय मानते है।

9.2.4 मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारक

नैदानिक मनोवैज्ञानिकों ने कुछ ऐसे कारकों की पहचान की है जिनसे व्यक्ति का मानसिक स्वास्थ्य प्रभावित होता है। इन कारकों में निम्नांकित प्रमुख है:-

1. **शारीरिक स्वास्थ्य :-** कई मनोवैज्ञानिक अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि शारीरिक स्वास्थ्य तथा मानसिक स्वास्थ्य में गहरा संबंध हैं जिस व्यक्ति का शारीरिक स्वास्थ्य उत्तम होता है उनमें सामान्यत: चिन्ता, संघर्ष, विरोधाभास आदि नकारात्मक तत्व नहीं होते हैं। शारीरिक रूप से होने स्वस्थता के कारण उनमें शारीरिक ऊर्जा पर्याप्त होती है और उनमें कार्य संतोष भी अधिक रहता है। फलस्वरूप, इनका मानसिक स्वास्थ्य उत्तम रहता है।

2. **प्रमुख आवश्यकताओं की संतुष्टि:-** प्रत्येक व्यक्ति की कुछ आवश्यकताएँ होती हैं जिनमें से कुछ प्रमुख होती हैं तथा कुछ गौण होती है। जिस व्यक्ति की सभी प्रमुख आवश्यकताओं की तुष्टि हो जाती है तथा अधिकतर गौण आवश्यकताओं की पूर्ति हो जानी है, तो उसका मानसिक स्वास्थ्य भी उत्तम हो जाता हैं इसका प्रधान कारण यह है कि ऐसे व्यक्तियों में किसी प्रकार का मानसिक द्वन्द्व या संघर्ष नहीं रह जाता है तथा उनमें आत्म-संतुष्टि की भावना बढ़ जाती है।

3. **परिवार के सदस्यों का मानसिक रोग से पीड़ित नहीं होना :-** कुछ नैदानिक मनोवैज्ञानिकों जैसे :- शेफर का मत है कि कुसमायोजित व्यवहार अर्जित होते हैं। यदि परिवार का कोई सदस्य विशेषकर यदि माता-पिता या अन्य कोई महत्वपूर्ण व्यक्ति मानसिक रूप से बीमार होता है, तो व्यक्ति उनके व्यवहारों से प्रभावित होकर स्वयं भी वैसा ही करने लगता है। इससे उनके मानसिक स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है और वह भी अपना मानसिक संतुलन खोने लगता है और वह धीरे-धीरे रोग का शिकार हो जाता है।

4. **वास्तविकता को स्वीकार करने वाली मनोवृत्ति की कमी :-** यदि व्यक्ति में किसी कारण से वास्तविकता से हटकर काल्पनिक दुनिया में विचरण करने की आदत बन जाती है, तो ऐसे व्यक्तियों में घटनाओं , वस्तुओं एवं व्यक्तियों के प्रति एक तरह का अवास्तविक मनोवृत्ति विकसित हो जाती हैं। अवास्तविक मनोवृत्ति के विकसित हो जाने से उनमें आवेगशीलता, सांवेगिकता, अनियंत्रण, चिड़चिड़ान आदि के लक्षण विकसित हो जाते है और उनका मानसिक स्वास्थ्य धीरे-धीरे खराब हो जाता है।

5. **असामाजिक वातावरण :-** फेयर्स ने कुछ ऐसे सबूत प्रदान किये हैं जिनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि जब व्यक्ति को अस्वास्थ्यकर, अनैतिक एवं असामाजिक वातावरण में लगातार रहते हुए बहुत दिनों तक अन्त:क्रिया करना होता है, तो उससे उसमें दोष भाव एवं आत्म निन्दा की भावना विकसित हो जाती है। जो धीरे-धीरे व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य को कमजोर करते जाते हैं। फेयर्स ने 40 ऐसे केसेज का साक्षात्कार किया है जिनका मानसिक स्वास्थ्य पहले अच्छा था परन्तु बाद में काफी गिर गया था। इनके साक्षात्कार से पता चला कि इसमें से अधिकतर व्यक्तियों ने सामाजिक एवं नैतिक रूप से नकारात्मक वातावरण में आ जाने के फलस्वरूप अपने में उत्पन्न हीनता का भाव, दोष-भाव एवं आत्म-निन्दा को ही अपने बुरे मानसिक स्वास्थ्य का कारण बतलाया।

6. **मनोरंजन के साधनों का अभाव :-** मैकोवर ने पर्याप्त मनोरंजन एवं मानसिक स्वास्थ्य में सीधा संबंध बताया हैं इनका मत है कि यदि किसी व्यक्ति को उसकी इच्छानुसार पर्याप्त मनोरंजन के साधन उपलब्ध हैं तो उसका मानसिक स्वास्थ्य अच्छा होता है। परन्तु यदि किसी कारण से किसी व्यक्ति को उसकी इच्छानुसार पर्याप्त मनोरंजन नहीं हो पाता है, तो उससे घुटन उत्पन्न हो जाती है जो धीरे-धीरे उनके मानसिक स्वास्थ्य को कमजोर करता देता है।

जैसा कि आपने देखा मानसिक स्वास्थ्य कई कारकों से प्रभावित होता है। जिन्हें नियंत्रित करके मानसिक स्वास्थ्य को काफी हद तक उन्नत बनाया जा सकता है।

9.2.5 मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने के उपाय

नैदानिक मनोवैज्ञानिकों ने कुछ ऐसे विशेष उपायों का भी वर्णन किया है जिनमें व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य को उनन्त बनाया जा सकता है। विटेकर, कोलमैन, मैकवेस्ट ने नैदानिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा मानसिक स्वास्थ्य को उनन्त बनाने के लिए किए गए उपायों को निम्नांकित तीन भागों में बाँटा है-

क. निरोधात्मक उपाय

ख. मनोवैज्ञानिक उपाय

ग. सामाजिक सांस्कृतिक उपाय

इन तीनों के उपायों का वर्णन निम्नांकित है-

क. निरोधात्मक उपाय :- इन उपायों की मूल पूर्वकल्पना यह होती है कि दुरूस्त शरीर में ही दुरूस्त मस्तिष्क पाया जाता है। नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का मत है कि यदि व्यक्ति शरीरिक रूप से स्वस्थ रहता है, तो वह अपने आप ही मानसिक रूप से भी स्वस्थ्य शारीरिक रहता है। शारीरिक

रूप से स्वस्थ व्यक्ति जिन्दगी के तनावपूर्ण परिस्थितियों का डट कर सामना करने में सक्षम होते हैं। सांवेगिक तनाव से सामना होने पर वे उसका उचित समाधान आसानी से निकाल सकने में समर्थ हो पाते हैं। फलत: ऐसे व्यक्तियों का मानसिक स्वास्थ्य उत्तम होता है। अत: इन उपायों के तहत उन सभी तरह के साधनों पर विचार किया जता है जिससे व्यक्ति का शारीरिक स्वास्थ्य उन्नत बना रह सके। कुछ नैदानिक मनोवेज्ञानिकों ने इस बात पर भी बल डाला है कि विशेष शारीरिक हालातों जैसे, मस्तिष्कीय ट्यूमर, सिफिलिय एवं अन्य गंभीर आंगिक अवस्थाओं जिनसे मानसिक अक्षमताएँ उत्पन्न हो सकतीं है, का यथासंभव जल्द से जल्द उपचार करवाना चाहिए ताकि व्यक्ति का मानसिक स्वास्थ्य उनसे प्रभावित न हो सके।

ख. मनोवैज्ञानिक उपाय :- मनोवैज्ञानिक उपायों में कई तरह के उपाय हैं जिनसे मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाया जा सकता हैं। इन उपायों का वर्णन नैदानिक मनोवैज्ञानिकों ने दो स्तरों पर किया है-

1. शैशवावस्था एवं प्रारंभिक बाल्यावस्था के उपाय तथा
2. उत्तर बाल्यावस्था, किशोरावस्था एवं वयस्कावस्था के उपाय

इन दोनों तरह के उपाय का वर्णन निम्नांकित है-

1. शैशवावस्था एवं प्रारंभिक बाल्यावस्था के उपाय :- कुछ नैदानिक मनोवैज्ञानिकों जिनमें रिबल का नाम अधिक उल्लेखनीय है, का मत है कि शैशवावस्था तथा प्रारंभिक बाल्यावस्था में अपनाये गए पालन-पोषण के तरीकों का मानसिक स्वास्थ्य पर सीधा असर पड़ता है अत: उन्होंने कुछ सामान्य मनोवैज्ञानिक नियमों का प्रतिपादन किया हैं जो शैशवास्था तथा प्रारंभिक बाल्यावस्था से संबंधित है तथा जिनके अनुसार बच्चों का पालन-पोषण करने से उनका मानसिक स्वास्थ्य काफी ठीक रहता है-

(i) **एक नवजात शिशु को लगातार उचित मनोवैज्ञानिक** मातृत्व देख-रेख की आवश्यक होती है। इस कार्य को एक ही महिला द्वारा किया जाना चाहिए यदि उस कार्य को स्वयं माँ किसी कारण से नहीं कर पा रही है।

(ii) जीवन के पहले कुछ महीनों में चूसन क्रिया की पूर्ण स्वतंत्रता की आवश्यकता होती है। अगर बच्चे को एक निश्चित समय पर नियमित रूप से भोजन दिया जाता है जिससे उसकी चूसन क्रिया की संतुष्टि लगातार होती जाती है, तो इससे बच्चों का शारीरिक स्वास्थ्य तो ठीक रहता ही है, मानसिक स्वास्थ्य भी उन्नत होता है।

(iii) नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का मत है कि चूसन कार्य से दंशन एवं कंठगायन में परगमन महत्वपूर्ण होता है। विकास के इस अवस्था में दंशन के लिए पर्याप्त मौका शिशुओं को दिया जाना चाहिए, कंठगायन के लिए पर्याप्त उद्दीपक भी दिया जाना चाहिए तथा माँ का स्तनपान करने की क्रिया बच्चे को दूध का कप या गिलास को पकड़ना एवं उसे मुँह तक ले जाना सीखा देना चाहिए। इस नयी आदत को लगाने एवं पुरानी आदत को

छुड़वाने की प्रक्रिया को धीरे-धीरे सम्पन्न करना चाहिए। इससे शिशुओं में संतोष बना होता हैं जो उनके मानसिक स्वास्थ को संतोषप्रद बनाए रखता है।

(iv) अच्छे ढंग से एवं आराम से जब तक बच्चा बैठना प्रारंभ न कर दे उसे शौच प्रशिक्षण नहीं देना चाहिए। नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का मत है कि यदि बच्चों को उचित दुलार-प्यार दियाजाता है तथा उनमें सुरक्षा का भाव पर्याप्त होता है तो वे अपने आप ही इन शारीरिक कार्यों को नियंत्रित करने में सफल हो जाते है। बच्चों द्वारा स्नेहात्मक सहयोग का इसे सबसे महत्वपूर्ण चिन्ह माना गया है।

यदि उपर्युक्त चार तथ्यों को शिशुओं के पालन-पोषण में ध्यान में रखा जाता है, तो इससे उनका मानसिक स्वास्थ्य उन्नत होने की संभावना तीव्र होती है।

2. **उत्तर बाल्यावस्था, किशोरावस्था एवं वयस्कावस्था के उपाय** :-उत्तर बाल्यावस्था में माता-पिता तथा शिक्षकों की काफी महत्वपूर्ण भूमिकाएँ होती हैं जिनसे बच्चों में असामान्य व्यवहारों में कमी तथा मानसिक स्वास्थ्य में उन्नति होती है। किशोराव्सथा तथा वयस्कावस्था में उत्तम समायोजन के बहुत सारे नियमों का उल्लेख होता है। इन नियमों में निम्नांकित प्रधान हैं-

(i) इस बात की पूर्ण जानकारी रखना कि बाह्य वातावरण के कौन-से उद्दीपक को परिवर्तित कर देने से उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती है तथा उन उद्दीपकों को बिना किसी अप्रसन्नता के स्वीकार करना जिन्हें बदलना संभव नहीं है।

(ii) विभिन्न तरह की परिस्थितियों से निबटने के लिए उपयुक्त क्षमता विकसित कर लेने से व्यक्ति को असफलता कम हो जाती है और इससे उसका मानसिक स्वास्थ्य उन्नत हो जाता है।

(iii) अपने संवेगों एवं इच्छाओं का कद्र करके उसे सहर्ष स्वीकार करना चाहिए। नैदानिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा किए गए अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि ऐसा करने से मानसिक अक्षमता व्यक्ति में नहीं विकसित होती है और उसका मानसिक स्वास्थ्य धीरे-धीरे उन्नत होता है।

(iv) व्यक्ति को वेसे रचनात्मक कार्यों में जिसे वह अधिक मूल्यवान समझता है, अपने अप को व्यस्त रखना चाहिए। इससे व्यक्ति में आत्म-संतोष बढ़ेगा जो उसके मानसिक स्वास्थ्य के स्तर को धीरे-धीरे ऊँचा उठायेगा।

(v) व्यक्ति को हास्य या परिहास का पर्याप्त ज्ञान होना चाहिए। परिहास की क्षमता व्यक्ति में क्रोध, चिन्ता, डर आदि को कम करने या नियंत्रित करने में मदद करता हैं नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का मत है कि इस तरह की क्षमता से व्यक्ति अपने आप को हमेशा खुश रखता है ओर इस तरह उसके मानसिक स्वास्थ्य का स्तर उन्नत होने की संभावना काफी बढ़ जाती है।

(vi) व्यक्ति को सामाजिक क्रियाओं एवं जवाबदेहियों में हाथ बँटाना चाहिए। इससे उसमें सामाजिक सहभागिता का भाव उत्पन्न होगा जो व्यक्ति में पर्याप्त मानसिक संतोष उत्पन्न करता है। इससे भी व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

(vii) किसी भी परिस्थिति की घटनाओं की पुनव्र्याख्या की क्षमता व्यक्ति में होनी चाहिए। नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का मत है कि अधिकतर परिस्थितियों में जो कुंठा व्यक्ति को होता है, उसका कारण बाह्य परिस्थिति की घटना नहीं होती है, बल्कि व्यक्ति द्वारा उसकी दोषपूर्ण व्याख्या होती है। अत: व्यक्ति में ऐसी परिस्थितियों को पुनव्र्याख्या करने की क्षमता होनी चाहिए ताकि उसमें कुंठा का स्तर अधिक बढ़ न सके और व्यक्ति में अनावश्यक तनाव आदि उत्पन्न न हो सके। ऐसी क्षमता के रहने से व्यक्ति में मानसिक स्वास्थ्य का स्तर उत्तम बना रहता है।

(ग) सामाजिक-सांस्कृतिक उपाय :- बहुत सारे ऐसे सबूत मिले हैं जिनसे यह स्पष्ट हुआ है कि विशेष सामाजिक परिस्थिति जैसे निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर तथ विवाह-विच्छेद, माता या पिता की मृत्यु तथा अन्य वैसी ही परिस्थितियों से मानसिक रोग उत्पन्न होता हैं। अत: यदि इन कारकों के पड़ने वाले प्रभावकों को नियंत्रित कर दिया जाए, तो इससे व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य का स्तर काफी बढ सकता हैं रोजेन एवं ग्रिगोरी ने अपनी समीक्षा के आधार पर यह बतलाया कि धीरे-धीरे सामाजिक-आर्थिक स्तर उन्नत कर देने से एवं जीवन के अन्य प्रतिकूल परिस्थितियों के साथ पर्याप्त समझौता कर लेने से व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य का स्तर उत्तरोतर उत्तम होते चला जाता है।

इस प्रकार आपने देखा कि मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने के कई उपाय हैं और किसी व्यक्ति का मानसिक स्वास्थ्य तभी उन्नत हो पाता है। जब इन सभी तरह के उपायों को समन्वित करके उसे कार्यरूप दिया जाए।

9.3 मानसिक स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं व परामर्श

9.3.1 मानसिक तनाव -

मानसिक स्वास्थ्य संबंधी अनेक समस्याऐं होती है जिन्हें परामर्श के द्वारा सुलझाया जा सकता है।

मानसिक तनाव आधुनिक समाज की एक बड़ी समस्या है। नवीन शोधों से पता चलता है कि करीब 75 प्रतिशत शारीरिक रोगों के कारण मानसिक तनाव है। यहां तक कि हृदय रोग, कैंसर जैसे जानलेवा रोगों में भी तनाव की भूमिका स्थापित हो चुकी है। मनोवैज्ञानिकों ने तनाव को भिन्न भिन्न दृष्टिकोणों से परिभाषित किया जै -

1- कोई भी व्यक्ति, घटना या परिस्थिति जो व्यक्ति को असधारण अनुक्रिया करने के लिए बाध्य करती है, तनाव कहलाता है। घटनाएं जैसे नौकरी छूट जाना, व्यवसाय में हानि, प्रियजन का बिछुडना आदि तनाव उत्पन्न करते हैं।

2- कुछ मनोवैज्ञानिकों ने तनाव को अनुक्रिया के रूप में माना है। कठिन परिस्थितियों में व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक एवं शारीरिक अनुक्रियाएं जैसे चिन्ता, क्रोध, भय,आक्रमकता आदि तथा दैहिक अनुक्रियाएं जैसे पेट की गड़बड़ी, नीदं न आना,रक्तचाप में वृद्धि आदि दिखलाता है जब यह समझा जाता है कि तनाव उत्पन्न हो गया है। हंस सेनी के अनुसार ''तनाव का तात्पर्य शरीर द्वारा आवश्यकतानुसार किए गये असमान्य अनुक्रिया से है।''

3- कुछ मनोवैज्ञानिक तनाव की व्याख्या इस प्रकार करते हैं - कुछ घटनाएं या परिस्थितियां ऐसी होती हैं जो कुछ व्यक्तियों को उत्तेजित करती है और कुछ व्यक्तियों पर उसका प्रभाव नहीं पड़ता। सभी घटनाएं या परिस्थितियां सबके लिए उत्तेजना का कार्य नहीं करती इसलिए इन्हें उद्दीपक नहीं माना जा सकता। अत: अनुक्रिया को समझने के लिए यह जानना आवश्यक है कि निबटने के लिए किस प्रकार मूल्यांकन करता है। यदि आवश्‍यकता कम और योग्यता अधिक है तो तनाव की स्थिति नहीं आती और ठीक इसके विपरित अवस्था में तनाव होता है। अतएवं तनाव व्यक्ति की सामथ्र्य से संबंधित है। फोक मैन एवं लाजरस का मत हैं कि ''तनाव उद्दीपक के समान होते हुए भी अनुक्रिया में भिन्नता हो सकती है और अनुक्रिया से तनाव संबंधित है। अधिक अनुक्रिया से तनाव संबंधित है। अधिक अनुक्रिया तनाव का सूचक है।

सामान्यत: तनाव का कारण नकारात्मक घटनाएं जैसे दुर्घनाएं, दुर्भाग्य, हानि, बिछोह, असफलता आदि समझा जाता है परन्तु सकारात्मक घटनाएं जैसे उच्च कुल में शादी, अचानक धन प्राप्त होना, आशा के विपरीत सफलता भी तनाव के कारण होते हैं। हंस सेली ने नकारात्मक तनाव को डिस्ट्रेस तथा सकारात्मक तनाव को स्ट्रेस की संज्ञा दी है।

तनाव की स्थिति में घटनाएं या परिस्थितियां व्यक्ति के नियंत्रण या सामर्थ के बाहर होती हैं और विभिन्न प्रयासों से वह नियंत्रण में आ जाती है तब तनाव कम हो जाता है।

तनाव की स्थिति में मानसिक और शारीरिक दोनों प्रकार की अनुक्रियाएं होती है अर्थात् व्यक्ति शारीरिक रूप में व्यग्र होकर, मानसिक रूप में क्षुब्ध या विचलित दिखाई देता है।

तनाव अल्पकालिक और दीर्घ कालिक दोनों प्रकार का होता है। यह परिस्थिति के प्रभाव और व्यक्ति की मानसिकता पर निर्भर करता है।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि तनाव परिस्थिति**,** घटना या व्यक्ति से प्रभावित एक विशेष प्रकार की दैहिक और मानसिक अनुक्रिया है जो व्यक्ति को शारीरिक और मानसिक रूप से विचलित करती है।

तनाव की प्रतिक्रियाएं -

तनाव की स्थिति में व्यक्ति प्राय: दो प्रकार की प्रतिक्रियायें व्यक्त करता है -

1- मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रियाएं

2- दैहिक प्रतिक्रियाएं

1 मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रियाएं -

तनाव की स्थिति में कई प्रकार की मानसिक या मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रियाएं होती है जैसे - मानसिक कार्यों में विघटन या क्षुब्धता पाई जाती है। इस तरह के विघटन को दो भागों में बांटा जा सकता है-

1 संज्ञानात्मक विघटन- तनाव की स्थिति में संज्ञानात्मक विकृति जैसे एकाग्रता में कमी, विचारों में एकरूपता न होना, शब्दों का बार बार दुहराना, बोलते बोलते रूक जाना, विशयान्तर होना, चौंक जाना, काफी देर तक अन्य स्थान में दृष्टि लगाये रहना, दृष्टि शून्य हो जाना, आवाज न निकलना आदि।

2 संवेगात्मक विघटन - संवेगात्मक विघटन के लक्षण जैसे भय,चिन्ता, आक्रोश, चिन्ताग्रस्त होना, आक्रमण की मुद्रा, असंयति भाषा का उपयोग, भावुकता, निराशा, कुण्ठा की भावना, भाव शून्यता, उदास या दुखी होना, रोना, निसंहाय होने की स्थिति का अनुभव करना, अधिक अध्यात्मिकता, धार्मिक कार्यों में अधिक लीन होना,एकान्त वास,उपदेषात्मक प्रवृत्ति बढ़ जाना आदि।

2. दैहिक प्रतिक्रियाएं -

मनसिक तनाव का प्रभाव शरीर के विभिन्न भागों पर पड़ता है जैसे हृदय गति और श्वास गति बढ़ना,रक्तचाप में वृद्धि, मांस पेशियों में तनाव और दर्द का अनुभव करना, हाथ, पैर, पीठ, कमर, सिर आदि में दर्द का अनुभव करना, मुंह सूखना, शरीर भारी लगना,षारीरिक गति कम होना,कामन करने की इच्छा, शारीरिक क्षमताओं की कमी, निश्क्रियता,शिथिलता और शरीर में ऐंठन बढ़ जाना है। मनोवैज्ञानिकों का मत है कि अधिक समय तक मानसिक तनाव बने रहने से उच्च रक्तचाप, मधुमेह,आंत में घांव आदि घातक बीमारियों के होने के आषंका बनी रहती है। अनेक प्रयोगों से तनाव के कारण शारीरिक रोगों के प्रारम्भ होने की पुष्टि हुई है।

तनाव के कारण

1- तनावपूर्ण जीवन की घटनाएं -

व्यक्ति के जीवन में तरह तरह की घटनाएं घटती रहती है। जिनमें कुछ सुखद होती है और कुछ दुखद होती है। व्यक्ति को इन आकस्मिक घटनाओं से समायोजन करने की आवश्यकता होती है। मनोवैज्ञानिक कामत है कि यदि व्यक्ति इस प्रकार की अचानक सुखद या दुखद घटना के साथ समायोजन नहीं कर पाता है तो तनाव उत्पन होने की संभावना होती है ओर अनेकप्रकर की मानसिक और शारीरिक विकृतियां उत्पन्न होने की संभावना होती है। कुछ घटनाएं जैसे पति-पत्नि,माता पिता, पुत्र पुत्री आदि की आस्कस्मात मृत्यु, वैवाहिक अलगाव, तलाक, विवाह तय होने के बाद टूटना,प्रेमी-प्रेमिका का विश्वासघात,व्यापार में धन हानि, धन की चोरी या अचानक धन की प्राप्ति, नौकरी से अप्रत्याशित अवकाश प्राप्ति, अधिकारों का हनन, बलात्कार, अकारण भय व्याप्त होना, पुत्र या पुत्री की भावी जीवन की चिन्ता जैसे नौकरी न लगना,ब्याह न होना, निकट संबंधी का सदैव बीमार बने रहनाया घातक बीमारी होना, पुत्र या

पुत्री का खराब संगत में पड़ना, नशीले पदार्थ का सेवन, चरित्रहीनता या अपराधमय कार्यों में लिप्त होना आदि तनावपूर्ण घटनाओं के उदाहरण हैं।

2- प्रेरकों का संघर्ष -

प्रत्येक व्यक्ति जीवन में प्रगति चाहता है।वह दूसरों की प्रगति से प्रभावित होता है। इसलिए उंचे लक्ष्य बनाता है। दूसरों की प्रतिष्ठा पद, सम्मान, उपलब्धि, धन आदि से उसे प्रेरणा मिलती है। और वह महत्वकांक्षी हो जाता है। उसके लक्ष्य एवं उसकी महत्वाकांक्षा कभी कभी उसकी सामर्थ से अधिक बढ़ी होती है और वह सफल नहीं हो पाता। इस प्रकार लक्ष्यों के अनुसार सफलता न प्राप्त कर पाना मानसिक तनाव का कारण बनते हैं।

सामाजिक जीवन में व्यक्ति को एक आदर्श जीवन जीना पड़ता है इनका निर्वाह करना कठिन होता है। समाज अपेक्षा करता है कि प्रत्येक व्यक्ति एक आदर्श सदस्य की तरह व्यवहार करे परन्तु सामाजिक विड़म्बनाएं और प्रेरकों को पाने की लालसा समाज की अपेक्षाओं के अनुकूल जीवन जीने में बाधक होती है और इस प्रकार प्रेरकों और लक्ष्यों का संघर्ष प्रारम्भ हो जाता है जो मानसिक तनाव का कारण बनता है। मनुष्य जैसा रहना चाहता है वैसा रह नहीं पाता,और जो प्राप्त करना चाहता है उसे प्राप्त भी नहीं कर पाता, उसकी इच्छाओं महत्वकांक्षाओं और लक्ष्यों की पूर्ति में अनेक बाधाएं आती हैं । कहीं आदर्श और समाज के मानक बाधा डालते हैं कहीं उसकी योग्यताएं और भावनाएं बाधा डालती हैं और वह असफल हो जाता है। यह असफलता उसके मानसिक तनाव का कारण बनती है।

3- दिन प्रतिदिन की उलझन -

प्रत्येक व्यक्ति के दिन प्रतिदिन के पारिवारिक और सामाजिक जीवन में अनेक उलझने आती रहती है। लाजरेस और उसके सहयोगियों ने अपने अध्ययन के आधार पर बताया कि अधिकांश व्यक्तियों में मानसिक तनाव के कारण उसके प्रतिदिन की उलझनें या झंझटें होती है। इन उलझनों को छः भागों में बांटा जा सकता है -

1 पर्यावरणी उलझन - व्यक्ति के परिवार या आसपास के वातावरण में विभिन्न प्रकार की आकस्मिक आवाजें,षोरगुल, सिनेमा घर, बाजार आदि का कोलाहल, रेलगाड़ी, बस, ट्रेक की असहनी ध्वनियों आदि।

2. पारिवारिक उलझन - बड़े परिवार में प्रातः से देर रात्रि तक होने वाले कार्यों की अधिकता, भोजन, बर्तन, कपड़े धोना आदि की आवाजें,घर के सदस्यों की चिकचिक ,छोटे मोटे लड़ाई झगड़े लोगों की आवजा ही आदि।

3. घरेलू उलझन - परिवार में कभी कभी घरेलू कार्य, खर्च आदि के कारण सदस्यों में मतभेद हो जाते हैं और इस कारण मन मुटाव,झगड़े, बोलचाल बन्द होना आदि।

4. समयाभाव से उत्पन्न उलझन - कभी कभी व्यक्ति को एक निश्चित समय सीमा में अधिक कार्य करने की आवश्यकता पड़ जाती है। काम की अधिकता, उत्तरदायित्व, दूसरों से सहयोग का अभाव, साधनों की कमी और सीमित समय के कारण मानसिक तनाव बढ़ जाता है।

5 आर्थिक उत्तरदायित्व से उत्पन्न उलझन - प्रत्येक व्यक्ति को अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों को निभाने के लिए पैसे/अर्थ की आवश्यकता होती है। उसकी धन कमाने की एक सीमा होती है। जब जिम्मेदारियों बढ़ती जाती है और धन कम पड़ने लगात है तब वह आर्थिक उलझन में पड़ जाता है और मानसिक तनाव बढ़ने लगता है।

6 कार्य उलझन - प्रत्येक परिवार में कार्यो का बंटवारा होता है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी अपनी मानसिक और शारीरिक सामथ्र्य के अनुसार कार्य करते हैं और अपना उत्तरदायित्व निभाते हैं। यदि कार्य बंटता है,विभाजन उत्तरदायित्व आदि में विसंगतियां होती है, कुछ टालमटोल करते हैं, कुछ को अधिक कार्य करना पड़ता है,उत्तरदायित्व भी अधिक होता है इसका प्रभाव शरीर और मस्तिष्क पर पड़ता है और तनाव की स्थिति बन जाती है।

4 व्यावसायिक उलझन -

प्रत्येक व्यक्ति अपने और परिवार के भरण-पोषण के लिए किसी न किसी व्यवसाय में लगा रहता है। व्यावसायिक कार्यक्षेत्र और कार्य कभी कभी सुविधाजनक नहीं होते। सहयोगी कर्मचारियों का असहयोग, अधिकारियों का उपेक्षापूर्ण या तानाषाही पूर्ण व्यवहार, कार्य स्थल और कार्य का वातावरण दूशित होना, उचित वेतन और अन्य भत्ते न मिलना, वेतन काट लेना, असुरक्षा का भय, आवश्यकता पड़ने पर छूट्टी न मिलना, कार्य की अधिकता अरूचिकर या अलग कार्य होनाया असुविधाजनक होना,कार्यस्थल से परिवार को दूर होना आदि। कार्य क्षेत्र में आवास भोजन, मनोरंजन, स्वास्थ्य केन्द्र आदि का अभाव भी तनाव के कारण होते है।

5 भौतिक उलझन -

भौतिक विशमता जैसे अधिक ठंडे या गर्म स्थान में काम करना, अचानक मौसम बदलना, बर्फीले या रेतीले स्थान, समुद्ध या नदियों के किनारे जहां तूफान, आंधी, बाढ़ आदि आने की अधिक संभावना होता है, कोलाहलपूर्ण स्थान जहां रात दिन, शोरगुल और ध्वनि प्रदूशण होता रहे जैसे कारखानों के पास वाले स्थान,निर्जन या जंगली स्थान, सुनसान स्थान आदि। ऐसे वातावरण में अधिक समय तक कार्य करने में मानसिक तनाव बना रहता है।

6 असफलता की उलझन -

प्रत्येक व्यक्ति अपनी प्रगति को लक्ष्य बनाकर सफलता के लिए प्रयत्न करता है। उसका लक्ष्य उसकी शारीरिक, मानसिक और आर्थिक सार्मथ्य के अनुकूल तो होते हैं परन्तु कभी कभी उच्च्च महत्वकांक्षा के कारण वह अधिक उंचा लक्ष्य बना लेता है और कभी कभी विभिन्न कारणों से अपने लक्ष्य प्राप्त करने में असफल होता है। जब वह यह अनुभव करता है कि दूसरे सफलता पर सफलता प्राप्त करते जा रहे हैं और वह प्रत्येक बार असफल हो रहा है तो उसे कुण्ठा होती है और यह कुण्ठा मानसिक तनाव का कारण बन जाती है।

पारिवारिक संरचना का प्रभाव -

कुछ मनोवैज्ञानिकों ने पारिवारिक संरचना और व्यवस्थ का भी मानसिक तनाव और दबाव का कारण बताया है। यदि माता - पिता स्वयं असमायोजित हों,कार्य में अधिक व्यस्त हो, उग्र स्वभाव के हों, अधीर हो या भीरू स्वभाव के हो, अधिक कार्य भार से दबे हो, तो इसका प्रभाव उनके बच्चों के मस्तिष्क पर पड़ेगा और बच्चे मानसिक दबाव से पीडित होंगे।

पारिवारिक झगड़े - माता पिता के आपसी झगड़े,माता पिता के बच्चों से झगड़े, बच्चों के पारस्परिक झगड़े और माता पिता के परिवार के अन्य संबंधियों से झगड़े, पारिवारिक अषान्ति का कारण बनते हैं और सब सदस्यों में मानसिक दबाव उत्पन्न करते हैं।

परिवार की संरचना के अंतर्गत कठोर अनुशासन, सामाजिक - पाि‍वारिक परमपराएं नियमों का कठोरता से पालन, अंधविश्वास के कारण असंगत और भौतिक कार्य करना, अधिक धार्मिकता के कारण कठिन और कष्टप्रद धार्मिक अनुष्ठान करना,माता पिता के निरंकुश आदेशों का पालन करना, पारिवारिक कठोर परम्पराएं, बड़ों का कड़ा अनुशासन, विचारों में भिन्नता, परिवार के सदस्यों में बौद्धिक विषमता,शिक्षा स्तर में अन्तर आदि मानसिक तनाव के कारण बनते है।

तनाव कम करने के लिए परामर्श **-**

मानसिक तनाव कई कारणों से उत्पन्न होता है।तनाव को कम करने के लिए तनाव के कारणों का अध्ययन किया जाता है। फिर उचित परामर्श प्रक्रिया द्वारा तनाव को कम करने या दूर करने का प्रयास किया जाता है। बुडस्टोन एवं लेनियोन ने तनाव कम करने के लिए परामर्श द्वारा समायोजी व्यवहार की विधि बताई है। समायोजी व्यवहार के अंतर्गत प्रार्थी को निम्नलिखित परामर्श दिया जाता है।

1- नियंत्रण का परामर्श - प्रार्थी के तनाव से संबंधित कारणों जाता है को जाना और उन कारणों को नियंत्रित करने के लिए उपाय सुझासे जाते हैं। नियंत्रण पा लेता है अथवा उसका विकल्प ढूढ लेता है ओर इस प्रकार अपने मानसिक तनाव को कम करने में स्वयं सफल हो जाता है।

2- पूर्वकथन का परामर्श - परामर्शक प्रार्थी की शारीरिक, मानसिक, आर्थिक आदि क्षमताओं का मूल्यांकन कर उसे उनसे अवगत करा देता है और प्रार्थी के द्वारा लिये निर्णय या बनाये,लक्ष्य की सफलता या असफलता की संभावना से उसे अवगत करा देता है। प्रार्थी अपनी सामथ्र्य की जानकारी पाने के बाद अपने लक्ष्यों में परिवर्तन कर लेता है और इस प्रकार स्वयं मानसिक तनाव से बच जाता है।

3- समस्या केन्द्रित परामर्श - प्राय: मानसिक तनाव किसी एक समस्या से संबंधित होता है और वह समस्या मानसिक तनाव का केन्द्र बिन्दु होती है। परामर्शक उस समस्या के मूल कारणों का अध्ययन कर प्रार्थी को अवगत कराता है और उस समस्या के निवारण के लिए वैकल्पित उपाय भी सुझाता है। प्रार्थी आत्म चिन्तन द्वारा समस्या की गंभीरता पर विचार करता है और दिये हुए सुझावों में से किसी एक सुझाव को ग्रहण कर लेता है। इस प्रकार तनाव उत्पन्न करने वाली समस्या से स्वयं निपट लेता है।

4- संवेग केन्द्रित परामर्श - प्राय: सभी समस्याओं से संवेगात्मक अनुक्रिया होती हैं और पीड़ित व्यक्ति सदैव अपनी पीड़ा या कठिनाई को संवेगों द्वारा प्रगट करता है।परामर्शक प्रार्थी को अपने

संवेगों पर नियंत्रण करने या संवेगों को परिवर्तित करने वाले परामर्श देताहै। प्रार्थी अपने संवेगों के स्वयं अपने और दूसरों पर पड़ने वाले प्रभाव का चिन्तन करता है और उस पर नियंत्रण करने का प्रयास करता है। इस प्रकार वह अपने संवेगों और अपनीसमस्या से छुटकारा पा लेता है।

5- व्यवहार केन्द्रित परामर्श - परामर्श, प्रार्थी के अनापेक्षित या असामाजिक व्यवहार के प्रभाव और अवगुणों का वर्णन करता है और इन अवगुणों और व्यवहार को पर्याय को छुड़ाने के लिए उपयुक्त परामर्श जैसे मित्रों में बैठकर बातचीत करना, खेलना आदि बताता है। इस प्रकार दूसरे व्यवहार द्वारा पूर्व व्यवहार से छुटकारा पाया जा सकता है।

6- संज्ञान केन्द्रित परामर्श - परामर्शक प्रार्थी को उसकी कठिनाई या समस्या, उसके संभावित कारणों और उसके दुष्प्रभाव को विस्तार से बताता है और सोचने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि समस्या इतनी गंभीर नहीं है परन्तु कभी कभी अपने व्यवहार से परिस्थिति का विकृत कर देते हैं और अपने आपको और दूसरों को धोखा देते है। प्रार्थी स्वयं तर्क और बुद्धि द्वारा वास्तविकता को समझने लगता है और अपने व्यवहार पर नियंत्रण पाने का संकल्प कर लेता है।

तनाव का प्रबंधन -

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से तनाव एक गंभीर समस्या है। प्राय: युवा आयु में 86 प्रतिशत स्त्री-पुरूश तनावग्रस्त होते हैं। प्रारम्भ में सामान्य तनाव होता है। परन्तु धीरे धीरे तनाव बढ़ता जाता है और गंभीर रूप् ले लेता है।मनोवैज्ञानिक की राय में तनाव प्रबंधन की प्रविधियां तनाव को कम करने के लिए सार्थक सिद्ध हुई है। तनाव प्रबंधन ऐसी प्रविधियों से तनावग्रस्त व्यक्तियों को तनाव के स्रोतों और कारणों से अवगत कराया जाता है और उससे निपटने या बचने की वैज्ञानिक विधियां बताइ्र जाती है। परामर्शक इन विधियों का आवष्यतानुसार अभ्यास भी कराता है और समय समय पर मूल्यांकन भी करता है।

तनाव प्रबंधनकी दो विधियां प्रमुख है -

1 वैयक्तिक उपागम -

प्रत्येक व्यक्ति के तनाव का कारण अलग अलग होता है, इसलिए तनाव कम करने की विधि भी अलग अलग हो सकती है। वैयक्तिक उपागम में व्यक्ति के तनाव के कारणों का अध्ययन कर उसे दूर करने का परामर्श दिया जाता है। इस प्रविधि में प्रार्थी को मांस पेशियों को शिथिल करने और मन को एकाग्र करने का अभ्यास कराया जाता है। यह योगद्वारा सरलता से किया जाता है। डेविसन और थामसन ने अपने प्रयोगों के आधार पर इस विधि को तनाव कम करने में अधिक उपयोगी पाया। प्रार्थी शारीरिक और मानसिक रूप से हल्का और आन्तरिक आनन्द का अनुभव कराता है। परामर्शक इस प्रकार के व्यायाम या योग क्रिया के बाद उसके विश्वास को परिवर्तित करने ओर सबल बनाने के लिए परामर्श देता है उसके आन्तरिक विश्वास को जगाता है और समस्या को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखने के उपाय सुझाता है। प्रार्थी अपने संज्ञानात्मक विष्लेशण द्वारा अपनी कठिनाई का सामना करने के लिए सक्षम समझने लगता है और इस प्रकार की प्रक्रिया से उसका तनाव कम होता जाता है।

विद्यार्थी को कठिन पाठ्यक्रय,परीक्षाओं प्रतियोगिताओं से, व्यवसायों को भागदौड़, हानि की आंशका, पूंजी फंस जाने की, आषंका, नौकर पेषा व्यक्ति को कार्य की अधिकता, नौकरी की असुरक्षा, सहकर्मियों का असहयोग, अधिकारियों की बार बार झिड़क और गृहस्थी को पारिवारिक बोझ, खर्च न चलना, कलह, लड़के या लड़की का गलत मार्ग पर चलना, धन संपति के बंटवारे का झगड़ा आदि से मानसिक तनाव बन जाता है। कुशल परामर्शक, व्यक्ति के तनाव के प्रमुख कारणों का अध्ययन कर उसे उसके व्यक्तिगत और व्यावहारिक कार्य में परिवर्तन लाने का परामर्श देता है। नियमित दिनचर्या, कार्य का निश्चित बंटवारा, समय का पालन करना, साधारण व्यायाम, खेलकूद और योग, हलका भोजन और अच्छी नींद समय मिलने पर सरल मनोरंजक, साहित्य पढ़ना, समय निकाल कर परिवार के सदस्यों या मित्र मंडली में मौज मस्ती करना आदि व्यवहार परिवर्तन से तनाव को कम अथवा दूर कियाजा सकता है।

2 वातावरणीय उपागम -

मानसिक तनाव का एक कारण कार्य स्थल का वातावरण उपयुक्त न होना भी है। व्यक्ति जिस स्थान पर अध्ययन का कार्य का व्यवसाय करता है उस स्थान पर दूसरे लोगों का समर्थन, सहयोग, सहानुभूति, प्रेरणा, स्नेह आदि नहीं मिलता। इसे उपयुक्त सामाजिक वातावरण का अभाव कहा जाता है। सामाजिक वातावरण के अभाव को दूर करने के लिए परामर्शक प्रार्थी के साथ पढ़ने वाले, रहने वाले , कार्य करने वाले व्यक्तियों की जानकारी प्राप्त करता है और उन्हें प्रार्थी को सहयोग,स्नेह और समर्थन देने के लिए प्रेरित करता है। जब प्रार्थी को यह विश्वास होने लगता है कि सब उनके हितैशी हैं आवश्यकता पड़ने पर सहायता के लिए दौड़ आयेंगें तो उसका आत्मविश्वास बढ़ता है। यह निष्चिन्त रहता है कि संकट की घड़ी में सब उसकी सहायता के लिए जायेंगे, उसके साथ रहेगें,सब उसके अपने हैं आवश्यकता पड़ने पर वह उन्हें बुला सकता है। गुडनाउ और ग्रेडी ने अपने अध्ययन के आधार पर बताया कि यदि व्यक्ति कासामाजिक वातावरण अच्छा है तो उसका तनाव कम होगा और यदि उसका सामाजिक पर्यावरण समायोजित कर दिया जाये तो तनाव कम हो जाता है।

कोहने और विल्स ने मानसिक तनाव को कम करने में सामाजिक वातावरण की भूमिका का वर्णन किया है। उन्होंने संरचनात्मक सामाजिक वातावरण और कार्यात्मक सामाजिक वातावरण का वर्णन किया है। संरचनात्मक सामाजिक वातावरण में निकट व्यक्तियों के घनिश्ट संबंध जैसे पत्नी और परिवार के सदस्यों से अधिक निकटता और मधुर संबंध तथा मित्रोंकी संख्या अधिक होना आवश्यक बताया है।कार्यात्मक सामाजिक वातावरण में परिवार और मित्र समूह की गुणवत्ता अर्थात आवश्यकता पड़ने पर या संकट की घड़ी में हर प्रकार का सहयोग प्राप्त करने का विश्वास से है। यदि वातावरणीय संबंध बढ़ा दिये जायें तो मानसिक तनाव कम हो जाता है।

मानसिक तनाव कम करने में भौतिक वातावरण का भी महत्वपूर्ण स्थन है। अध्ययन या कार्य स्थल की स्वच्छता, प्रकाश, शुद्ध हवा, कोलाहल रहित स्थान, आसपास बाग बगीचों की हरियाली, मनुष्यों की संख्या का कम होना आदि मानसिक तनाव को कम करने में सहायक होते हैं। मनोवैज्ञानिकों का सुझाव है कि तनावग्रस्त व्यक्ति के भौतिक वातावरण को सुरचित कर देने से भी तनाव कम हो जाता है। रहने और

कार्य करने के स्थान को स्वच्छ, साफ, व्यवस्थित तथा सौन्दर्य बोध पूर्ण बनाने से भी तनाव कम हो जाता है।

तनाव दूर करने के लिए परामर्श-

मनोवैज्ञानिक ने तनाव कम करने के लिए निम्नलिखित सुझाव दिये हैं -

1- जब अधिक मानसिक तनाव का अनुभव हो तब अपने काम रोक देना चाहिये। एक लम्बी सास लेकर बदन को ढीला छोड़ देना चाहिए और किसी सुखद घटना या विचार या व्यक्ति का स्मरण करना चाहिये।

2- किसी भीड़ भाड़ वाले स्थान या समारोह से अपने आपको अलग कर एकांत में चले जाना चाहिए। आप कह सकते हैं कि मुझे कुछ एकान्त की आवश्यकता है और एकान्त में आराम करना चाहता हूं।

3- किसी समूह या कुछ व्यक्तियों से बातचीत चल रही हो या किसी विषय पर विवाद छिड़ा हो तो उसे टालते हुए विनम्रता से कहा जा सकता है इस विषय पर फिर कभी चर्चा कर लेंगे। अभी इस बात को यहीं समाप्त कर देते हैं।

4- यदि किसी व्यक्ति के व्यवहार से आपको कष्ट हो रहा है तो आप उसकी बातों और व्यवहार को व्यक्तिगत रूप से मत लीजिए। आलोचना करने वाले का असभ्य व्यवहार करने वाले व्यक्ति के विरोध में जाकर उसका किसी बात पर समर्थन मत कीजिए। इससे उसका क्रोध शांत हो जायेगा और आपको भी शांति मिलेगी।

5- डॉ. एलकिन्ड का सुझाव है कि मानसिक तनाव को कम करने या छुटकारा पाने के लिए अपनी दिनचर्या नियमित करने की आवश्यकता है। अच्छी नींद, स्वादिष्ट भोजन और सरल मनोरंजन तनाव को कम करता है। आप अपनी दिनचर्या नियमित रखें और स्वयं प्रसन्न रहें।

6- बच्चों या अपनी आयु के व्यक्तियों के साथ, खेलने, गपशप करने, घूमने, सामान्य घटनाओं पर चर्चा करने, दूसरों के प्रश्नों के उत्तर देने से भी तनाव कम हो जाता है।

7- डॉ. विटकिन कहते हैं कि बच्चों के स्पर्श या अपनी पत्नी के स्पर्श से भी तनाव कम हो जाता है। तनावग्रस्त व्यक्ति को सुखद सरल और स्नेहपूर्ण स्पर्श उसका तनाव कम कर देता है।

8- मनोवैज्ञानिकों का मत है कि दूसरों के द्वारा अपनी आलोचना से तनाव बढ़ता है और अपने द्वारा दूसरों की आलोचना करना भी तनाव का कारण बनतस है अत: इन से बचना चाहिए। अपनी आलोचना साधारण ढंग से लेनी चाहिए और दूसरों की आलोचना केवल तभी करना चाहिए जब आपको स्वयं उसका उपाय मालूम हो या आपके पास कोई अच्छा सुझाव हो। उपाय देने से स्वयं का तनाव कम हो जाता है।

9- डॉ. नाथन कहते हैं कि मानसिक तनाव एक स्वभाविक प्रक्रिया जो सबको होता है पर इसे बढ़ने नहीं देना चाहिए। उसका सुझाव है कि विनोद, दूसरों की बात ध्यान से सुनना, अपनी बात अच्छी तरह से कहना, उत्साहित हो कर कार्य करना, आशावादी दृष्टिकोण अपनाना, स्नेह प्रदर्शित करना और तनाव के विचार से अपने मन को हटाने के तनाव को कम हो जाता है।

10-डॉ. गिलवर्ट की सलाह है कि आपको अपनी जिम्मेदारियों और योग्यताओं का सही मूल्यांकन करना चाहिए। योग्यता के अनुसार ही कार्य भार लेने चाहिए। अपने आप से योग्यता से अधिक की आशा नहीं करना चाहिए। इसी प्रकार किसी दूसरे पर अधिक निर्भर नहीं रहना चाहिए और न ही दूसरे से आशा करना चाहिए।

11-मनसिक तनाव कम करने के लिए परिवार का सुखद वतावरण अधिक सहायक होता है। अपने परिवार में पत्नी, बच्चों के बीच बिताया समय तनाव कम कर देता है। इसलिए अधिक से अधिक समय परिवार के साथ मनोरंजन, खेलकूद, पारस्परिक चर्चा, खान-पान आदि में व्यतीत करना चाहिए।

12-डॉ. मैककोविन कहते हैं कि व्यक्ति को अपने आप पर पूरा भरोसा करना चाहिए। आप यह स्वीकार कर लें कि ईश्वर ने आपको क्षमता दी है और आप परिस्थिति का समाना कर सकते हैं आवश्यकता पड़ने पर आपके परिवार के सदस्य और मित्रगण सहायक होंगे।ऐसी भावना तनाव को कम करने में सहायक होती है।

9.3.2 चिन्ता विकृति

कुछ व्यक्तियों में सामान्य चिन्ता एक विकृति का रूप् धारण कर लेती है और वे चिरकालिक अवास्तविक या अत्यधिक चिन्ता के रोगी हो जाते हैं । इस प्रकार की चिन्ता को स्वतंत्र प्रवादी चिन्ता कहा जाता है। चिन्ता से ग्रस्त व्यक्ति हमेशाअधीर, असन्तुलित विचार और व्यवहार वाला तनावयुक्त,अवास्तविक दुनिया में रहने वाला, निराष, सदैव अनहोनी की कल्पना करने वाला व्यक्ति होता है। मनोवैज्ञानिक ने चिन्ताग्रस्त रोगी के कुछ और लक्षण बताये हैं,जैसे ऐसा रोगी अधिक बैचेन, सर्तक, निन्द्रा विहीन, हैरान, शंकालु,शीघ्र आने वाले खतरे की कल्पना से परेशान ,सदैव हानि होने के भय का शिकार बना रहने वाला होता है। संज्ञानात्मक रूप् से वह हमेशा कुछ बुरा होने की आंशका करता है पर यह नहीं बता पाता है कि क्या बुरा होने वाला है। कभी कभी कहता है कि कोई व्यक्ति उसका बुरा करने वाला है परन्तु वह उस व्यक्ति का नाम या पहचान बताने में असमर्थ रहता है। दैहिक रूप से चिन्ता के रोगी को पसीना अधिक आता है। तेज "वांस चलती है या फूलती है, हृदय गति और नाड़ी की गति तीव्र हो जाती है,सिर दुखता है या गरम हो जाता है,ठंड अधिक लगती हैं,नींद और भूख बिल्कुल नहीं लगती, थकान का अनुभव होता है, शारीरिक और मानसिक स्थिरता समाप्त हो जाती हैं, व्यवहार में चिड़चिड़ापन और असंयम बढ़ जाता है। अपने आपको दूसरों से छुपाता है या छिपने का प्रयास करता है। एकान्त अच्छा लगता है, निर्णय लेने या देने में असमर्थ होता है। निर्णय देर से देताहै या देता ही नहीं है और यदि निर्णय दे भी देता है तो बदल जाता है। उसे यह भय रहता है कि उसके निर्णय में कोई त्रुटि हो गई या कोई नुकसान न हो जाये, इस प्रकार के विचारों और व्यवहार से वह ग्रस्त रहता है।

चिन्ता विकृति के कारण

जैविक कारण

स्लेटर एवं शील्ड ने अपने अध्ययन के आधार पर बताया कि चिन्ता विकृति का कारण आनुवंशिकता भी है।

मनोवैज्ञानिक कारण -

मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त के अनुसार अहम् की इच्छा और उपोह की इच्छा में अचेतन संघर्ष होता है। उपोह की ऐसी इच्छाएं जो प्राय: अपनी अभिव्यक्ति चेतन में चाहती है परन्तु अहम् उसकी ऐसी अभिव्यक्ति पर इसलिए रोक लगा देता हैं क्योंकि उसे डर होता है कि ऐसे व्यवहार से उसे दण्ड मिलेगा या अपमानित होना पड़ेगा। इस प्रकार की चिन्ता का स्रोत अचेतन होता है। अत: व्यक्ति बिना कारण जाने चिन्ताग्रस्त हो जाता है।

सामाजिक कारण

सामाजिक जीवन में प्रत्येक व्यक्ति अनेक व्यक्तिगत एवं विड़म्बना पूर्ण वस्तुओं, व्यक्तियों, घटनाओं, परिस्थितियों आदि के सम्पर्क में आता है और उसे विभिन्न प्रकार के अनुभव होते हैं। निराशा, आलोचना, उपेक्षा, तिरस्कार, असफलता आदि ऐसे अनुभव से वह अपने आपको तुच्छ, हीन, अयोग्य, बुद्धिहीन, बेकाम, भाग्यहीन आदि समझने लगता है। वह अन्य वस्तु,व्यक्ति, स्थान,परिस्थिति आदि का सामना करने में अपने आपको असमर्थ पाता है। ये सब उसकी मर्यादा को आघात पहुंचाने वाले या धमकी देने वाले लगते हैं और वह उनका सामना करने से कतराने लगता है। बटलर एवं मैथ्यूज़ के अनुसार रोगी अस्पष्ट या काल्पनिक उद्दीपकों को अधिक धमकीपूर्ण समझता है और चिन्ताग्रस्त बना रहता है।

चिन्ता विकृति के उपचार हेतु परामर्श

संज्ञानात्मक व्यवहार परामर्श

चिन्ता के रोगियों में प्राय: नि:सहायता का भाव होता है। वे अपने आपको असहाय और अकेला अनुभव करतेहैं। कभी कभी अपने आपको अयोग्य या हीन भी समझने लगते हैं। वे सोचते हैं कि वे बिल्कुल अकेले हैं और मुसीबत आने पर कोई उसकी सहायता नहीं करेगा। ऐसे रोगी की चिन्ता का प्रमुख कारण, उसके लक्षण और आरंभ के समय का अध्ययन किया जाता है। फिर उसे विश्वास दिलाया जाता है कि उसकी चिन्ता निरर्थक है। उसमें आने वाली कठिनाई या परिस्थिति का सामना करने की योग्यता है। उसके अनेक मित्र या हितेशी है,जो सदैव उसकी सहायता करने को तैयार बैठे हैं। उसके गुणों और क्षमताओं की जानकारी दी जाती है और उसको आने वाले काल्पनिक कठिनाईयों का सामना करने के लिए तैयार किया जाताहै। इस प्रकार दो तीन बैठक में उसका आत्मबल बढ़ता है और वह अपने आपको योग्य और सक्षम समझने लगता है।

परामर्श की प्रक्रिया

1 रोगी को एकान्त में शांत चित बैठने दीजिए।
2 प्रारम्भ में उसके परिवार संबंधी और अन्य सुखद बातें कीजिए।
3 चिन्ता के कारण जानने के लिए सामान्य प्रश्न पूछिए।
4 रोगी के प्रश्नों के उत्तर देने में सहयोग दीजिए एवं प्रोत्साहित कीजिए।
5 काल्पनिक एवं असत्य कारणों को तर्कों द्वारा प्रमाणित कीजिए।
6 उसके मनोबल को बढ़ाईये और ऐसे काल्पनिक भय को दूर करने के लिए प्रोत्साहित कीजिए।
7 उसे अन्य ऐसे लोगों से मिलवाईयें और जो उसे प्रोत्साहित करें।

8 आवश्यकतानुसार उसे उसके भय वाले व्यक्तियों,वस्तुओं या स्थानों से सम्पर्क कराईयें।

9.3.3 दुभ्रीर्ति

दुभ्रीर्ति एक बहुत ही सामान्य चिन्ता विकृति है जिसमें व्यक्ति किसी ऐसी विशिष्ट वस्तु या परिस्थति से डरता है और उसे देखकर या वैसी परिस्थिति की कल्पना मात्र से अस्वभाविक व्यवहार करने लगता है। ऐसी वस्तु या परिस्थिति किसी भी प्रकार से व्यक्ति को हानि न पहुंचाती है और न पहुंचा सकती है परन्तु उसके मन में हानि की आषंका से भय व्याप्त हो जाता है।यह अकारण भय उसके सामान्य शारीरिक और मानसिक व्यवहार को प्रभावित करताहै। व्यक्ति काल्पनिक भय से भयभीत होकर भागने लगता है, रोने लगता है, हाथ पैर पटकने लगता है तथा इसी प्रकार का अस्वाभाविक क्रियाऐं करने लगता है।

अमेरिकन मनोष्चिकित्सक संघ ने अपने अध्ययन के आधार पर बताया कि दुभ्रीर्ति किसी दुखद घटना के घटने के अवलोकन या स्वयं अनुभव से हो जाती है। इसके सामान्य लक्षण जैसे तनाव , सिर, पीठ पेट देर्द एवं बुखार का होना है। दुभ्रीर्ति होने के कारण पषु जैसे - बिल्ली, कुत्ता, कीड़े, मकोड़े, छिपकली, मकड़ी आदि स्थान जैसे पुल, नदी, का किनारा, अंधेरा कमरा, उंचा स्थान आदि सामाजिक स्थिति जैसे बाजार भीडभाड़, किसी जाति विशेष के सदस्यों के समूह, धार्मिक या सामाजिक उत्सव आदि व्यक्ति जैसे - पुलिस, अध्यापक, साधु, डॉक्टर,पौस्टमेन, मूछों वाला या दाढ़ी वाला आदमी आदि। वस्तु जैसे चाकू, अन्य पैनी वस्तु, खेल का सामान, हथौडा आदि हो सकते हैं।

दुभ्रीर्ति के लक्षण-

दुभ्रीर्ति के मरीज को वस्तु, स्थान या सामाजिक परिस्थिति के सम्पर्क या कल्पना मात्र से भय व्याप्त हो जाता है। यह भय उसके असामान्य और असंगत व्यवहार में स्पष्ट दिखाई देता है।व्यक्ति के मानसिक तनाव, शरीर के अंगों मेंदर्द, अस्वभाविक मुद्राएं बनना, किसी बात को बार बार दुहराना, बैचेन होना, बार बार बाहर जाकर देखना, दरवाजा बन्द है या नहीं यह देखना बिछावन और पलंग के नीचे बार बार देखना कि कोई चीज घुस तो नहीं आई है।एकही बात बार बार पूछना, किसी अनजान व्यक्ति को देखकर बचने या छिपने का प्रयास करना जैसे वह मारने आ रहा हो, सामाजिक समारोह से दूर भागना, और कभी कभी दौरा या गष्त आ जाना। अपने आप बड़बडाने लगना, अचनाक खीज उठना, जोर जोर से रोने या हंसने लगना,किसी को भला-बुरा कहना या डांटने लगना, सामने वाले व्यक्ति को अपषब्द कहना आदि।

दुभ्रीर्ति के कारण

1 जैविक कारण - सामान्यत: अल्पबुद्धि या अस्थिर चित्त वाले व्यक्तियों में मानसिक तनाव अधिक होता है। वे जरा जरा सी बात की चिन्ता करते हैं। अति चिन्ता और तनाव दुभ्रीर्ति का कारण बन जाता है।

2 अनुवांशिक कारण - अध्ययनों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया है कि दुभ्रीर्ति का एक कारण अनुवांशिकता भी है। हैरिस और उसके सहयोगियों केमाता पिता, भाई बहन और अन्य निकट संबंधी भी दुभ्रीर्ति के शिकार थे।

3 मनोवैज्ञानिक कारण - फ्रायड ने अपने मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन के आधार पर बताया कि कुछ व्यक्ति अपनी अपनी दामित इच्छाओं से उत्पन्न चिन्ता को दुर्भिति के

रूप में सुरक्षा हेतु करते है। उसकी दामित इच्छाएं किसी एक वस्तु,स्थान या परिस्थिति में विस्थापित हो जाती है और उसके लिए दुर्भिती उत्पन्न करने वाले उद्दीपक बन जाते हैं। इनसे दूर रहकर व्यक्ति अपने आपको दमित संघर्ष से बचता है।

4 सामाजिक कारण - पूर्व किशोरस्था में जब लड़के लड़कियां सामाजिक समूह के सम्पर्क में आते हैं तब उन्हें प्रारम्भिक कटु अनुभव भी होते हैं। दूसरों का बुरा व्यवहार , अनादर, तिरस्कार, उपेक्षा, अपमान, भय दिखाना आदि से उनके मन में एक प्रकार का डर समा जाता है और वे कुछ समय बाद सामाजिक दुर्भिती के शिकार हो जाते हैं। अपरिचित व्यक्तियों से मिलना, उठना, बैठना,खाना पीना , उनके साथ रहना, आदि में उन्हें इतना डर लगता है कि वे उस कल्पना से भी भयभीत हो जाते हैं और सदैव ऐसी परिस्थिति से अपने आपको दूर रखते हैं।

दुर्भिति के उपचार हेतु परामर्श विधि

मनोविश्लेषणात्मक उपचार में रोगी के उन दमित मानसिक संघर्ष की पहचान की जाती है जो उसे असंगत डर तथा डर की वस्तुओं की परिस्थितियों से दूर ले जाता है। इसके लिए स्वतंत्र शब्द साहचर्य विधि स्वप्न विष्लेशण आदि का उपयोग किया जाता है।

व्यवहारपरक उपचार -

व्यवहारपरक उपचार विधि के अन्र्तगत परामर्शता रोगी की मांसपेशियों को शिथिल करने का अभ्यास कराता है। इसके लिए योगासन का भी उपयोग किया जाता है। जब रोगी अपने समस्त अंगों को शिथिल करना सीख जाता है जब उसे उन सब वस्तुओं, व्यक्तियों, परिस्थितियों, जिनसे वह डरता है एकक्रमवार सूची बनाने को कहा जाता है। रोगी द्वारा इस सूची को अनेक बार दोहराने से डर की वस्तु का क्रम निर्धारित करने में सहायता मिलती है। फिर परामर्शक सबसे कम डर उत्पन्न करनेवाली वस्तुओं के रूप् में आकार, स्वभाव आदि के सचित्र चिन्तन केलिए प्रेरित करताहै। रोगी अपनी कल्पना शक्ति सेउस पर विचार करता है कि वह वस्तु के वास्तविक स्वभाव से परिचित हो जाता है। उसे यह लगने लगता है कि वह वस्तु तो साधारणहै और किसी भी प्रकार की हानि नहीं पहुंचा सकती। इसी प्रकार अन्य अधिक डर वालीवस्तुओं के संबंध में चिन्तन का अभ्यास कराया जाता है। शिथिलावस्था में डर वाली वस्तुओं का प्रभाव कम होता है। इस प्रकार के अभ्यास से रोगी का वस्तुओं के प्रति भय मिट जाता है।

माडलिंग उपचार-

परामर्शता रोगी के डर वाली वस्तु का मॉडल प्रस्तुत कर उसके संबंध में विस्तार से जानकारी देताहै। उसके रूप, आदतों आदि के संबंध में समझाता है।उस मॉडल से सम्पर्क कराता है। यदि संभव होता है तो माडल के बाद उस वस्तु के वास्तविक रूप् से भी सम्पर्क कराया जाता है। वस्तु के संबंध में विस्तृत जानकारी और सम्पर्क से रोगी का डर मिट जाता है।

फ्लोडिंग उपचार-

कुछ रोगी विशेष स्थानों या परिस्थिति से भयभीत होते हैं। जैसे अंधेरा, एकान्त स्थान, नदी का किनारा, उंचे स्थान, तेज स्थान, तेज रफ्तार की गाडी आदि । इस प्रकार की दुर्भिती केरोगी को परामर्शक उसके भय वाले स्थान या परिस्थिति में अपने साथ ले जाता है और कुछ समय उसके साथ वहां रहता है।वह

रोगी को उस स्थान या परिस्थिति का विस्तृत जानकारी देता है और उसका मनोबल और आत्मविश्वास बढ़ाता है। फिर रोगी कोअकेले उस स्थान मे जाने को प्रेरित करता है। कुछ समय तक रोगी के वैसे स्थान या परिस्थिति में रहने के कारण उसका भय मिट जाता है।

संज्ञानात्मक उपचार -

ऐलिस तथा अन्य मनोवैज्ञानिक का मत है कि दुभीर्ति का एक कारण व्यक्तियों में असंगत विश्वास और अंधविश्वास होता है। अत: जब व्यक्ति उस वस्तु या परिस्थिति जिससे वह डरताहै का सामना करताहै तब असंगत विश्वास या अंधविश्वास के कारण भयभीत समझाने की कोशिश करता है। उदाहरण देकर उसके पूर्व निर्मित कपोल कल्पित धारणाऐं और विश्वास कोकम किया जाता है। धीरे धीरे उसकी दुर्भिती कम हो जाती है या समाप्त होजाती है। टर्नर की राय है कि दुभ्रीर्ति केरोगियों को उनके भय वाली वस्तु या परिस्थिति से सामना कराने से असंगत विश्वास या धारणा को मिटाया जा सकता है।

9.3.4 भीषिका विकृति -

भीषिका विकृति चिन्ता विकृति का एक प्रमुख प्रकार है। भीषिका विकृति के रोगी को अप्रत्याशित दौरा पड़ता हैऔर वह अचेनावस्था मेंआने लगता है।प्रारम्भ में ऐसेरोगी को काफी अन्तराल के बाद सप्ताह मे एक या दो बार दौरे आने लगते हैं। भीषिका विकृति के अन्य लक्षण इस प्रकार है -

1- हृदय गति तीव्र या कम होना।
2- बहुत अधिक पसीना आना।
3- मांसपेशियों में कम्पन्न या दर्द होना।
4- शरीर में सुन्नता या झुनझुनी का अनुभव होना।
5- अंगों पर नियंत्रण न होना।
6- मरने का डर लगना।
7- चक्कर आना,
8- बेहोषी आना।

भीषिका विकृति दौरे के दैहिक,सांवेगिक,और संज्ञानातमक लक्षण होते हैं। अधिकांश रोगियों में तीन लक्षण पाये जाते हैं। यह दौरा सांकेतिक और असाकेंतिक दोनों ही तरह काहोता है। सांकेतिक भीषिका विकृति का दौरा विशेष परिस्थिति या उद्दीपक के प्रस्तुत होने पर होता है। सांकेतिक और असाकेतिक भीषिका विकृति का दौरा काल्पनिक विचार से होता है। मनोवैज्ञानिक यह पता लगाने का प्रयास करता है कि भीषिका विकृति का मुख्य कारण या स्रोत क्या है। मायर्स और सहयोगियों के अध्ययन के अनुसार भीषिका विकृति प्रारंभिक युवावस्थामें होती है और इसका मुख्य कारण मानसिक तनाव, दबाव, भय, और असफलता की भावना है।

इसका रोगी सार्वजनिक भीड़ वाले स्थान जैसे बस अड्डा, रेलवे प्लेटफार्म, मेला, स्कूल, अस्पताल, आदि जाने से घबराता है और यदि ऐसे स्थान में उसे जाना पड़ा तो भीषिका विकृति का दौरा पड़ने की संभावना रहती है।

भीषिका **विकृति के कारण -**

उन व्यक्तियों में अधिक भीषिका विकृति के दौरे आते हैं जिनके परिवार या किसी सदस्य को ऐसे दोरे आते रहे हैं। राबिन्स और उनके सहयोगियों के अनुसार व्यक्ति में मस्तिष्क के कुछ भागों में रक्त का प्रभाव या ऑक्सीजन की मात्रा सामान्य से कम या अधिक हो जाती है तब भीषिका विकृति का दौरा पड़ता है। इसी कारण उन स्थानों में जहां कार्बन डॉई ऑक्साइड की मात्रा अधिक होती है, वहां रहने वाले व्यक्तियों में भीषिका विकृति के दौरे अधिक पड़ते है।

मनोवैज्ञानिक कारण -

क्लार्क के अध्ययन के अनुसार जो मनुष्य कमजोर ह्रदय के होते हैं और सामान्य से शारीरिक लक्षण जैसे ह्रदय गति तीव्र होना, सांस फूलना, चक्कर आना आदि को असामान्य स्थिति मान लेते हैं उन्हें भीषिका दौरा पड़ने लगता है। होल्ट और एण्डरसन ने अपने अध्ययन के आधार पर बताया कि जो व्यक्ति अति संवेदनशील, भावुक, अस्थिर विचार वाले और अनियंत्रित व्यवहार वाले होते हैं, उन्हें भीषिका विकृति के दोरे शीघ्र आने लगते हैं। सेंडरसन और उनके सहयोगियों ने अपने अध्ययन में पाया कि डर, व्यक्तिगत या पारिवारिक अनिश्चितता, भविष्य की कल्पना,आने वाली परिस्थिति का सामना करने में साहस की कमी, अचानक अनहोनी की संभावना, आकस्मिक बेहद खुषी या दुख आदि से भी भीषिका विकृति के दौरे आने लगते हैं।

भीषिका विकृति के उपचार हेतु परामर्श -

मनोवैज्ञानिक चिकित्सकों जैसे बारलों, क्रेसकी और अन्य का मत है कि यदि शारीरिक और मानसिक संवदेनाओं की भ्रान्त व्याख्या बदल दी जाये और व्यक्ति को यथार्थ अर्थ समझा दिया जाये तो भीषिका विकृति के दौरे की संभावना कम हो जाती है। अत: इन लोगों के मनोवैज्ञानिक परामर्श में तर्क दिया जाता है कि सामान्य थकावट, “वास गति बढ़ना, पसीना आना, छाती में दर्द होना,आदि सामान्य चिन्ता के लक्षण हैं। यदि इन लक्षणों का ह्रदय आघात के लक्षण मान लिये जाये तो ये लक्षण और गंभीर हो जाते हैं और भीषिका विकृति के दौरे होने की संभावना बढ़ जाती है। अत: रोगियों को इन लक्षणों की पुर्नव्याख्या करने को कहा जाता है ओर समझाया जाता है कि लक्षण सामान्य चिन्ता के हैं और ये सामान्य और स्वभाविक शारीरिक लक्षण हैं। इस प्रकार के सामान्य शारीरिक लक्षण अधिक कार्य करने,थकावट, स्वच्छ हवा के अभाव, भूख या प्यास के कारण भी होते हैं। इन लक्षणों को सामान्य रूप से देखने का प्रशिक्षण दिया जाता है। कुछ समय बाद रोगी अपने शारीरिक संवेदनाओं की सही व्याख्या करना सीख जाता है और भीषिका विकृति के दौरे से बचने लगता है।

9.4 सारांश

मानसिक स्वास्थ्य से तात्पर्य कुछ वैसे अर्जित व्यवहारों से होता है जो सामाजिक रूप से अनुकूली होते है। ओर जो व्यक्ति को अपनी जिन्दगी के हालातों के साथ पर्याप्त रूप से मुकाबला करने की अनुमति देता है। मानसिक स्वास्थ्य के कई सूचक या तत्व बतलाए गए हैं। मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन मानसिक स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण बतलाया गया है। इनमें चार प्रमुख कारकों का वण्रन किया गया है। कुछ ऐसे कारकों का भी वर्णन किया गया है जिनसे व्यक्ति का मानसिक स्वास्थ्य प्रभावित होता हैं ऐसे 6 महत्वूपर्ण कारकों का वर्णन किया गया है।

मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने के तीन तरीकों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया हैं वे तीन तरीके हैं-निरोधातमक उपाय, मनोवैज्ञानिक उपाय तथा सामाजिक-सांस्कृतिक उपाय। मानसिक स्वास्थ्य हस्तक्षे के पाँच मॉडल का वर्णन किया गया है- अभिरक्षात्मक मॉडल, चिकित्सा मॉडल , नैदानिक ध्रुव मॉडल, जन स्वास्थ्य ध्रुव मॉडल तथा सामाजिक क्रिया मॉडल।

मानसिक स्वास्थ्य संबंधी बहुत सी समस्याएं होती हैं जैसे मानसिक तनाव, चिन्ता, विकृति, दुभीति, भीषिका विकृति आदि। इन सभी समस्याओं के लिए परामर्श की आवश्यकता होती है।

9.5 बोध प्रश्न

1 मानसिक स्वास्थ्य का क्या अर्थ होते हैं? इसको प्रभावित करने वाले कौन कौन से कारक होते है।

2 मानसिक तनाव में परामर्श की क्या भूमिका होती है?

3 मानसिक स्वस्थ व्यक्ति की क्या क्या विशेषता होती है?

इकाई – 10

खेल परामर्श

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य
10.1 प्रस्तावना
10.2 खेल परामर्श के उद्देश्य
10.3 पेशेवर परामर्श का अर्थ एवं उपयोगिता
10.4 खेल परामर्श/मनोविज्ञान के लाभ
10.5 सारांश
10.6 अभ्यास प्रश्न/स्वमूल्यांकन
10.7 संदर्भ सूची

10.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपको खेल परामर्श से जुड़े तथ्यों के बारे में जानकारी मिलेगी जैसे :-

- खेल परामर्श का महत्व
- पेशेवर परामर्श का अर्थ एवं उपयोगिता
- खेल परामर्श की आवश्यकता
- खेल परामर्श के लक्षण
- खेल परामर्श के लाभ
- खेल परामर्श/मनोविज्ञान की व्यावहारिक उपयोगिता
- कैरियर परामर्श का छात्र खिलाड़ी से संबंध

10.1 प्रस्तावना

खेलकूद में शारीरिक स्वस्थता के साथ ही मानसिक तौर पर दृढ़ता होना भी काफी महत्वपूर्ण कारक है। यह तथ्य योग की अति उच्च विकसित पद्धति के अस्तित्व में होने से सिद्ध होता है तथा अति विकसित देशी खेलों, जिनमें केरल की स्थानीय कलरिप्पयट्ट कला में भी देखने को मिलता है। इस युद्ध कला में जहां शारीरिक तौर पर मजबूत होना जरुरी है वहीं खिलाड़ी का मानसिक तौर पर स्वस्थ होना भी बेहद आवश्यक है, जिससे कि वह अपनी कला-प्रदर्शन अथवा अभ्यास के दौरान एकाग्रता को कायम रख सके।

खेलकूद और श्रेष्ठता के लिये मनुष्य की खोज के बीच सहज संबंध होने को तब से स्वीकार किया गया है जब से मानव सभ्यता की शुरूआत हुई और प्राचीन ग्रीक सभ्यता जो कि ओलंपिक अभियान की जनक थी, में अपने चरम पर पहुंच गई। जैसा कि ओलंपिक चार्टर में उल्लेख किया गया है, ओलंपिक खेल एक जीवन दर्षन है, शरीर, इच्छा, मन के स्वभाव (क्वालिटी) को पूरी तरह से संतुलित रूप में उन्नत और संयोजित करना है। योग का आधार भी इसी तरह शरीर और मन पर पूर्णतया नियंत्रण करना है। ओलंपिक खेल का मतलब एक जीवन शैली बनाना है, जिसका मूल आधार है प्रयास की खुषी, आदर्श उदाहरण का शैक्षिक मूल्य और सार्वभौमिक आधारभूत नैतिक प्रथाओं का सम्मान।

आधुनिक समय में विकास में खेल की भूमिका की मान्यता में लगातार बढ़ोत्तरी हो रही है। अंतर्राष्ट्रीय शारीरिक शिक्षा और खेल चार्टर, यूनेस्को 1978 में यह उल्लेख है कि ''प्रत्येक व्यक्ति का शारीरिक शिक्षा और खेल के लिये उसकी पहुंच में होना उसका मौलिक अधिकार है जो कि उसके व्यक्तित्व के पूर्ण विकास के लिये अनिवार्य है। शारीरिक शिक्षा और खेल के जरिये शारीरिक, बौद्धिक और नैतिक शक्तियां विकसित करने की स्वतंत्रता की गारंटी शैक्षिक प्रणाली और सामाजिक जीवन के अन्य पहलुओं दोनों के अंतर्गत होनी चाहिए।''

संयुक्त राष्ट्र ने 2001 में अपने एजेंडा में विकास और शांति के लिये खेल विषय वस्तु के रूप में अंगीकार किया जिसमें खेल विकास और युवा विकास के बीच निकट संबंध होना तथा शताब्दी विकास लक्ष्य प्रदर्शित किया गया। संयुक्त राष्ट्र महासभा ने वर्ष 2005 को खेल और शारीरिक शिक्षा वर्ष के रूप में मनाया जिसके द्वारा खेल और शारीरिक शिक्षा को समग्र विकास एजेंडा में समेकित करने की जरुरत पर जोर दिया गया। इस पहल में खेल को इस प्रकार रेखांकित किया गया:-

1- खेल अच्छी शिक्षा का अभिन्न अंग है जिसमें शिक्षा, स्वास्थ्य और व्यक्तित्व विकास को बढ़ावा देने के लिये शारीरिक शिक्षा को एक आवश्यक पूर्ण अपेक्षा के रूप में अनिवार्य हो
2- खेल से लोगों के स्वास्थ्य में सुधार होता है
3- खेल से व्यापक वृद्धि के जरिये सतत विकास उपलब्ध होता है
4- खेल से स्थाई शांति निर्मित होती है

10.2 खेल परामर्श के उद्देश्य

भारत में शारीरिक शिक्षा और खेल को औपचारिक शिक्षा के साथ जोड़ने पर जोर प्रथम पंचवर्षीय योजना में ही दिया गया है। ग्वालियर में लक्ष्मीबाई राष्ट्रीय कोचिंग स्कीम और ग्रामीण खेल कार्यक्रम तीसरी पंचवर्षीय योजना में शुरू किये गये और इसे चौथी तथा पांचवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान बढ़ाया गया। प्रतिभाओं की खोज और उनके प्रशिक्षण पर जोर छठी पंचवर्षीय योजना में दिया गया। सातवीं पंचवर्षीय योजना में मुख्य रूप से खेल अवसंरचना के निर्माण पर ध्यान केन्द्रित किया गया। विशिष्ट क्षेत्र खेल-कूद पहुंच के माध्यम से ग्रामीण खेलों के विकास पर जोर आठवीं पंचवर्षीय योजना में दिया गया। नौंवी पंचवर्षीय योजना में आधुनिक खेल अवसंस्दना की आवश्यकता पर जोर दिया गया। दसवीं पंचवर्षीय योजना में खेल के व्यापक आधार को बढ़ावा देने और खेल में उत्कृष्टता को बढ़ावा देने दोनो के लिये प्रस्ताव किया गया। जाहिर है इसमें खेल परामर्श जैसे विषय भी शामिल थे।

प्रतियोगी खेलों के क्षेत्र में पिछले कुछ वर्षों के दौरान अंतर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता के अंतर्गत कवर की जाने

वाली खेल विधाओं की संख्या, इन खेलों को खेलने का तरीका, अवसंरचना की आवश्यकताओं और वैज्ञानिक तथा तकनीकी समर्थन के संबंध में बढ़ती हुई संवेदनशीलता, मीडिया के जबरदस्त प्रचार के कारण खेलों में बढ़ती हुई प्रतियोगिता तथा एक गंभीर व्यवसाय के रूप में खेलों के उभरने के कारण इन क्षेत्रों में काफी परिवर्तन हुआ है। इसके अलावा खेलों में डोपिंग और भ्रष्टाचार जैसी कई चुनौतियां उभरकर सामने आई हैं जिनका प्रभावी मुकाबला करने के लिये खेल परामर्श आज के दौर में आवश्यक हो चला है। खेलों के लिये और अधिक प्रशिक्षण, बेहतर परामर्श, खेल-औषधि उपलब्ध कराने पर खासा ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है।

10.3 पेशेवर परामर्श का अर्थ एवं उपयोगिता

भारत में युवा जनसंख्या में तेजी से वृद्धि देखी गई है। इस बढ़ोत्तरी का बड़ा फायदा यह है कि यहां अन्य देशों की तुलना में निर्भरता अनुपात कम है। इससे भारत जैसे देश भावी निवेश के लिये अधिक संसाधन

खर्च करने में समर्थ हैं। पिछले एक दषक के दौरान कॉलेज स्तर के साथ-साथ पेशेवर स्तर पर और अवकाश के दिनों में खेलों में हिस्सा लेने और खेलों के प्रति रूचि में अभूतपूर्व बढ़ोत्तरी देखी गई है। 1970 के दशक और 1980 के दशक में इस बढ़ोत्तरी से खेलों का व्यावसायीकरण हुआ है। मंजूरी देने वाले निकायों की भागीदारी के बावजूद अनगिनत छात्र एथलीट शोषण, व्यक्तिगत ज्यादतियों, ड्रग और शराब के साथ ही विभिन्न मनोवैज्ञानिक समस्याओं का सामना कर रहे हैं।

अमेरिकन कॉलेज एथलीटों में से लगभग दस प्रतिशत परामर्श के लिए उपयुक्त समस्याओं से ग्रस्त हैं। कॉलेज स्तर पर होने वाले कई खेल कार्यक्रम पेशेवर टीमों के लिए महंगी तैयारी वाले कार्यक्रम बन गए हैं। शायद ही ऐसा कोई दिन बीतता हो जब किसी खिलाड़ी छात्र के प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से खेल के प्रदर्शन के साथ जुड़ी मनोसामाजिक व्यवहारिक कठिनाई संबंधी समाचार रिपोर्ट न आती हो।

छात्र एथलीटों के लिये भावनात्मक कठिनाईयां खेल में भागीदारी से जुड़ा एक कार्यक्रम है। छात्र एथलीटों में दूसरों के द्वारा किये जाने वाले मूल्यांकन के खतरे से उत्पन्न तनाव, आत्मविश्वास की कमी और कोच और प्रशंसकों से अनुचित उम्मीदें ऐसी ही कुछ समस्याएं हैं जो छात्रों के सामने मुंह बाये खड़ी रहती हैं। छात्र एथलीटों के लिये शिक्षा, विकास, और सुधारात्मक कार्यक्रम आवश्यक हैं। जिन्हें इस तरह के कार्यक्रमों की जरुरत हैं उनके लिये वे उपलब्ध ही नहीं हैं और ऐसे कार्यक्रम जिनमें परामर्श किसी भी स्वरूप में शामिल है, वे बेहद सीमित मात्रा में हैं।

खेल परामर्श एथलीटों को प्रतियोगिताओं में अधिक प्रतिस्पर्धात्मक बढ़त हासिल करने में मदद करता है, अभिभावक अपने बेटे और बेटियों को कोच, उपचार, टीम के दूसरे साथियों और अन्य नकारात्मक अनुभवों के उपचार के लिये खेल परामर्श के माध्यम से भेज सकते हैं। खेल परामर्श बच्चों या किषोरों के अनुभवों को बेहतर कर सकता है जिससे एथलीट कोच या अन्य साथियों व प्रदर्शन में आत्मविश्वास की कमी के साथ लड़कर बाहर निकलने में सक्षम हो सकते हैं।

किसी भी व्यक्ति का पेशेवर परामर्श स्तरीय मनोवैज्ञानिक विधियों जैसे पिछले मामलों के आंकड़े एकत्र करके, विभिन्न तरह से व्यक्तिगत साक्षात्कार तकनीक का इस्तेमाल करके और उसकी व्यक्तिगत जरुरतों और इच्छाओं को बेहतर तरीके से गारंटी कर उपलब्ध कराने एवं अभिरुचि के प्रयोग के जरिये किया जा सकता है।

परामर्शदाता आमतौर पर ग्राहक की समस्याओं को हल करने के बजाय उसकी सोच को स्पष्ट करने का प्रयास करता है। पेशेवर परामर्शदाताओं (जैसे शैक्षिक मार्गदर्शक और कैरियर सलाहकार) और मनोवैज्ञानिक परामर्शदाता (जैसे विवाह और शोक सलाहकार) संस्थागत स्वरूप में और निजी प्रैक्टिस करते हुए विस्तृत रूप में देखे जा सकते हैं।

''ऐसी प्रक्रिया जो व्यक्तियों की निजी शैक्षिक योग्यता और एथलीट क्षमता को बढ़ाती है। खेल परामर्श एक सक्रिय, विकास उन्मुख सिद्धांतों के जरिये पूरा किया जा सकता है जिसमें परामर्श के सिद्धान्त जैसे कैरियर विकास, गतिशील विज्ञान, मनोविज्ञान और मानव विकास को शामिल किया गया है।'' ***(नेजेडलो इटल, 1985)***

एक विशेष अनुभव खेल दुर्घटनाओं से संबंधित है। उदाहरण के लिए, एक ही एथलीट को किसी गेंद से चेहरे या शरीर के अन्य हिस्से में मारा जाता है तो वह इसे रोकने के तरीके विकसित कर सकता हैं। दूसरी बार ऐसे तरीके से दूसरा प्रतिद्वंदी खिलाड़ी प्रभावित हो सकता है। यह तरीका एथलीट को अपना सर्वश्रेष्ठ और आक्रामक खेलने से रोकता है।

''मुझे अपने स्कूल में अपने कोच के साथ समस्या हो रही थी और मैं अब और फुटबॉल खेलना नहीं चाहता था। मैं सच में अपने माता-पिता के लिये कठिनाई पैदा कर रहा था क्योंकि मैं हर वक्त काफी गुस्से में रहता था। मैं क्या महसूस कर रहा हूं इस बात को मेरे माता पिता को बताने में माइकल ने मेरी काफी मदद की। उसने मुझे अपने कोच से बात करने के लिये भी काफी प्रोत्साहित किया। और वह समझ गया, उसने मुझसे माफी मांग ली इसके परिणामस्वरूप मैंने उसके साथ सच में बहुत अच्छा समय बिताया। मैं अब ज्यादा खाना खाता हूं और मेरे खेलने की इच्छा अधिक हो गई है।''

-ए.डब्लू, किशोर बालक, खेल परामर्श

खेल परामर्श क्यों?

हमारे जीवन में दिन-प्रतिदिन बढ़ते तनाव के कारण आजकल परामर्शदाताओं/मनोवैज्ञानिकों/सलाहकारों की मांग हर क्षेत्र में काफी बढ़ रही है। मौजूदा समय में परामर्शदाताओं/मनोवैज्ञानिकों/सलाहकारों के पास जाने का अर्थ गलत नहीं लगाया जाता है, जबकि पिछले कुछ वर्षो तक लोग परामर्शदाताओं/मनोवैज्ञानिकों/सलाहकारों के पास जाना पसंद नहीं करते थे। आजकल कुछ विद्यालयों और महाविद्यालयों में मनोवैज्ञानिक या परामर्शदाता की नियमित व्यवस्था की जाती है। यह व्यवस्था विद्यार्थियों और अध्यापकों दोनों के लिए महत्वपूर्ण साबित हुई है। खेल परामर्श/मनोविज्ञान अपनी पूर्णता में एक ऐसा क्षेत्र है, जहां खिलाड़ियों से जुड़े मुद्दों के बारे में विचार किया जाता है।

स्कुलों, सामाजिक सेवा की सरकारी एजेंसियों तथा प्रबंधन परामर्श सेवाओं में भी रोजगार के अनगिनत द्वारा खुल गए हैं। सर्वेक्षण, डिजाइन, विश्लेषण और अनुसंधान के क्षेत्र में कंपनियां मनोवैज्ञानिकों की विशेषज्ञता का लाभ उठा रही हैं, ताकि बाजार मूल्यांकन एवं साख्यिकीय विश्लेषण किया जा सके।

जैसा कि पहले कहा गया है कि खेल परामर्श एथलीटों को उनके संबंधित खेलों में अधिक प्रतिस्पर्धात्मक बढ़त हासिल करने में मदद करता है। खेल परामर्श बच्चों या किषोरों के अनुभवों को बेहतर कर सकता है जिससे उनमें कम हुए आत्मविश्वास को बढ़ाने में मदद मिल सकती है। उच्च प्रदर्शन वाले एथलीटों के लिये वैज्ञानिक और तकनीकी सहायता पद्धति को सुदृढ़ किया जाना आज के समय की मांग है। पहले खेल दवाईयां मस्कुलोस्केलेटल (आर्थोपेडिक) समझी जाती थी, लेकिन अब यह बहु मिश्रित और बहु विधा बन चुकी है। इसमें कारडियोलॉजी, पुलमोनोलॉजी, आर्थोपेडिक, एक्सरसाईज फिजियोलॉजी, बायोमैकिनिक्स, ट्रामोटेलॉजी, डरमिटोलॉजी और इंडोक्रिनोलॉजी शामिल है।

खिलाड़ियों का प्रदर्शन उनकी उच्च क्षमता तक बढ़ाने के लिये वैज्ञानिक और तकनीकी सहायता की महत्वपूर्ण भूमिका है। इसके लिये खेल विज्ञान और सुदृढ़ खेल पद्धतियां विकसित किया जाना जरुरी है साथ ही खिलाड़ी प्रशिक्षण केन्द्रों के साथ शीर्ष अस्पतालों द्वारा विशेषज्ञ दवाईयों सहित चिकित्सा विशेषज्ञों जैसे एक्सरसाईज फिजियोलॉजिस्ट, फिजीषियन, फिजियोथिरेपिस्ट, कोस्टोमैट्रिक्स, डेन्टिस्ट,

पोडाट्रिस्ट, साईकोलॉजिस्ट, खेल विज्ञानी और पैरामेडिकल स्टाफ का टाई-अप आवश्यक हो गया है। जिससे उन्हें सही समय पर सही मात्रा में बेहतर उपचार और मदद मिल सके। खेल परामर्श निम्न कारणों से बेहद जरुरी हो जाता है:-

1. खिलाड़ी की क्षमता में रुकावट बनने वाले विशिष्ट चीजों या चुनौतियों की समीक्षा।
2. पिछली सफलताओं और मानसिक रुकावट के अतीत की समीक्षा।
3. पारिवारिक अतीत या मजबूत संदेशों की समीक्षा जो आपके मौजूदा प्रदर्शन को प्रभावित करते हों।
4. प्रमुख लक्ष्यों की पहचान करना और प्रत्येक चुनौतीपूर्ण क्षेत्र के लिए सफलता की योजना का विकास करना।
5. सफलता योजना को लागू करने के लिए अवसरों की पहचान करना।
6. सफलता योजना हमारे कार्यालय में विकसित की जा सकती है और इसे गोल्फ कोर्स, किसी टूर्नामेंट, टेनिस कोर्ट, जिम, फुटबॉल मैदान या किसी भी अन्य खेल स्थल पर निष्पादित किया जा सकता है।

खेल मनोविज्ञान परामर्श की जरुरत के संकेत करने वाले लक्षण

मनोविज्ञान की मूलभूत एवं अनुप्रयुक्त - दोनों प्रकार की शाखाएं हैं। इसकी महत्वपूर्ण शाखाएं सामाजिक एवं पर्यावरण मनोविज्ञान, संगठनात्मक व्यवहार/मनोविज्ञान, क्लीनिकल (निदानात्मक) मनोविज्ञान, मार्गदर्शन एवं परामर्श, औद्योगिक मनोविज्ञान, विकासात्मक, आपराधिक, प्रायोगिक परामर्श आदि है। अलग-अलग होने के बावजूद ये शाखाएं परस्पर संबद्ध हैं।

विशेषज्ञ और पारिवारिक परामर्श के परिणामस्वरूप अधिक से अधिक प्रतिभाशाली खिलाड़ी और उनके अभिभावक खेलों को एक मूल्यवान रोजगार के रूप में विकल्प के तौर पर लेंगे तथा इसकी वृद्धि में योगदान देंगे। एथलीटों में मनोविज्ञान परामर्श की जरुरत के संकेतों के मिलते ही उनमें व्यापक पैमाने पर जागरुकता कार्यक्रम और डोपिंग के हानिकारक प्रभावों के बारे में जानकारी तथा निर्बाध खेल संवर्धन की आवश्यकता और अभिलाशा को कार्यान्वित किया जाना जरुरी है। एथलीटों द्वारा निशिद्ध पदार्थों और पद्धतियों का खेलों में सुलभता और उपयोग को नियंत्रित किया जाना भी जरुरी है जबतक कि वह थिरापेटिक प्रयोग की छूट पर आधारित न हों। लेकिन इन सबके लिये जरुरी है कि कब और कैसे खेल परामर्श की जरुरत है इसकी सटीक पहचान की जाये। इस संबंध में निम्नलिखित संकेत एक पेशेवर परामर्शदाता के लिये सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

1. असंगत खेल प्रदर्शन
2. अपने रास्ते में स्वयं बाधा बनना
3. आत्मविश्वास की कमी
4. एथलीट असंतुष्टि महसूस होना

5. अक्सर आसान पहुंच में होने वाले अधूरे सपने पारिवारिक सहयोग की कमी के चलते पूरे ना होना
6. कौशल सुधार में असमर्थता महसूस होना या हताषा
7. खुद को सफल होने की अनुमति नहीं देना
8. स्व-विविधता का अभाव
9. घटनाक्रम की विनाशकता
10. चिंता की भावनाएँ
11. सामाजिक निष्कासन
12. अवसादग्रस्त विचार
13. अप्रभावी लक्ष्य निर्धारण
14. पिछली सफलताओं को मान्यता देने में हिचकिचाहट

खेल सलाहकारों द्वारा उपर्युक्त संकेतों को निर्दिष्ट करना आम होता जा रहा है, जिसके चलते छात्र एथलीटों के लिए हस्तक्षेप करने हेतु परामर्श पेशेवरों की मांग संवेदनशील हो रही है। जहां खेल मनोवैज्ञानिक खिलाड़ी के प्रदर्शन पर ध्यान केंद्रित करते हैं और कोच पारम्परिक तौर पर शारीरिक शिक्षा प्रशिक्षण पर ध्यान देते हैं, इनमें से कोई भी व्यक्तियों की मनोभावनात्मक कठिनाइयों के साथ काम करने के लिए न तो तैयार हैं ना ही योग्य है। पेशेवर परामर्शदाताओं को छात्र एथलीटों की व्यक्तिगत जरुरतों, चिंताओं तथा मनोभावनात्मक विचारों पर ध्यान देने की जरुरत है। इन्हें इस बात का ख्याल रखना चाहिए कि हर खिलाड़ी का प्रदर्शन पहले की अपेक्षा किस स्तर पर है कहीं वह अवसादग्रस्त तो नहीं है अथवा कहीं उसपर सामाजिक या आर्थिक दबाव तो नहीं है या कहीं निराशा का भाव तो नहीं है।

10.4 खेल परामर्श / मनोविज्ञान के लाभ

सफल मनोवैज्ञानिक के लिए जरूरी है कि वह दूसरों के प्रति सहृदय हों। उसे निराश व्यक्ति के मन-मस्तिष्क को समझने के लिए सहानुभूतिपूर्ण रवैया अपनाना होता है। इसके अतिरिक्त परामर्शदाता के पास विश्लेषणात्मक मनोवृति होना भी जरुरी है, लेकिन उसे एकदम निर्णय नहीं लेना चाहिए। उसमें व्यक्ति को स्वीकार करने की क्षमता होनी चाहिए। यदि ये गुण विद्यमान हैं, तो निश्चित रूप से यह खिलाड़ियों के लिये काफी लाभदायक होगा।

खेल परामर्श / मनोविज्ञान मूलत: खेल-कूद निष्पादन को उन्नत बनाने तथा खेल-कूद में सहभागिता को अधिक लाभकारी बनाने में सक्रिय भूमिका निभाता है। पेशेवर परामर्शदाता या खेल सलाहकार उन परिस्थितियों की भी पहचान करते हैं जिनसे पेशीय कौशलों का सीखना उन्नत हो सकता है तथा लोगों के ऐसे कौशलों को उन्नत बनाने के लिये भी भरपूर कोशिश करते हैं। इतना ही नहीं, खेल सलाहकार क्रीडा शिक्षक को भी प्रभावी शिक्षण तथा मानव संबंधों को उन्नत बनाने वाली प्रविधियों को विकसित करने में मदद करते हैं। पेशेवर परामर्शदाता खिलाड़ी में जीतने की मनोवृत्ति तथा एक मजबूत टीम भावना बनाए रखने में भी काफी मदद करते हैं। इस बारे में सिंगर ने 1993 में एक सटीक टिप्पणी करते हुए कहा

कि ''क्रीडा मनोविज्ञान पूरे विश्व में बहुत ही तीव्र गति से एक वैध क्रीडा विज्ञान एवं एक मूल्यवान सेवा प्रदान करने वाले पेशे के रूप में उभर रहा है।''

1- **बेहतर प्रदर्शन -** खेल सलाहकार दृश्य, स्वचर्चा, और आराम तकनीक जैसी विभिन्न रणनीतियों पर काम करते हैं, जो खिलाड़ियों को बाधाओं पर काबू पाने और अपनी पूरी क्षमता प्राप्त करने में मदद कर सकती हैं।

2- **प्रतिस्पर्धा के दबाव से सामना -** खेल परामर्शदाता एथलीटों को माता-पिता, कोच या उनकी खुद की अपेक्षाओं के दबाव से निपटने में सभी स्तरों पर मदद कर सकते हैं।

3- **चोटों से उबरने में -** चोट लगने के बाद एथलीटों को दर्द सहने में मदद की जरुरत हो सकती है, उन्हें शारीरिक चिकित्सा आवश्यकताओं की जरुरत होती है, या दरकिनार करने की जगह समायोजन की जरुरत हो सकती है।

4- **व्यायाम कार्यक्रम जारी रखना -** यहां तक कि जो नियमित तौर पर व्यायाम करना चाहते हैं वे भी अपने लक्ष्य को पाने में खुद को असमर्थ पा सकते हैं। खेल मनोवैज्ञानिक ऐसे व्यक्तियों को उत्प्रेरित करने और इससे जुड़ी चिंताओं से निपटने में मदद कर सकता है।

5- **खेल का आनंद -** युवाओं के लिये खेल संगठन खेल परामर्शदाता को खेल प्रशिक्षकों को शिक्षित करने के लिये रख सकते हैं कि एथलीटों को खेल का आनंद उठाने के लिये किस तरह से मदद की जाये और प्रतिभागियों में स्वस्थ आत्मसम्मान को कैसे बढ़ावा दिया जाये।

6- **लक्ष्यों और प्रतिबद्धताओं को स्थापित करने में मदद -** खेल परामर्शदाता यथार्थवादी औसत दर्जे और अवधि उन्मुख दीर्घकालिक और अल्पकालिक लक्ष्यों को निर्धारित करने में खिलाड़ियों की मदद कर सकते हैं। वे एथलीटों के अपने वर्तमान प्रदर्शन के स्तर को जानते हैं और एथलीटों को उनके लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए विशिष्ट, विस्तृत योजना विकसित करने में सक्षम होते हैं। खेल परिषदें खिलाड़ियों को अपने लक्ष्य के प्रति समर्पित बनाती हैं और प्रशिक्षण कार्यक्रमों संबंधी उनकी दैनिक मांग पर ध्यान देती हैं।

7- **प्रेरणा स्तर को बढ़ाना -** खेल सलाहकार खिलाड़ियों को पुरस्कार और खेलों में भागीदारी के लाभ से अवगत कराता है, खेल परिषद कठिन काम को समय से हासिल करने में खिलाड़ी की मदद करती है, उस समय भी जब ये लाभ तुरंत नहीं मिल रहे हों। खिलाड़ी को इस बात का

एहसास कराना कि इनमें से कई लाभ उनकी भागीदारी की वजह से हैं ना कि परिणामों की वजह से।

8- **लोगों को कौशल सीखने में मदद -** खेल परामर्शदाता एथलीट को इस बात का एहसास दिलाते हैं कि वे एक बड़ी प्रणाली का हिस्सा हैं जिसमें उसका परिवार, दोस्त-मित्र, टीम के साथी, कोच और अन्य लोग शामिल हैं। वे खिलाड़ियों को कब और कैसे प्रभावी तरीके से अपने विचारों, भावनाओं, जरुरतों और आवश्यकताओं को इन लोगों तक व्यक्त करना सिखाते हैं और नकारात्मक व विपरीत दौर में संघर्ष, षिकायतें, मुश्किल नियुक्तियों और अन्य लोगों के साथ निपटने के लिये प्रभावी कौशल एवं सुनने की क्षमता का सबक सिखाते हैं।

9- **स्वचर्चा -** खेल परामर्शदाता एथलीटों को अलग-अलग समय में यथार्थवादी, सकारात्मक स्वचर्चा के साथ उनके आत्मविश्वास को बनाए रखने में मदद करते हैं। वे प्रतियोगिता के दौरान भावनाओं और व्यवहार के जरिये स्वचर्चा का उपयोग कर खुद को विनियमित करने के लिए एथलीटों को प्रशिक्षित करते हैं।

10- **मानसिक कल्पना -** खेल परामर्शदाता खिलाड़ियों को प्रतिस्पर्धा के दौरान अच्छा प्रदर्शन करने के लिए एथलीटों को मानसिक रूप से तैयार करते हैं। वे खिलाड़ियों को प्रतियोगिता के दौरान त्रुटि और खराब प्रदर्शन से उबरने के लिए प्रतियोगिता के दौरान आपात स्थिति का उपयोग करने में खिलाड़ी की मदद करते हैं।

11- **तनाव से प्रभावी ढंग से निपटना -** खेल परामर्शदाता खिलाड़ी को इस बात के लिये तैयार करता है कि बेहतरीन प्रदर्शन के लिये एक ही कोण का तनाव बेहद जरुरी है।

12- **एकाग्रता में सुधार -** खेल परामर्शदाता एथलीट को सिखाता है कि किस तरह से एकाग्रता बनाये रखे और ध्यान भटकने ना दे चाहे वह प्राकृतिक तौर पर आये अथवा खुद के भीतर से आये। वह प्रतियोगिता के दौरान एकाग्रता बनाये रखता है।

13- **नेतृत्व एवं टीम कार्य-** खेल परामर्शदाता एथलीट को संयुक्त गतिविधि के लिये पूरी टीम के साथ संवाद स्थापित करने की कला सिखाता है। परामर्श से खिलाड़ी में नेतृत्व एवं टीम भावना भी विकसित होती है।

14- **समग्र निर्माण -** बेहतर परामर्श से वैयक्तिक विकास, नेतृत्व और टीम कार्य-कौशल को प्रोत्साहन के साथ-साथ समग्र सहभागिता का भी विकास होता है। खेल परामर्श मानसिक स्वतंत्रता तथा आत्मविश्वास में वृद्धि करने का शक्तिशाली उपकरण है।

10.4.1 खेल परामर्श / मनोविज्ञान की व्यावहारिक उपयोगिता

अमेरिकन मनोवैज्ञानिक संघ के अनुसार कुल मनोवैज्ञानिकों की संख्या का 43 प्रतिशत नैदानिक मनोवैज्ञानिक, 13 प्रतिशत परामर्श मनोवैज्ञानिक, 4 प्रतिशत औद्योगिक मनोवैज्ञानिक, 6 प्रतिशत शिक्षा मनोवैज्ञानिक तथा 5 प्रतिशत स्कूल मनोवैज्ञानिक हैं। इन आंकड़ों से ही खेल परामर्श/मनोविज्ञान की व्यावहारिक उपयोगिता सिद्ध हो जाते है।

प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में कोई ना कोई समस्या होती है। खिलाड़ियों में विवाद, खेल में मन ना लगना, नींद ना आना, अनावश्यक चिंता, भविष्य के प्रति खतरे का भाव आदि उत्पन्न होता रहता है। ऐसी समस्याओं के समाधान में परामर्श काफी मददगार होता है। पेशेवर परामर्शकर्ता के पास ऐसे साधन एवं युक्तियां होती हैं जिनका सही उपयोग करके वह छात्र खिलाड़ी की दैनिक जीवन की समस्याओं से निपटने में उसे मदद पहुंचाता है और आसानी से उसका निदान भी सुझाता है।

परामर्शदाता अच्छी तरह से छात्र एथलीटों के लिए डिजाइन, शिक्षा और नैदानिक सेवाओं सहित जीवन शैली परामर्श, विकास प्रोग्रामिंग, कैरियर विकास, और तनाव प्रबंधन के प्रावधान के लिए तैयार होते हैं। ज्यादातर सलाहकारों के प्रशिक्षण के दायरे से प्रत्यक्ष प्रदर्शन में बढ़ोत्तरी स्वत: ही बाहर होती है। इस क्षेत्र में आम तौर पर बेहतरीन तरीके से खेल मनोवैज्ञानिक या मनोवैज्ञानिकों द्वारा प्रेरक खेल प्रशिक्षण के साथ नियंत्रित किया जाता है। फिरभी यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता कि यह खिलाड़ियों के साथ सलाहकारों की भागीदारी प्रदर्शन में वृद्धि नहीं करता। इस तरह की वृद्धि अक्सर अप्रत्यक्ष होती है और एक परिणाम के रूप में परामर्श प्रक्रिया से जुड़े क्षेत्रों में सुधार में देखी जाती है।

उदाहरण के लिए, एक छात्र एथलीट जो मादक द्रव्य सेवन की समस्या से उबरता है, परामर्श के परिणामस्वरूप उसमें दूसरे खेल प्रदर्षनों में सुधार की संभावना हो सकती है। अधिकतम खेल परामर्शदाता को खेल से परिचित होना चाहिए। हालांकि, परामर्शदाता की खेल में रूचि से मदद की प्रक्रिया को बाधित नहीं होना चाहिए। सलाहकार को खेल प्रदर्शन की खातिर या संगठन/टीम अथवा जिसके लिये छात्र एथलीट प्रदर्शन करता है उसके चलते व्यक्ति की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए।

खेल मनोविज्ञान के विपरीत, खेल परामर्श का ध्यान खेल प्रदर्शन से जुड़े व्यक्तिगत और नैदानिक मुद्दों सहित एक व्यक्ति के रूप में खिलाड़ी के विकास पर होता है। उदाहरण के लिए, खेल परामर्श छात्र एथलीटों को तनाव और चिंता को कम करने, विफलता और सफलता के डर पर काबू पाने में मदद करता है। यह परिवार और वैवाहिक जीवन में कठिनाई जैसे पारस्परिक मुद्दों को दूर करने में भी मदद करता है। इसके अलावा, परामर्श कौशल, विश्राम प्रशिक्षण, निर्णय लेने, जीवन प्रबंधन और कैरियर की योजना बनाने, चिकित्सीय रणनीतियों, और संकट से मुकाबला, समस्या निवारण में भी सहायता कर सकता है। तनाव से निपटने में अप्रभावी प्रयास शराब और अन्य मादक द्रव्यों के दुरुपयोग के परिणाम के रूप में आ सकते हैं। खेल सलाहकारों द्वारा छात्र एथलीटों को समय पर आंकलन और इलाज, शैक्षिक कार्यक्रमों और दवाओं और मादक द्रव्यों के सेवन के इलाज के बारे में जानकारी प्रदान की जा सकती है।

संक्रमणकालीन अवधि छात्र एथलीटों के लिए विशेष रूप से तनावपूर्ण होती है। उदाहरण के लिये कई सारे हाईस्कूल सितारे कॉलेज टीम में सीमित प्रगति करते हैं जबकि दूसरों की परेषानी यह होती है कि उन्हें तब समायोजित किया जाता है जब उनका महाविद्यालय खेल कैरियर खत्म हो चुका होता है। दुर्भाग्य से जीवन की समस्याओं के ऐसे दौर के कुछ उदाहरण और अधिक खराब होते हैं। बदलाव के साथ कठिनाइयों का सामना करने वाले एथलीटों को चिकित्सकीय तौर पर हतोत्साहित और आत्महत्या करने के लिए जाना जाता है। इस प्रकार खेल परामर्श सेवाएं छात्र एथलीटों पर खेल के प्रभाव की भयावहता के प्रति संवेदनशील और महत्वपूर्ण हैं।

इसी तरह से कॉलेज स्तर पर पैसे वाले खेलों में शामिल नहीं होने वाले छात्र एथलीटों को मान्यता में कमी और कॉलेज खेल प्रणाली में असमानता से पीड़ित होना पड़ सकता है। चालक दल के सदस्यों, तैराक, धावकों, जिमनास्टों, पहलवानों, ट्राईएथलीटों और दूसरों को होने वाले तनाव और कठिनाईयों को परामर्श द्वारा क्रमश: समाप्त किया जा सकता है। नतीजतन खेल सलाहकार इन ''कम ज्ञात'' एथलीटों को सेवाएं प्रदान करने और विभिन्न तरीकों को लागू करने के लिये इनके साथ शामिल हो रहे हैं। छात्र एथलीटों को होने वाली कई कठिनाईयों को दूर करने के लिये किसी अनूठी तकनीक या चिकित्सकीय दक्षता की जरुरत नहीं होती। हालांकि इन्हें सैद्धांतिक मॉडल के विकास की आवश्यकता है जो खेल परामर्श और इससे संबंधित सक्रिय ज्ञान हस्तक्षेप के आधार में वृद्धि कर सकें।

(क) पेशेवर या ओलंपिक स्तर पर कोच तेजी से सुर्खियों में बन रहे हैं। गोल्ड कहते हैं ''उनका काम कई मायनों में एथलीटों से ज्यादा कठिन है।'' ''वे एथलीटों के लिए माहौल बनाने की कोशिश कर रहे हैं, और ऐसे समय में कोच नर्वस हो जाता है, तो कभी-कभी वह घबरा जाता है।'' नर्वस एथलीट के साथ मिलकर तनाव पैदा हो जाता है, जो एथलीट के बेहतरीन प्रदर्शन करने की क्षमता में बाधा कर सकता है।

जाहिर है, टीम के खेल के लिए चाहे वह लयबद्ध तैराकी, वालीबाल, युगल टेनिस या अन्य महत्वपूर्ण कार्यक्रम हों, टीम के सदस्यों बीच सामंजस्य और अच्छा संवाद पैदा करना सफलता की कुंजी है।

(ख) एथलीटों के भी अपने दैनिक जीवन में खेल के दायरे से बाहर लोग होते हैं। दोस्त और परिवार के सदस्य उसे मानसिक स्थिरता प्रदान कर सकते हैं, लेकिन वे भी उसके लिये मनोवैज्ञानिक समस्या बन सकते हैं। इंडियाना विश्वविद्यालय, ब्लूमिंग्टन के खेल एवं प्रदर्शन मनोवैज्ञानिक क्रिस कैर जिन्होंने पिछली ओलंपिक टीमों सहित 2008 की यू.एस. ओलंपिक गोताखोर टीम को कोच किया है कहते हैं ''यहां तक कि अनुभवी खिलाड़ियों के लिए, उनके सबसे बड़े प्रषंसक उनके पारिवारिकजन होते हैं और यही उनके विकर्शण के सबसे बड़े कारणों में से एक होता है।'' कैर ने वर्षों तक खिलाड़ियों के साथ काम करके और उनसे बातचीत करके इस बात को जाना। काफी समय पहले जब टीम बीजिंग जा रही थी वे और उनके सहयोगियों ने गोताखोरों के परिवार और दोस्तों के लिए कार्यशालाओं का आयोजन किया कि कैसे वे खिलाड़ियों को बेहतर ढंग से अपना समर्थन दे सकते हैं और विकर्शण को कम कर सकते हैं।

अन्य मनोवैज्ञानिकों ने अपने प्रयासों को खुद के रिश्तों के समर्थन की जगह एथलीटों की आसान मदद करने पर केन्द्रित रखा। 2012 की पहली यू.एस. महिला कुश्ती टीम की वैकल्पिक ओलंपिक एथलीट आकांक्षी एडलिन ग्रे इस बात को मानती हैं कि खेल मनोविज्ञान मदद करने में शक्तिशाली भूमिका निभा सकता है और इसका समर्थन नेटवर्क उनकी मदद कर सकता है। ग्रे जानती थी कि अपना बेहतरीन करने के लिये उन्हें "शांत रहने की जरुरत है और मैदान छूने से पहले उत्साह की जरुरत है। वे कहती हैं कि ''यदि मैं बहुत नर्वस हो जाती, तो यह बहुत ज्यादा होता।''

लेकिन उसके सबसे बड़े समर्थक और लंबे समय तक कोच रहे उनके पिता ने मैच शुरू होने से पहले उनमें उत्साह का संचार करने के लिये उनके चेहरे की ओर देखकर चिल्लाने की आदत डाल रखी थी। इस हस्तक्षेप से ग्रे तैयार हो जाती थीं। तो उनके खेल मनोविज्ञानी उन्हें गले लगाने और मुस्कुराने की बजाय उनके पिता को पूछने का साहस देने में मदद करते थे। बस ऐसे ही उनके पिता उन्हें गले लगाते और वह बढ़िया मन और दिमाग के साथ अपने मैच को खेलने के लिये आगे बढ़ जातीं।

21 वर्षीय ग्रे अपनी मध्य किशोरावस्था के समय से ही खेल मनोविज्ञानी के साथ काम कर रही हैं। वे कहती हैं कि वे दूसरे एथलीटों को किसी एक को भी चुनने के लिये प्रोत्साहित करती हैं भले ही उनका कुत्ता हो जिससे वे बात करना चाहें। वे कहती हैं कि ''एक और चीज है जो आपके जीवन में आसानी से चल रही है तो आप अपने खेल पर अपना ध्यान लगा सकते हैं।''

एक खेल मनोविज्ञानी हमेशा खिलाड़ी के साथ अपने संबंधों से भी अधिक ध्यान केंद्रित करता है। एक निशानेबाज जिसे अपने लक्ष्य को पाने के लिये मन को शांत और यहां तक कि उसके दिल की धड़कनों को भी सहेजना होता है की तुलना में एक भारोत्तोलक के लिये मानसिक तैयारी करना काफी कठिन होता है जिसे लगभग अलौकिक ऊर्जा और ताकत के विस्फोट की जरूरत होती है। खेल मनोविज्ञानी सर्वश्रेष्ठ एथलीट की बेहतरीन तरीके से कैसे मदद कर सकते हैं और उसमें सुधार ला सकते हैं इसे समझने के लिये किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व और आदतों को अच्छी तरह से समझना होगा।

बीजिंग में 2008 के ग्रीष्मकालीन ओलंपिक के लिए कैर ने अमेरिकी ओलिंपिक गोताखोर टीम तैयार की। उद्घाटन समारोह का शुभारंभ समय पर हुआ, ''मैंने चार साल तक हर एक के साथ बातचीत करके और पर्यवेक्षण करके इन एथलीटों के साथ काम किया है'' वे कहते हैं। ''एथलीटों या टीम के साथ उनके औपचारिक सत्रों से ही केवल लाभ नहीं हुआ बल्कि प्रशिक्षण स्थल से ओलंपिक गांव की ओर बस से जाते समय आरामदायक आकस्मिक बातचीत के जरिये लाभ हासिल किया गया।'' जहां वह इस बात की जांच करते थे कि एथलीट क्या महसूस कर रहे हैं और वे इस बात को सुनिश्चित करते थे कि वे मानसिक तौर पर कितने तैयार हैं।

इसके अतिरिक्त आमतौर पर एथलीटों को खाली जगह पर सलाह नहीं दी जाती है। कोच, माता-पिता और दूसरे महत्वपूर्ण लोग भी खेल सलाहकारों से प्रभावी संचार कौशल सीख सकते हैं और सबसे प्रभावशाली रोल मॉडल के रूप में काम करने के तरीके जान सकते हैं। खेल प्रशिक्षक भी खेल सलाहकारों से संबंध बनाने के कौशल सीख सकते हैं। इसी तरह, छात्र एथलीटों के सांस्कृतिक पहलू खेल परामर्श प्रक्रिया के महत्वपूर्ण घटक हैं।

किसी भी प्रयास में विविधता जुड़ी होती है। परामर्शदाता, जो छात्र एथलीटों के साथ पेशेवर तरीके से जुड़े होते हैं, को एथलेटिक आबादी की विशेषताओं के व्यक्तिगत और समूह मतभेदों को समझना चाहिए। महिलाओं और अल्पसंख्यकों की खेल में उनकी भागीदारी और उनकी भागीदारी के कारण उत्पन्न होने वाले मुद्दों के चलते उनकी जरूरतों का मसला अलग हो सकता है।

इसलिये खेल परामर्श की प्रक्रिया को व्यक्तिगत जरूरतों का सम्मान करने की जरूरत है। महिला खेल, महिलाओं के डिब्बों, महिला प्रशिक्षकों, महिला टीमों में पुरुष प्रशिक्षक और विशेष एथलीटों (जैसे, व्हीलचेयर) को भी खेल सलाहकार सेवाओं से फायदा मिल सकता है।

खेल में हिस्सा लेने की अल्पसंख्यक एथलीटों की मंशा भी अलग हो सकती है। खेल की तैयारी का स्तर जातीय या अल्पसंख्यक समूह से अलग हो सकता है। अल्पसंख्यक एथलीटों की शैक्षिक आवश्यकताएं भी अलग हो सकती हैं। उदाहरण के लिए, ब्राउन (1978) ने ''जॉक ट्रैप'' का हवाला दिया है जिसमें एथलीटों को कॉलेज स्तर पर पकड़ा गया है। यह छापा उस एथलीट के हवाले से था जिसकी शारीरिक क्षमता और पात्रता का इस्तेमाल संस्था द्वारा किया गया तथा वह बिना शिक्षित हुए ही संस्था छोड़ देता

है। ब्राउन कहते हैं कि हर तरह के खिलाड़ी प्रभावित होते रहे हैं, इससे यह लगता है कि दूसरों की तुलना में अफ्रीकी अमेरिकी एथलीट अधिक बार प्रभावित होते हैं।

कैरियर परामर्श का छात्र खिलाड़ी से संबंध

भारतीय क्रिकेट टीम ने अपने मानसिक पहलू को अधिक मजबूत बनाने में मदद देने के लिए दिग्गज खेल मनोविज्ञानी रूडी वेबस्टर की सेवाएं मांगी। वेबस्टर ने टीम इंडिया के कोच ग्रेग चैपल को 1979-80 में बुरे फॉर्म के दौर से उबारने में मदद की थी। तब चैपल खेल क्रिकेट को अलविदा कहने का मन बना चुके थे लेकिन वेबस्टर ने उन्हें आश्वस्त करते हुए कहा था कि उन्हें मानसिक रूप से मजबूत बनना चाहिए। वह तत्कालीन शीर्ष बल्लेबाजों में अपना स्थान बना सकते हैं। चैपल ने ही भारतीय टीम को वेबस्टर के साथ सत्र आयोजित करने की सलाह देते हुए कहा, ''वह बहुत अनुभव व्यक्ति हैं। उनके जैसी क्रिकेट की समझ और खेल मनोविज्ञान को समझने वाला दूसरा व्यक्ति नहीं है।''

चैपल का कथन इस बात को प्रमाणित करता है कि कैरियर परामर्श का छात्र खिलाड़ियों के साथ परस्पर संबंध है। कॉलेज स्तर के खिलाड़ी शायद ही कभी समर्थक रैंकों या ओलंपिक तक पहुंचते हैं।

वास्तव में ज्यादातर स्नातक स्तर की पढ़ाई तक नहीं करते। यह इस बात को भी दर्शाता है कि छात्र एथलीटों के करियर के शुरुआती दौर में उनके कैरियर के विकास और जीवन की योजना बनाने की जरूरत है। छात्र एथलीटों के कैरियर निर्णय अक्सर उनके खेलों में भागीदारी की आवश्यक प्रतिबद्धता की तीव्र स्तर की वजह से नजरअंदाज अथवा विलंबित कर दिये जाते हैं। खेल सलाहकारों के हस्तक्षेप का प्रयोग इसमें सफल रहा है जो उम्र भर में विकास पर ध्यान देते हैं। इन कक्षाओं में छात्र एथलीटों को आगे आने वाली कठिनाइयों के बारे में जागरूकता की जरुरत बताई जाती है और शिक्षित किया जाता है और उन्हें प्रभावी व्यक्तिगत समस्या प्रबंधन के लिए आवश्यक कौशल सिखाया जाता है। छात्र एथलीटों के साथ काम करने वाले खेल सलाहकार कैरियर जानकारी की विस्तृत श्रृंखला की जरूरत के प्रति काफी संवेदनशील होते हैं। इसके अलावा, खेल सलाहकार छात्र एथलीटों को अपने अकादमिक प्रदर्शन और अपने महत्वपूर्ण संबंधों का मूल्यांकन करने में मदद प्रदान करते हैं जो बेहतर खिलाड़ी बनने के लिए जरुरी है।

10.5 सारांश

खेल परामर्श दैनिक जरुरत के साथ-साथ बेहतर रोजगार के अवसर के रूप में भी प्रचलित हो चला है। इसके कार्यान्वयन के लिए प्रभावी मॉडल और रणनीतियों की जरुरत है। इस तरह के मॉडल में कैरियर जीवन की योजना बनाने, शारीरिक शिक्षकों, कोचों और खेल सलाहकारों के बीच सहयोग को बढ़ावा देने और खेल के परामर्श के लिए अक्सर इस्तेमाल परामर्श स्वरूपों को अपनाने में शामिल करना चाहिए। मौजूदा समय में इस क्षेत्र में रूचिकर खेल परामर्श पाठ्ïक्रम (जैसे, फ्लोरिडा स्टेट यूनिवर्सिटी, ग्रीन्सबोरो में उत्तरी कैरोलिना विश्वविद्यालय, दक्षिण कैरोलिना विश्वविद्यालय, दक्षिणी इलिनोइस विश्वविद्यालय, सिरैक्यूज विश्वविद्यालय, और ि स्प्रंगफील्ड कॉलेज) पेष कर रहे हैं। इन पाठ्यक्रमों की तर्ज पर भारत में भी खेल परामर्श से जुड़े आधुनिक पाठ्यक्रम खेल विषयों का हिस्सा बनाया जाना चाहिए।

छात्र एथलीटों के साथ काम करने वाले खेल सलाहकार इस बिरादरी को खेल प्रदर्शन से प्रभावित करने वाले व्यक्तिगत विकास के विभिन्न पहलुओं के साथ सहायता कर रहे हैं। परामर्शदाताओं को खेलों में भागीदारी के साथ जुड़ी समस्याओं के बारे में भी जनता को शिक्षित करना चाहिए। जिस तरह हमारे कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में छात्र एथलीटों की मांगों का उपयोग जारी है और उन्हें तैयार करने का क्रम जारी है और खेल सलाहकारों द्वारा निष्पादित कार्य की मान्यता बढ़ रही है, उस प्रकार से छात्र खिलाड़ी की मनोसामाजिक चिंताओं के प्रति परामर्शदाताओं को प्रभावी ढंग से काम करने की जरुरत है।

10.6 बोध प्रश्न

1 अपने नजदीक के खेल स्टेडियम में जाकर अलग-अलग खेलों से जुड़े किन्हीं पांच खिलाड़ियों के व्यवहार का अध्ययन कीजिये। उनसे बात-चीत कीजिये। अध्ययन के बाद क्या आपको लगता है कि इन्हें खेल परामर्श की आवश्यकता है? इसे अपनी केस स्टडी के रूप में दर्ज कीजिये।

2 खेल परामर्शदाता से बात करें और देखें कि वे परामर्श के कौन से तरीके इस्तेमाल करते हैं। क्या आपको लगता है कि इनसे बेहतर तरीकों का इस्तेमाल किया जा सकता है? यदि हां तो उन तरीकों को बताईये अथवा मौजूदा तरीकों के बेहतर होने का कारण बताइये।

3 एक अच्छा परामर्शदाता बनने के लिये क्या आवश्यक है।

4 एक उम्दा खिलाड़ी को परामर्श की आवश्यकता कब और क्यों पड़ती है? क्या खेल जीवन में यह निरंतर चलते रहने वाली प्रक्रिया है।

5 मनोविज्ञान की महत्वपूर्ण शाखाओं को बताइये।

6 बेहतर खेल प्रदर्शन के लिये पेशेवर परामर्श प्राप्त करना आपकी दृष्टि में गलत है या सही, अपने शब्दों में बताइये।

7 कैरियर परामर्श का छात्र खिलाड़ी के साथ नजदीकी संबंध है। इस कथन को100 शब्दोंमें व्यक्त करिये।

10.7 निबंधात्मक प्रश्न

1- खेल परामर्श का सार तत्व बतायें।

1 परामर्श मनोवैज्ञानिक के कौन-कौन से कार्य होते हैं?

2 खेल परामर्श की जरुरत के संकेत करने वाले लक्षणों पर विस्तार से प्रकाश डालिये।

3 खेल परामर्श की व्यावहारिक उपयोगिता के बारे में अपने शब्दोंमें विस्तृत व्याख्या कीजिये।

4 1993 में सिंगर द्वारा की गई टिप्पणी की अपने शब्दों में व्याख्या कीजिये।

10.8 संदर्भ सूची

1. Singer, Contemporrary Perspective on Sports Psychology, 1993, p.10

2. Singh, Dr. Arun Kumar Elementary Psychology: Class XI- Page 43, Motilal Banarsi Das, Delhi
3. www.yas.nic.in
4. www.pib.nic.in
5. http://www.acap.edu.au/Bachelor-level-Sports-Counselling.html
6. http://www.sportscounsellingireland.com/
7. http://pmindia.gov.in/report_to_people/2012-2013/report_PMO_English.pdf

इकाई - 11

परामर्श के आधुनिक क्षेत्र

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य
11.1 प्रस्तावना
11.2 जरावस्था परामर्श
11.3 एड्स परामर्श
11.4 स्वास्थ्य परामर्श
11.5 वैवाहिक परामर्श
11.6 पारिवारिक परामर्श
11.7 नशामुक्ति परामर्श
11.8 व्यावसायिक परामर्श
11.9 परामर्श में स्त्रीजातीय सिद्धांत
11.10 कम्प्युटर का परामर्श में उपयोग
11.11 बहुसांस्कृतिक परामर्श
11.12 कर्मचारी सहायता कार्यक्रम
11.13 परामर्श सिद्धान्तों का एकीकरण
11.14 समलैंगिक परामर्श
11.15 विद्यालय परामर्श
11.16 सारांश
11.17 बोध प्रश्न
11.18 संदर्भ ग्रन्थ

11.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप स्पष्ट कर पाएंगे-

- वैवाहिक परामर्श की आवश्यकता को।
- नशा मुक्ति परामर्श की आवश्यकता को।
- विद्यालय परामर्श में परामर्शदाताओं की नवीनतम भूमिकाओं को।
- समलैंगिक से परामर्श से जुडे संवेदनशील मुद्दों को ।
- एड्स परामर्श की आवश्यकताओं व कार्य-विधि को।
- पारिवारिक परामर्श की आवश्यकताओं को ।
- जरावस्था परामर्श की बढती आवश्यकताओं को ।
- परामर्श स्त्रीजातीय सिद्धान्तों की उपयोगिता को।
- परामर्श सिद्धान्तों के एकीकरण व विकास की आवश्यकताओं को।
- कर्मचारी सहायता कार्यक्रम में परामर्शदाताओं के योगदान को।
- व्यवसायिक परामर्श के बदलते स्वरूप को ।
- कम्प्युटर के परामर्श क्षेत्र में बढते उपयोग की महता को।
- नशामुक्ति की समस्या के निराकरण में परामर्शदाताओं की भूमिका को।
- परामर्श क्षेत्र के नवीनतम मुद्दों व कार्य क्षेत्रों को ।
- स्वास्थ्य कार्यक्रमों का परामर्श में बढ़ते उपयोग व महत्व को।

11.2 प्रस्तावना

परिवर्तन ही संसार का नियम है संसार में हर क्षण हर चीज परिवर्तनशील है। हमारा समाज, लोग, उनकी आवश्यकताएं सब हमारे वातावरण में परिवर्तन के कारण बदल रहे है। आज वैज्ञानिक व टेक्नोलॉजी के विकास ने हमारे कार्य क्षेत्र को अत्यधिक बढ़ा दिया है। इस विकास ने जहां हमें बहुत सारी सुविधाएं मुहैया करवायी है वहीं साथ में इस नये वातावरण के अनुरूप अपने आप को ढालने की चुनौती भी प्रस्तुत की है। इन चुनौतियों ने विभिन्न क्षेत्रों में सहायता की आवश्यकता को बढा दिया है। इसलिए व्यक्ति की इन्हीं आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विभिन्न क्षेत्रों में सहायता के लिए नित नयी परामर्श सेवाओं का विकास हो रहा है। प्रस्तुत इकाई में उन्हीं कुछ क्षेत्रों का वर्णन प्रस्तुत है। जिनका वर्तमान में उपयोग व आवश्यकता दोनों बढ़ गये है।

11.2 जरावस्था परामर्श

इसके अन्तर्गत वृद्ध लोगों के लिए दिया जाने वाला परामर्श आता है यह परामर्श उनके शारीरिक व मानसिक, स्वास्थ्य, रहन-सहन, को ठीक रखने के लिए दिया जाता है। लगभग 30-40 वर्ष पहले मनोविज्ञान में इस क्षेत्र का प्रादुर्भाव हुआ इसमें विशेष रूप से वृद्ध लोगों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन किया जाता है इसे गिरोमनोविज्ञान कहते हैं इसमें विशेष रूप से अध्ययन किया जाता है कि जैसे-जैसे व्यक्ति की आयु बढती है वैसे-वैसे उसके मानसिक कार्यो सामाजिक आर्थिक स्तर, समूह संबध, व्यक्तिगत व प्रजनन सम्बन्धी व्यवहारों पर क्या प्रभाव पडता है। मानसिक स्वास्थ्य के मूल्यांकन व उपचार की विधियां वृद्ध लोगों मे भी वयस्क लोगों के समान होती है या परिवर्तन की आवश्यकता है इस प्रकार मनोविज्ञान की इस शाखा में विशेष रूप से वृद्ध लोगों के जीवन के हर पहलु व उसमें सहायता की विधि का अध्ययन किया जाता है अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इस क्षेत्र के मनोवैज्ञानिको ने वृद्धावस्था को तीन भागों मे बांटा है -

(i) young old (जवान-वद्ध) 65-74 वर्ष

(ii) old-old (वद्ध-वृद्ध) 75-85

(iii) oldest-old (पुरा वृद्ध) 85 वर्ष से ऊपर

व्यक्ति की कार्यक्षमता व मानसिक स्वास्थ्य के अध्ययन के लिए वृद्ध व्यक्तियों की तैथिक आयु व कार्यात्मक आयु का अध्ययन कर उसमें अंतर को जाना जाता है। तैथिक आयु से तात्पर्य जन्म से लेकर आज तक के समय से है, जो हमारी जन्म तीपी से मानी जाती है साधारण शब्दों मे हमारी उम्र। कार्यात्मक आयु से तात्पर्य कार्य करने की क्षमता से है जो तीन पहलुओं जैविक, सामाजिक व मनोवैज्ञानिक कारकों द्वारा प्रतिबिम्बित होती है।

जैविक आयु पता महत्वपूर्ण अंगो की चिकित्सीय जांच द्वारा लगाया जाता है जैसे -जैसे आयु बढती है अंगो की कार्य क्षमता घटने लगती है। जैविक आयु से सामान्य जीवन अवधि के संदर्भ में व्यक्ति की वर्तमान स्थिति का पता चलता है। जैसे-जैसे जैविक आयु बढती है व्यक्ति मृत्यु के करीब पहुंचने लगता है सामाजिक आयु को अन्य व्यक्तियों की तुलना में व्यक्ति की आदत, भूमिका, व्यवहार, आदि से जाना जाता है। मनोवैज्ञानिक आयु से तात्पर्य परिवर्तित परिस्थितियों के साथ समायोजन करने की क्षमता से हैं। इस पर व्यक्ति की सकारात्मक सोच, आत्म सम्मान, अभिप्रेरणा, आत्म-विश्वास आदि का प्रभाव पडता है गिरोमनोविज्ञान में वृद्ध लोगों के मानसिक स्वास्थ्य के लिए तीनों तरह की आयु पर संयुक्त रूप से विचार किया जाता है।

वृद्धावस्था परामर्श में हम इन्हीं गिरोमनोविज्ञान से प्राप्त तथ्यों, जानकारियों, विधियों का उपयोग करते है वृद्धावस्था परामर्श, परामर्श का उभरता क्षेत्र है इसका महत्वपूर्ण कारण परिस्थितियों में बदलाव है आज से कुछ वर्षों पूर्व हमारे समाज में वृद्ध लोगों की महत्वपूर्ण भूमिका होती थी, संयुक्त परिवार थे पर अब वो स्थिति नहीं है। इन बदली परिस्थितियों में वृद्ध लोगों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड रहा है जिससे परामर्श की आवश्यकताएं बढ़ी हैं। कुछ समस्याएं है जैसे लैंगिक व्यवहार में परिवर्तन वृद्धावस्था में काम संबधी रूचि कम हो जाती है जिससे चिडाचिडापन, असंतोष की भावना वृद्धजन परिवार के प्रति दर्शाते है यदि काम भावना अधिक हो तो इसे विकृति मान लिया जाता है क्योंकि हमारे समाज में आम

धारणा है कि इस उम्र तक काम भावना समाप्त हो जाती है जिससे वृद्धों में अपराध बोध की भावना पनपती है।

संतान से संबंधों में एवंपारिवारिक भूमिका में भी इस उम्र में बदलाव आता है, परिवार का मुखिया होने के बावजूद भी अब उसकी गिनती आश्रितों मे होती है पहले स्वंय सभी कार्य करते थे निर्णय लेते थे पर अब अन्य लोगों का हस्तक्षेप बढ़ जाता है बीमारी, सेवा-निवृति, विदुरता, वैधव्य, खराब स्वास्थ्य उनके जीवन में परिवर्तन लाता है वे संतान पर निर्भर हो जाते है यदि वृद्ध व्यक्ति अपनी आदतों, रूचियों, अभिवृत्तियों में बदलाव लाते है तो परिवारजनों से सबंध मधुर रहते है अन्यथा उन्हें मानसिक संताप व परिवार में लड़ाई-झगडों का सामना करना पड़ता है।

इस आयु मे अकेलापन भी बढ जाता है क्योंकि सेवानिवृत्त हो जाती है, पारिवारिक जिम्मेदारिया करीब-करीब पूरी हो जाती है, बच्चे पढने, कार्य करने अन्य स्थानों पर चले जाते है या अपने परिवार, कार्यो मे व्यस्त हो जाते है इस पर यदि जीवनसाथी की मृत्यु भी हो जाए तो अकेलेपन की समस्या अत्यधिक बढ जाती है।

कई बार आर्थिक समस्याएं अत्यंत विकट होती है स्वास्थ्य खराब रहे तो आर्थिक संकट और भी बढ जाता है इन सब परिस्थितियों के चलते लोगों को समायोजन संबधी अनेक समस्याओं का सामना करना पडता है 21वीं शताब्दी में इस क्षेत्र में कार्य की आवश्यकता और भी अधिक होगी क्योंकि किसी भी देश की आधी से अधिक आबादी 50 वर्ष से अधिक आयु की होगी।

11.3 एड्स परामर्श

एड्स (Acquired immune deficiency syndrome' जो कि Human immune deficiency virus (HIV) के संक्रमण के परिणाम स्वरूप होता है। इस वायरस की खोज 1985 में की गई। यह एक 1/10,000 मीलीमीटर का वायरस है जिसे इलेक्ट्रोन सूक्ष्म दश्र्ाी द्वारा ही देखा जा सकता है यह वायरस अत्यन्त खतरनाक है क्योंकि एक बार शरीर में प्रवेश के पश्चात अपने डीएनए को व्यक्ति के कोशिका के जीन से संबधित कर देता है। जिससे इस वायरस को शरीर से नहीं निकाला जा सकता है साथ ही यह वायरस हमारे प्रतिरक्षा तंत्र पर हमला कर हमारी रोग प्रतिरोधक क्षमता को कम कर देता है जिससे हमारे शरीर की क्षमता, अन्य रोगों से स्वंय को बचाने की धीरे-धीरे कम होती रहती है।

एचआईवी क्रमित व्यक्तियों के खून, सीमैन, वैजाइनल स्रावो व बहुत थोडी मात्रा में आंसू, सैलाइवा थूक, स्तन दूध में भी उपस्थित होता है एचआईवी का सबसे अधिक प्रसार लैंगिक क्रियाओं व एचआईवी संक्रमित व्यक्ति का रक्त किसी स्वस्थ व्यक्ति के शरीर में चड़ा देने से होता है। साथ ही संक्रमित के साथ लैंगिक सम्बन्धों सम्बन्ध बनाने, उसकी इस्तेमाल सुई, व अंग प्रत्यारोपण से।

एचआईवी परामर्श की आवश्यकता अत्यधिक इसलिए है क्योंकि संक्रमित होने के तुरंत पश्चात व्यक्ति मरता नहीं है अनेको वर्षो तक जीवित रहता है इसलिए वह व्यक्ति स्वंय अच्छा जीवन जी सके साथ ही उसके द्वारा किसी को संक्रमण ना हो इसलिए परामर्श विशेष रूप से आवश्यक है।

एचआईवी को AIDS बनने में 3-10 साल लग जाते है पर 3-12 सप्ताह के एचआईवी संक्रमण के पश्चात ही व्यक्ति इस रोग का वाहक हो सकता है जबकि उसमें स्वंय में कोई लक्षण नहीं होते हैं।

एचआईवी का इतिहास ज्यादा पुराना नही है पहला एचआईपी का केस 1981 में जानकारी मे आया था भारत में पहला एचआईवी केस 1986 में सामना आया था।

एचआईवी के बारे में लोगों में बहुत सारा डर व भ्रांतियां हैं। जैसे यह हाथ मिलाने, गले लगने, चूमने, खांसी, जुकाम, साथ खाना-खान, तरणताल में साथ नहाने, एक ही कमरे में साथ रहने से फैलता है पर इसके कोई वैज्ञानिक प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

एचआईवी संक्रमित व्यक्ति के लिए -:

एचआईवी संक्रमित व्यक्तियों के लिए परामर्श अत्यन्त आवश्यक होता है क्योंकि वे शारीरिक से ज्यादा मानसिक रूप से प्रस्त होते हैं। इसके लिए परामर्श दाता को एचआईवी संक्रमित व्यक्ति से बात-चीत कर उसके बारे में सभी जानकारीयां प्राप्त कर लेनी चाहिए। जो आगे उसे परामर्श करने मे मदद करें जैसे पारिवारिक-सहायता कैसी है, संक्रमण समस्याओं का कारण क्या है? व्यक्ति की खुद की अभिवृत्ति क्या है, उसकी समस्याओं से सामना करने की प्रविधि क्या है ताकि वह परीक्षण के पश्चात सब बातों का ख्याल करते हुए व्यक्ति को परिक्षण परिणाम बता सके। उसे इस बात को स्वीकार करने में मदद कर सके ही सह एचआईवी संक्रमित है व इसे इतना साहस व अभिप्रेरणा प्रदान कर सके कि वह अपने परिवार को भी इसकी जानकारी दे सके, साथ ही अगर व्यक्ति संक्रमित है तो क्या सावधानियां बरते कि कोई अन्य व्यक्ति उसके द्वारा संक्रमित ना हो, खुद अपना स्वास्थ्य अच्छा रखने के लिए किन-किन बातों का ध्यान रखें, साथ ही अगर दवाईयां शुरू करनी है तो वह सुनिश्चित करें कि मरीज उन्हें नियमित रूप से अवश्य लें, बीच मे छोडे नहीं, अनियमित ना करें।

परामर्श दाता की भूमिका एचआईवी के लिए जागरूकता बढाने में -

1. विद्यालय में वार्ता, चार्ट, पोस्टर, प्रदर्शनी आदि किसी भी माध्यम से विद्यार्थियों मे एचआईवी के बारें में जागरूकता पैदा करें।
2. कॉलेज, विश्वविद्यालय स्तर पर एचआईवी से ज्यादा संक्रमित होने की संभावना युक्त व्यक्तियों की पहचान करें व उन्हें जागरूक करने का प्रयास करें कि एचआईवी
   (i) एक से अधिक साथियों के साथ असुरक्षित यौन संबधों द्वारा फैलता है।
   (ii) नशा करने वाले व्यक्तियों द्वारा उपयोग की गई सुई या इंजेक्शन द्वारा
   (iii) एचआईवी संक्रमित व्यक्ति का खून लेने या उसके साथ शारीरिक संबध बनाने से न
   (iv) सैक्स कार्यकर्ताओं के साथ यौन संबध बनाने से फैलता है।
3. नशा करने वाले लोग, मानसिक रूप से विमंदित लोग, एक से अधिक साथियों के साथ असुरक्षित यौन संबध बनाने वाले लोग, सैक्स वकर्स ,बिना परीक्षण के खून, भंग लेने वाले लोगों को एचआईवी का खतरा अधिक होता है। अत: इन संभावित व्यक्तियों को एचआईवी परिरक्षण के लिए समय-समय पर भेजें। ELISA (Enzyme linked Immunosorbent

Assay) एचआईवी संक्रमण का पता लगाने के लिए एक सामान्य परीक्षण है जो नि:शुल्क है, अन्य परीक्षण भी उपलब्ध है।

4. साथ ही परामर्शदाता को चाहिए कि वह HIV नकारात्मक व HIV धनात्मक दोनों प्रकार के लोगों को निम्न जानकारियां प्रदान करें।

(i) सुरक्षित यौन सम्बन्ध अर्थात् केवल एक जीवन साथी के साथ सम्बन्ध रखें शादी से पहले यौन संबध ना बनाएं।

(ii) अगर संबध बनाएं तो कांडोम का इस्तेमाल अवश्य करें।

(iii) जब भी रक्त, अंग सकी आव"यकता हो तो प्रयोगशाला में परिक्षण से पश्चात सही पाये जाने पर ही लें।

(iv) नशा ना करें, सुई का उपयोग एक बार के बाद दुबारा न करें।

(v) एचआईवी से सम्बन्धित सभी गलत धारणाओं को दूर करें जैसे कि एचआईवी साथ खाना खाने, गले लगने से होता है।

11.4 स्वास्थ्य परामर्श

1970 से स्वास्थ्य पर अत्यधिक बल दिया जा रहा है क्योंकि अनेक शोधों द्वारा यह प्रमाणित हो चुका है कि स्वास्थ्य संम्बन्धी अच्छी क्रियाओं के लगातार अभ्यास उपचारात्मक महत्व है ये रोगों से बचाने रोग हो जाने पर उन्हें बढने से रोकने मे महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

शोधों से यह प्रमाणित हो चुका है कि शारीरिक क्रियाएं जैसे-व्यायाम, दौड, तेजी से चलना, साईकिल चलाना, खेलना आदि का हमारे शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य दोनो पर सकारात्मक प्रभाव पडता है ये शारीरिक क्रियाएं हमारे शरीर में धनात्मक हार्मोन्स की मात्रा बढ़ाकर हमें प्रसन्न रहने, तनाव से दूर रहने, तनाव होने पर उससे प्रभावशाली तरीके से नियोजित करने, शारीरिक रूप से स्वस्थ रहने, अनेक रोगों से बचने में मददगार है।

एक व्यक्ति के सम्पूर्ण रूप से स्वस्थ रहने के लिए उसका शारीरिक, बौद्धिक, सामाजिक, भावनात्मक, मनोवैज्ञानिक, सभी प्रकार से स्वस्थ रहना आवश्यक है सप्ताह में रोज आधा घंटा व्यायाम करना, ध्यान, प्राणायाम, योगा, मालिश, प्राकृतिक भोजन, पर्याप्त विटामिन्स व लवण, प्राकृतिक चिकित्सा, पर्याप्त पानी का सेवन हमारे शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण है।

सभी शारीरिक क्रियाएं भविष्य में होने वाले रोगों से बचाव साथ ही वर्तमान में रोग होने पर उन्हें बढने से रोकने में असरदार है इस प्रकार इन क्रियाओं का उपचारात्मक व पहले से बचाव में द्ध महत्व है।

जो परामर्शदाता अपने परामर्श प्रक्रम मे अच्छी दिनचर्या, अच्छी भोजन संबधी आदतों अच्छी स्वास्थ्य आदतों जैसे- नियमित व्यायाम, ध्यान, प्राणायाम को महत्व देते हैं, वे अधिक सफलतापूर्वक परामर्शग्राही में अपेक्षित परिवर्तन लाने में सफल होते है।

अब परामर्शदाता केवल समस्या के समाधान की तुलना मे पूर्ण स्वास्थ्य को महत्व देते है। डॉन एवम् शियरमैन, 1987 ने अपने अध्ययनो से नियमित व्यायाम के शारिरिक व मानसिक स्वास्थ्य पर पडने वाले लाभकारी प्रभावों को प्रमाणित किया।

अत: आजकल स्वास्थ्य परामर्श भी परामर्श का एक उभरता क्षेत्र है, जिसका अत्यधिक उपयोग सामान्य परामर्श निदेर्शो /क्रियाओं के साथ अच्छे शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य के लिए हो रहा है।

11.5 वैवाहिक परामर्श

वैवाहिक परामर्श का प्रारम्भ लगभग 1950 से प्रांरभ हुआ पर इसमें वास्तविक बुद्धि व विकास 1980 मे देखने को मिला। भारत में इसकी आवश्यकता आज महसूस हो रही है बढती भौतिक आवश्यकताएं, टूटते संयुक्त परिवार, माता-पिता दोनो का कार्यरत होना, ज्यादा उम्र में विवाह, तेजी से बढते तलाक, व्यावसायिक व भौतिक जीवन को अत्यधिक महत्व, बढती आर्थिक आवश्यकताएं व घटते संसाधनो ने वैवाहिक परामर्श की आवश्यकता को बढा दिया है अब वैवाहिक परामर्श की आवश्यकता विवाह के पश्चात, विवाह को टूटने से बचाने, वैवाहिक संबध अच्छे बनाने के लिए ही नही वरन विवाह-पूर्व शादी के लिए, शादी की जिम्मेदारियों के निर्वाह हेतु तैयार करने के लिए भी विवाह-पूर्व परामर्श की आवश्यकताएं बढ रही है युवा पीढी विवाह व विवाह की जिम्मेदारियां को उठाने से बडी ही भयभीत है व इससे बचना चाहती है जिससे बिना विवाह साथ रहने का चलन तेजी से बढ रहा है।

अब अनेक अनुसंधान ये प्रमाणित कर चुके हैं कि अगर पारिवारिक संबध अच्छा हो तो लम्बे समय तक स्वस्थ जीवन जीता है, इन बातों ने वैवाहिक व पारिवारिक परामर्श की प्रसिद्धि को बढा दिया है। विभिन्न शोध भी प्रमाणित कर चुके है कि जो लोग लम्बे समय तक एक ही रिश्ते में रहते है, जिन लोगों का पारिवारिक जीवन सुखद होता है। वे ज्यादा स्वस्थ व प्रसन्न रहते हैं। वे तनाव का शिकार भी कम होते है।

विवाह व पारिवारिक जीवन की सफलता के लिए अत्यधिक मेहनत व वचनबद्धता की आवश्यकता है ज्यादा उम्र में विवाह, स्वतंत्र जीवन की चाह, आर्थिक स्वतंत्रता, ने विवाह संस्था में आवश्यक वचनबद्धता को कम किया है। इसलिए विवाह पश्चात रिश्तों को प्रगाढ व अच्छा बनाये रखने हेतु बच्चों की अच्छी परवरिश के लिए वैवाहिक परामर्श अत्यंत आवश्यक होता जा रहा है व परामर्श सबसे उभरता क्षेत्र बनता जा रहा है।

11.6 पारिवारिक परामर्श

कोई भी व्यक्तिगत परामर्श बिना पारिवारिक परामर्श के अधुरा है अब मनोवैज्ञानिक इस बात की आवश्यकता को तेजी से महसूस कर रहे है। अगर व्यक्तिगत परामर्श के साथ, पारिवारिक सहयोग भी उपलब्ध हो जाए तो परामर्श की प्रभावशीलता को शीघ्र ही सकानात्मक परिणाम प्राप्त किये जा सकते है।

जैसे एक बच्चा जिसका आत्म विश्वास कम है परामर्श दाता के पास आता है अगर परामर्शदाता उस बालक अभिप्रेरित करने, आत्म-विश्वास के तरीके बढाने की प्रविधियों के साथ पारिवारिक सहयोग भी इस प्रक्रम में प्राप्त कर लेता है तो बालक का आत्म विश्वास बढाने का कार्य तेजी से व ज्यादा प्रभावकारी

रूप से होता है। कुछ विशेष परिस्थितियों जैसे मानसिक विमंदित बालको, बहरे अधिगम विकृति के केसेज में पारिवारिक परामर्श व सहयोग अत्यन्त अपेक्षित है।

11.7 नशा मुक्ति परामर्श

जब व्यक्ति कुछ रसायनों या पदार्थों का चिकित्सकीय आवश्यकताओं से अधिक उपयोग करता है तो इसे पदार्थों का दुरूपयोग कहते है अनेक पदार्थों का नशे के लिए उपयोग किया जाता है जैसे ऐल्कोहल, अफीम, चरस, गांजा, चाय, कॉफी, हेरोईन आदि।ये अधिकांशत: तरूणावस्था व युवावस्था में अधिक होता है।

लगातार किसी पदार्थों का बार-बार उपयोग करने से उस पदार्थ के सेवन की अत्यधिक आवश्यकता महसूस होती है व्यक्ति उसके सेवन के बिना नहीं रह पाता है उस पर शारीरिक व मानसिक रूप से आश्रित हो जाता है इस लक्षणों का उसके पारिवारिक, सामाजिक व व्यवसायिक जीवन पर भी बुरा प्रभाव पडता है वह बार-बार सेवन की गई खुराक की मात्रा को बढाना चाहता है क्योंकि शरीर उपयोग की जाने वाली मात्रा का अभ्यस्त हो जाता है।

युवाओं में नशीले पदार्थों का उपयोग तेजी से बढ रहा है। इसके उपयोग के अनेक मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, जैविक व भौगोलिक कारण है।

कुछ लोग समूह दबाव में तो कुछ जिज्ञासावश कुछ जीवन में स्पष्ट लक्षण ना होने के कारण प्रयोग हेतु इसका उपयोग प्रारंभ करते है कुछ लोग अपनी इस धारणा के चलते नशा प्रारंभ करते हैं कि इससे दुख, दर्द कम हो जाएगा। आजकल कॉलेजों में बढते पढाई के बोझ, बढती प्रतियोगिता के चलते, इन विश्वासों के कारण युवा शीघ्रता से नशें की चपेट में आ जाते है कुछ लोग गरीबी, अकेलेपन, तनाव, दु:ख के कारण नशे का सेवन प्रांरभ कर देते है।

आजकल ये समस्या तेजी से बढ रही है अब कम उम्र मे ही बच्चे इसकी चपेट में आने लगे है अत: अब परिवार, विद्यालय, समाज, परामर्शदाताओं के समक्ष यह एक चुनौती बन कर खडा है। नशे का बुरा प्रभाव न केवल उस व्यक्ति की कार्यक्षमता को कम कर उस पर नकारात्मक प्रभाव डालता है बल्कि यह अनेक प्रकार के अन्य अपराधों को भी बढावा देता है साथ ही परिवार वालों को भी अनेक मुसीबत में डाल देता है।

नशे का उपयोग करने वाले लोगों के व्यवहार में परिवर्तन लाने के लिए परामर्शदाताओं को अनेक स्तर पर कार्य की आवश्यकता होती है।

11.8 व्यवसायिक परामर्श

वैश्विक अर्थव्यवस्था में परिवर्तन के कारण निर्माण व सेवा व्यायामों में अनेक परिवर्तन आते हैं टेक्नोलोजी के विकास व विस्तार के कारण रोज नए प्रकार के कार्यों का सृजन होता है व पुराने कार्य व सेवाएं, पुरानी योग्यताएं (skills) आदि की महत्ता समाप्त हो जाती है अत: खुद को परिवर्तनों के साथ रखने, नये व्यावसाय व सेवा के चुनाव हेतु आवश्यक योग्यता (skills) अर्जित करने हेतु व्यवसायिक परामर्श का क्षेत्र दीनबदीन बढता जा रहा है।

लोगों की व्यवसायिक विकास में अत्यधिक रूचि, अत्यधिक व्यवसायिक जानकारी व रोज सृजित व रोजगार व्यावसायिक परामर्श के और तेजी से बढने का कारण हैं।

आज हमारे समक्ष जितने विभिन्न व विविध प्रकार के रोजगार हैं। पहले कभी भी नहीं थे, अत: व्यवसायों का चयन एक चुनौती है। जिससे व्यावसायिक परामर्श का कार्यक्षेत्र दिन - प्रतिदिन बढता जा रहा है।

11.9 परामर्श में स्त्रीजातीय सिद्धान्त

1960 में स्त्री आंदोलनों के पश्चात परामर्श में स्त्रीजातीय विचारों का महत्व बढा। इस आंदोलन का प्रांरभ पितृसत्ता को चुनौति देने के रूप में हुआ पर बाद में जैसे-जैसे ये बढा इसका केन्द्र स्त्रीजाति का एक व्यक्तित्व (जो सामान्य व विलक्षण गुणों से युक्त हो) के रूप में सम्पूर्ण विकास बन गया। आज समाज में स्त्री की भूमिका दिन पे दिन बदलती जा रही है उसका कार्य क्षेत्र विस्तृत व विविधतापूर्ण होता जा रहा है जिससे अपने समक्ष उपस्थित चुनौतियां का सामना करने के लिए पहले से कही अधिक स्त्रियां परामर्श सेवाओं का उपयोग कर रही है।

परामर्श के मूलभूत सिद्धान्तो के अनुसार परामर्शदाता को परामर्शग्राही होता है वैसा स्वीकार करना चाहिए। अत: वह किसी स्त्री के परामर्श के दौरान उसके शरीर के आधार पर भेदभाव नहीं कर सकता है। परन्तु अधिकांश पुराने परामर्श सिद्धान्त पितृसत्तात्मक, पदानुक्रमिका समाज की वकालत करते हैं। जब एक स्त्री अपने व्यावसायिक व पारिवारिक द्वंद्वो, अपने कर्तव्यों व चाहतो की हदों को लेकर परामर्श प्रक्रम मे आती है तो परामर्शदाता भी उसे हमारे प्राचीन भेदभावपूर्ण तंत्र के अनुरूप प्रेरित करता है जिसका परामर्श प्रक्रम व उस स्त्री परामर्शग्राही दोनो पर नकारात्मक प्रभाव पडता है। अत: परामर्श में दो बातों पर विशेष रूप से बल दिया गया है। ताकि यह सघनता प्रक्रम अन्य प्रकार की सहायता से अलग हो-

(i) यह ßसहायता रिश्तेÞ मे समानता पर बल देता है क्योंकि स्त्री की समस्याओं को समाज से स्त्रीयों को अलग कर नहीं देखा जा सकता है।

(ii) यह स्त्रियों के सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक क्रियाकलापों गतिविधियों को उपचारात्मक प्रक्रम में विशेष महत्व देता है।

परामर्श में स्त्रिगत सिद्धान्तों का लगातार उपयोग बढ रहा है व लगातार इसमें वृ(व विकास आने वाले समय में भी जारी रहेगा।

11.10 कम्प्युटर का परामर्श में उपयोग

1990 के दशक से भारत में लगभग प्रत्येक क्षेत्र में कम्प्युटर का उपयोग तेजी से बढा है। परामर्श का क्षेत्र भी इसकी उपयोगिता से अ|ता नहीं है। टैक्नोलॉजी में उन्नति व विकास ने कम्प्युटर का उपयोग बहुत सहज, सुगम व अत्यधिक लाभप्रद बना दिया है।

स्कुल परामर्श दाता कम्प्युटर का उपयोग आंकडो के संग्रहण, आंकडो में हेर-फेर, गणितीय गणना व परामर्श प्रक्रम का लेखा-जोखा रखने के लिए करते है।

कम्प्युटर व इंटरनेट के उपयोग से परामर्शदाता अपने परामर्श सम्बन्धि विषय पर संसार भर से सुचनाएं प्राप्त कर सकता है परामर्श में आधुनिक प्रवृत्तियों के बारे में जान सकता है आज इंटरनेट पर अनेक ऐसे समूह है जिसके सभी सदस्य मनोवैज्ञानिक है व परामर्श से जुडे से परामर्शदाता इन समूहों से जुड उनके अनुभव का लाभ उठा सकता है अपने अनुभव बांट सकता है, समस्या होने पर साथी परामर्शदाताओं से सहायता प्राप्त कर सकता है प्रश्न पुछ सकता है कोई भ्रान्ति हो तो आपस में परिचर्चा द्वारा उन्हें दूर कर सकता है अपने क्षेत्र की नवीनतम जानकारियों से मुक्त हो जाता है।

साथ ही आज अनेक प्रकार के सॉफ्टवेयर कार्यक्रम, मापन के क्षेत्र में उपलब्ध है जिनका उपयोग कर व्यक्ति स्वंय अपने बारे में जान सकता है साथ ही परामर्शदाता दुर परामर्शग्राही पर उनका उपयोग कर उनके बारे में आंकडे व सुचनाएं एकत्रित कर परामर्श प्रदान कर सकता हैं।

परामर्श में कम्प्युटर व इंटरनेट के बढते उपयोगों को ध्यान में रखते हुए हि अमेरिकन लाजिकल एसोसिएशन ने कम्प्युटर आधारित परिक्षणों के लिए दिशा-निर्देश जारी किये है साथ ही कम्प्युटर के उपयोग सम्बन्धी कारकों को परामर्श के नीतिगत नियमों में समावेशित किया है। भारत में क्षेत्रीय संस्थान के माध्यम से NCERT ने अन्तराष्ट्रीय डिप्लोमा परामर्श में प्रांरभ किया है जिसमें विद्यार्थी विडियो कान्फ्रेसिंग के माध्यम से परामर्श प्रशिक्षण में आ रही जानकारियों समस्याओं को पुछ सकते है।

इस प्रकार कम्प्युटर व इंटरनेट का उपयोग नई-नई प्रवृत्तियों को परामर्श ने क्षेत्र में जन्म दे रहा है आगे भी उपयोग और बढेगा व और नये व प्रभावशाली उपयोग सामने आएंगे।

11.11 बहुसांस्कृतिक परामर्श

बहुसांस्कृतिक परामर्श, परामर्श के क्षेत्र में सबसे तेजी से बढता क्षेत्र है। सांस्कृतिक परामर्श में विभिन्न संस्कृतियों से सम्बन्धित नियमों, सिद्धान्तोंपूर्ण का उपयोग किया जाता है सांस्कृतिक परामर्श हेतु प्रचलित विधियों का

सांस्कृतिक मनोविज्ञान की अध्ययन विषय-वस्तु व्यक्ति ना होकर संस्कृति होती है इसमें विभिन्न संस्कृतियों को सम्बन्धित नियमों सिद्धान्तों का अध्ययन किया जाता है कि ये नियम सिद्धान्त इसी संस्कृति की विशेषता है या अन्य संस्कृतियों मे भी पाये जाते है साथ ही अन्य संस्कृतियों के लोगइन जानकारियों का उपयोग कर किस प्रकार लाभान्वित हो सकते है।

बहुसांस्कृतिक परामर्श का भी यही उद्देश्य है कि विभिन्न संस्कृतियों में परामर्श हेतु प्रचलित विधियों का उपयोग कर अधिकाधिक लोगों को लाभान्वित किया जा सके। बहुसांस्कृतिक परामर्श, परामर्श के क्षेत्र में, सबसे तेजी से बढता हुआ क्षेत्र है।

पांरपरिक एशियन मनोचिकित्सा विज्ञान जो लगभग 3000 वर्ष पुरानी विद्या है पश्चिम में तेजी से प्रसिद्धि प्राप्त कर रही है। एशियन सिद्धान्त जैसे जापान से उत्पन्न मोरीटा थैरेपी का उपयोग खाने से सम्बन्धित विकार बुलीमिया के उपचार में प्रयुक्त हो रहा है। ये सभी गैर-पश्चिमी संस्कृतियां रोगविज्ञान से उपर अस्तित्वपूरक संपूर्ण व्यक्ति विकास व स्वास्थ्य को महत्व देती है व योगा, ध्यान जैसी प्रविधियों का उपयोग इस लक्ष्य की प्राप्ति मे करती है। ध्यान, योगा विधाओं का उपयोग अकेले या अन्य उपागमों से

सम्बन्धित कर किया जा सकता है यह स्वास्थ्य व मनोवैज्ञानिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करती है।

आज अनेक विद्यालय, विश्वविद्यालय बहुसांस्कृतिक शिक्षा को बढावा दे रहे है इसके लिए संसार के विभिन्न देश अपने विद्यालयों व विश्वविद्यालयों में दुसरे देशों से छात्रों की अदला-बदली कर उन्हें अपनी संस्कृति के अलावा अन्य संस्कृतियों को समझने के मौके दे रहे है। इंटरनेट व कम्प्युटर उपयोग ने पहले ही संसार को एक छोटा सा गांव बना दिया है इस प्रकार बहुसांस्कृतिक परामर्श के माध्यम से संसार भर मे उपलब्ध प्रभावशाली विधियों का उपयोग कर अधिक लोग लाभान्वित हो सकते है। ये क्षेत्र उतरोत्तर विकसित हो रहा है व भविष्य में और फलेगा-फुलेगा।

11.12कर्मचारी सहायता कार्यक्रम

आज अनेक निजी व सरकारी संस्थान अपने कर्मचारियों के संपूर्ण स्वास्थ्य व विकास के लिए परामर्श सेवाएं ले रहे है परामर्श के कारण मानवीय व आर्थिक दोनों है अध्ययनों से पाया गया है कि वे कर्मचारी जो तनाव मुक्त व स्वस्थ है उनकी कार्यक्षमता अधिक है वे कम दुरियां होते है, कम दुर्घटनाओं का शिकार होते है साथ दी कार्य भी अधिक मन लगाकर, अधिक गुणवत्ता युक्त करते है पहले सिर्फ बडे-बड़े औद्योगिक घराने ही इस तरह की सेवाएं किया करते थे पर अब सिर्फ उद्योग ही नही, सेवा प्रदान करने वाले समूहों द्वारा भी इन परामर्श सेवाओं के उपयोग की संख्या में तेजी से बढोतरी हुई है।

आज भारत सरकार पुलिस सेवाओं को दुरुस्त करने के लिए परामर्श सेवाएं ले रही है अब कर्मचारी सहायता सेवाएं सिर्फ समस्याओं को दूर करने हेतु ही नही वरन कर्मचारियों के व्यक्तित्व विकास हेतू भी की जा रही है। मानव संसाधन की उपयोगिता के महत्व ने कर्मचारियों के बेहतर स्वास्थ्य व विकास के लिए प्रशासन, उद्योगों, कम्पनियों को प्रेरित किया है।

इससे परामर्शदाताओं का कार्य - क्षेत्र बढा है साथ ही उनके समक्ष नई चुनौतियां भी है कि अलग-2 उद्योगों को उसमें कार्य करने वाले लोगों को समझ उनके लिए विशेष रूप से कार्यक्रम बनाए जो इनके लिए विशेष रूप से उपयोगी व लाभप्रद हो।

11.13परामर्श सिद्धान्तों का एकीकरण व विकास

आज सामाजिक व टैक्नोलोजी परिवर्तनों के साथ समस्याओं के स्वरूप व जटिलता में भी बदलाव हुआ है। कोई भी एक सिद्धांत एक परामर्शग्राही की सभी चिन्ताओं का जवाब नहीं दे सकता है। आज हजारों परामर्श सिद्धान्त पहले से उपस्थित है इसलिए अब नए सिद्धान्तों की खोज के स्थान पर पुराने उपलब्ध सिद्धान्तोंका एकीकरण व विकास किया जा रहा है उन्हें वैज्ञानिक रूप से और प्रमाणित व उपयोगी बनाने की कोशिश की जा रही है ताकि जटिल समस्याओं के समाधान हेतु एक से अधिक सिद्धान्तो को मिलाकर उनका प्रभावकारी उपयोग किया जा सकें। परामर्शदाता अन्य सिद्धान्तों की विधियों का उपयोग करने में ज्यादा लचीलापन दिखा रहे है।

परामर्श के दौरान वैयक्तिक, पारस्परिक व बाहरी सामाजिक व तंत्र का ध्यान अत्यावश्यक है इसीलिये कुछ परामर्शदाता इन आयामों को मिला नये सृजनात्मक उपागमों का निर्माण कर रहे है जो प्रभावशाली व पूर्णता किये हो।

11.14समलिंगि परामर्श

प्रत्येक व्यक्ति का एक भिन्न सामाजिक अभिविन्यास व लैंगिक व्यवहार होता है हम अनुमोदित करें या ना करें पर हर व्यक्ति अपने अनुसार कार्य करने, रहने निर्णय लेने व जीवन शैली चुनने के लिए स्वंतत्र है। सामान्यत: हमारा समाज विषमलिंग सम्बन्धों वो सम्बन्ध जो दो विपरित लिंग के व्यक्तियों अर्थात पुरूष व स्त्री के मध्य होता है को प्राथमिकता देता है परन्तु सर्दियों से हमारे समाज में समलिंगि (homosexual) समान लिंग के व्यक्तियों मे लैंगिक सम्बन्ध भी देखने को मिलते है। जब दो पुरूष आपस में लैंगिक सम्बन्ध रखते है तो हम उन्हें (Gays) कहते है तथा जब दो औरतो के मध्य लैंगिक सम्बन्ध होते है तो हम ऐसी स्त्रीयों को lesbians कहते है।

समलिंगि स्त्री व पुरूषों के साथ हमेशा रूढिवादी व पक्षपातपूर्ण व्यवहार किया गया है यहां तक भी परामर्शदाता भी इस सोच व व्यवहार से अछुते नहीं है परामर्शदाता की नकारात्मक अभिवृत्ति का नकारात्मक प्रभाव इन समलैंगिक स्त्री व पुरूषों घर पडता है जिनका उनका विकास अवरूद्ध है।

अब बहुसांस्कृतिक परामर्श के क्षेत्र में प्रसार के कारण अनेक परामर्शदाता समलैंगिक धारणाओं के प्रति संवेदनशील हुए है व और अधिक जागरूकता, संवेदनशीलता व धनात्मकता की आवश्यकता है। अब तो भारत सरकार ने भी समलैंगिकता को कानूनी मान्यता प्रदान करती हैं। तो परामर्शदाताओं की नकारात्मक मनोवृत्ति अनुचित है। उन्हें इस दिशा में और कार्य की आवश्यकता है।

11.15विद्यालय परामर्श

विद्यालयों में बच्चों के लिए परामर्श की आवश्यकताएं और तेजी से बढ रही है पहले जहां विद्यालयी परामर्श सेवाएं समस्यात्मक बालकों, अच्छे अंको, तक व्यवसाय व विषय के चुनाव तक संबधित थी इसका कार्यक्षेत्र बडा है बदलती परिस्थितियों ने प्री-स्कूलों से ही परामर्श की विकासात्मक क्षेत्र में कार्यों पर बल डाला है। विद्यालय में परामर्शदाता विद्यालय प्रक्रम से सीधे रूप से जुड कर संज्ञानात्मक ही नहीं विद्यार्थियों के भावनात्मक पडा (के विकास में भी विशेष योगदान दे सकते है। परामर्शदाता विद्यालयों में तीन स्तरों पर कार्य करते है। (i) विकासात्मक (ii) उपचारात्मक (रोकथाम स्तर पर।

(i) विकासात्मक स्तर पर जीवन योग्यता द्ध के विकास जैसे- लक्ष्य निर्धारण, निर्णयन, आत्म-विश्वास के विकास हेतु कार्य करते है।

(ii) रोकथाम स्तर पर अगर विद्यार्थियों में कुसमायोजित व्यवहार के लक्षण नजर आते है तो वही से उन पर कार्य कर उन्हे मनोविकारों मे परिणीत होने से रोकते है।

(iii) उपचारात्मक स्तर पर अगर कोइ विद्यार्थी में कोई मनोविकार है तो उसके उपचार हेतु कार्य करते है।

अब नये बदलावों के समय में परामर्शदाताओं का कार्य विकासात्मक व भावानात्मक स्तर पर बढ रहा है मनोवैज्ञानिक व परामर्शदाता इन स्तरों पर कार्य कर हमारी नवपीढी के उत्थान हेतु कार्य कर सकते है।

11.16 सारांश

प्रस्तुत इकाई में परामर्श के 14 नूतन विचाराधाओं व क्षेत्रों का उल्लेख किया गया है जैसे एड्स परामर्श , समलिंगी परामर्श, वैवाहिक परामर्श, पारिवारिक परामर्श, नशा मुक्ति परामर्श, विद्यालय परामर्श, लोगो के लिए परामर्श साथ ही परामर्श हेतु उपलब्ध विचाराधाराओं के एकीकरण व विकास की आवश्यकताओं, परामर्श के क्षेत्र में कम्प्युटर का बढता प्रयोग, परामर्श में स्त्रयी जातीय सम्बन्धी सिद्धान्तों का बढता उपयोग आदि विषयों पर भी संक्षेप में प्रकाश डाला गया है साथ ही कर्मचारी सहायता कार्यक्रम जैसे नवीन मुद्दों पर भी चर्चा की गई है ये इकाई आपको एक झलक देती है परामर्श के विभिन्न क्षेत्रों में बढते उपयोग की साथ ही इन क्षेत्रों मे और कार्य किये जाने की आवश्यकताओं पर। ताकि आप भी किसी क्षेत्र का चुनाव पर उसके विकास में अपना योगदान दे सके।

11.17 बोध प्रश्न

1. संक्षपे में लिखिएं (short note)-:
   - (i) वैवाहिक परामर्श
   - (ii) HIV/AIDS परामर्श
   - (iii) gerentological परामर्श (multicultural counselling)
2. निम्न मुद्दों पर कार्य की आवश्यकता को समझाइये -
   - (i) नशा मुक्ति
   - (ii) स्वास्थ्य सेवाएं
   - (iii) कर्मचारी सहायता कार्यक्रम
   - (iv) विद्यालयी परामर्श
3. निम्न मुद्दों से जुडी भ्रान्तियों को दूर कर विकासात्मक कार्य की आवश्यकताओं को बताइये व अपनी और से सुझाव दीजिये-
   - (i) समलिंगि परामर्श
   - (ii) एड्स परामर्श
4. भारत में एड्स के विषय में कार्य करना मुश्किल क्यों है? एड्स के विषय में फैली गलतफहमीयां क्या है? उन्हें दूर करने के सुझाव दीजिये ?
5. उपलब्ध परामर्श सिद्धान्तों के एकीकरण की आवश्यकताओं को समझाइये?

11.18 संदर्भ ग्रन्थ

1. Counselling a comprehensive profession (3rd edition) - samvel T. Gladding
2. Effective Helping (3rd edition) - B. F. okun
3. American Psychological association (apa) - guidelines for computer based tests and internestions.
4. Concepts of chemical dependencies - H. E. doweiko
5. Advanced general psychology - Arun Kumar Singh
6. Guidance and counselling (vol. 11 : a practical approach) - Asha bhatnagar and Nirmala gupta
7. On being a therapist - J.A. kotter
8. Mutlicultural issues in counselling - lee and Richardson

इकाई 12

किशोरावस्था में परामर्श

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य
12.1 किशोरावस्था : अर्थ एवं महत्त्व
12.2 संघर्ष व तनाव का काल
12.3 व्युत्पत्ति
12.4 किशोरों के अध्ययन की आवश्यकता
12.5 किशोर-मनोविज्ञान के अध्ययन की आवश्यकता
12.6 निर्देशन एवं परामर्श हेतु किशोरावस्था के अध्ययन की विधियाँ -
12.7 किशोरावस्था की बाधाओं को दूर करने हेतु सामान्य निर्देश एवं परामर्श
12.8 किशोरावस्था में निर्देशन एवं परामर्श

12.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी -

- किशोरावस्था का अर्थ एवं महत्त्व बता सकेंगे।
- किशोरों के अध्ययन की आवश्यकता समझ सकेंगे।

- किशोर मनोविज्ञान की उपयोगिता का विश्लेषण कर सकेंगे।
- निर्देशन एवं परामर्श हेतु किशोरावस्था के अध्ययन की विधियाँ बता सकेंगे।
- किशोरावस्था की बाधाओं को दूर करने के लिये निर्देशन एवं परामर्श के सामान्य नियम जान सकेंगे।
- किशोरावस्था में निर्देशन एवं परामर्श के महत्त्व का विश्लेषण कर सकेंगे।

12.1 किशोरावस्था : अर्थ एवं महत्त्व

किशोर न बालक है और न प्रौढ़। बचपन की समाप्ति व प्रौढावस्था के आरम्भ के मध्य का जीवन काल किशोरावस्था कहलाता है। यह बाल्यकाल की भाँति ही विकास की एक अवस्था है तथा बाल्यकाल के समान ही अध्ययन की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में एक ऐसा समय आता है जबकि शरीर में कुछ परिवर्तन आरम्भ होते हैं - बचपन के ढाँचे से प्रौढ़ बनने की प्रक्रिया आरम्भ होती है। यह वय: संधि का काल ही किशोरावस्था है। इसकी कोई निश्चित अवधि नहीं होती है। यह किशोर की पारिवारिक, सांस्कृतिक, सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति पर निर्भर करता है। लगभग एक दशाब्दी का यह समय मनुष्य के जीवन काल का अत्यन्त अस्थिरता तथा उद्विग्रतापूर्ण हिस्सा होता है। इसमें न केवल शारीरिक बल्कि बौद्धिक, भावात्मक तथा सामाजिक सभी प्रकार के परिवर्तन होते हैं। वयस्क बनने से पूर्व किशोरावस्था के अनुभूत प्राप्त करना व्यक्ति के लिये अनिवार्य-सा है।

12.2 संघर्ष व तनाव का काल

किशोरावस्था में जैविक, सामाजिक व मानसिक सभी प्रकार के परिवर्तन होते है। सामाजिक दृष्टि से व्यक्ति किशोरावस्था में अनेकों बाह्य व आन्तरिक बन्धनों में जकड़ा हुआ होता है तथा माता-पिता व परिवार पर निर्भर रहता है। मानसिक दृष्टि से यह अत्यन्त संघर्ष व तनाव का काल है इस अवस्था में व्यक्ति बाल्यकाल के बन्धनों एवं पर-निर्भरता से प्रौढ़ावस्था की स्वतन्त्रता एवं आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर होने के लिए प्रयत्न करता है। यह प्रक्रिया अत्यन्त लम्बी है। कुछ सीमा तक प्रौढ़ों ने ही इसे लम्बा बना रखा है। माम तथा जेमिसन के अनुसार किशोरावस्था एक कठिन काल है। क्योंकि प्रौढ़ किशोरों को इच्छित स्वतंत्रता नहीं देते वरन् स्वतन्त्रता के विरोध में रहते है। इस विरोध से मुक्ति पाने के लिए उसे निरन्तर संघर्ष करना पड़ता है।

12.3 व्युत्पत्ति

किशोरावस्था शब्द आंग्ल शब्द अडोलेसेन्स का हिन्दी रूपान्तर हैं, जिसकी व्युत्पत्ति लेटिन शब्द अडोलेस्कर से हुई है जिसका अर्थ है परिपक्वता को प्राप्त करना। इस अर्थ में किशोरावस्था काल अवधि नहीं अपितु एक प्रक्रिया है। यह वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से बालक समाज में प्रभावी रूप से सक्रिय होने हेतु आवश्यक अभिवृत्तियाँ व विश्वास आदि अर्जित करता है। किशोरावस्था को एक गति के रूप में

भी परिभाषित किया जा सकता है। यह एक प्रकार का शारीरिक परिवर्तन है। जिसमें व्यक्ति बाल्यावस्था से प्रौढ़ावस्था की ओर जाता है। दूसरे शब्दों में घर छोड़कर अपने आपको बाह्य संसार में प्रवेश करने योग्य बनाता है।

''व्यक्ति पर जैविक एवं सांस्कृतिक घटकों की अन्त:क्रिया से उत्पन्न वह अवस्था जबकि वह बाल्यावस्था से प्रौढ़ावस्था की ओर बढ़ रहा होता है।''

12.4 किशोरों के अध्ययन की आवश्यकता

अध्यापक, माता-पिता व अन्य प्रौढ़ व्यक्ति जो किसी न किसी रूप में किशोर के संसर्ग में आते रहते हैं उनके लिए किशोर, किशोरावस्था एवं किशोर विकास के गहन अध्ययन की आवश्यकता है। इसके अभाव में वे किशोर के उचित पथ-प्रदर्शक भी नहीं बन सकते तथा इसके विपरीत अत्यधिक नियन्त्रण बनाये रखने के प्रयत्न में वे उसकी निर्बाध वृद्धि एवं विकास में रूकावट डालने लगते है। कुछ लोग किशोर-मनोविज्ञान का शास्त्रीय एवं व्यावहारिक रुचियों के कारण भी अध्ययन करते हैं। अध्ययन किसी भी दृष्टि से किया जाए वह व्यक्ति को किशोरों से अधिक बुद्धिमानी का व्यवहार करने तथा किशोर-विकास में उचित सहयोग प्रदान करने में समर्थ बनाता है।

किशोर के सामने समायोजन की अनेक समस्याएँ होती हैं। अपने शारीरिक परिवर्तनों के कारण वह स्वयं भी चकित रहता है तथा भावात्मक रूप में भी उसकी कठिनाइयाँ कम नहीं होती। ऐसी अवस्था में घर पर माता-पिता की उदासीनता, कठोर व्यवहार अथवा अनुदार दृष्टिकोण, विद्यालय में अध्यापकों द्वारा उनकी कठिनाइयों को नहीं समझते हुए उन्हें मनोरंजक व रुचिकर वातावरण नहीं प्रदान कर पाना अथवा अध्यापक द्वारा अपनी स्वयं की भावनाओं व असन्तोष को उन पर थोपना अथवा जीवन से हताश अध्यापक का हँसते-खिलखिलाते किशोरों के प्रति ईर्ष्यालु होना या समाज के प्रौढ़ व्यक्तियों द्वारा उन्हें किसी भी प्रकार की सुविधाएँ नहीं प्रदान कर पाना अथवा समाज के व्यक्तियों द्वारा किशोरों को अच्छे मनोरंजन की सुविधाएँ प्रदान करने में असमर्थ होना या समुदाय की अभद्रताओं एवं गन्दे क्षेत्रों को अनदेखा कर देना, पुलिस व अदालतों द्वारा किशोर अपराधियों को मनमाने तौर से निबटने देना आदि किशोर-मनोविज्ञान के उचित अध्ययन के अभाव के कारण है, अन्यथा उनमें से अधिकांश व्यक्ति किशोरों के प्रति अपने दृष्टिकोण एवं व्यवहार में अवश्य ही उचित परिवर्तन ले आते। किशोरावस्था के अध्ययन के अभाव में वे उनकी आवश्यकताएँ, समस्याएँ एवं अभिरुचियाँ आदि नहीं समझ पाते हैं और इस कारण कभी भी इन्हें घर में अथवा कक्षा-कक्ष में अथवा समाज में उचित व सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार नहीं दे पाते। ये लोग किशोरों को अच्छा विद्यालय, अच्छा सामुदायिक जीवन आदि देने के लिए भी कभी प्रभावपूर्ण ढंग से कार्य नहीं करते या कहें कि इस आवश्यकता की अवहेलना ही कर देते हैं।

यद्यपि कुछ माता-पिता और अध्यापक ऐसे भी पाए जाते हैं जो कि किशोर के मनोवैज्ञानिक अध्ययन के बिना भी उसके प्रति सहानुभूतिपूर्ण, उदारता तथा बुद्धिमतापूर्ण व्यवहार करते हैं और अपनी विवेक-बुद्धि एवं स्वयं प्रज्ञा के आधार पर किशोर के साथ प्रभावशाली ढंग से पेश आते हैं तथा अधिकांश अवसरों पर सही निर्णय लेते हैं परन्तु फिर भी उन लोगों के लिए भी किशोर मनोविज्ञान के अध्ययन के महत्व को नकारा नहीं जा सकता है। चाहे वह एक पूर्ण अध्यापक हो या निपुण माता-पिता उन्हें किशोरों की

समस्याओं को संपूर्ण रूप में देखना-समझना है। किशोर मनोविज्ञान अत्यधिक विस्तृत है और सामान्य समझ से कहीं अधिक है। इसके अन्तर्गत किशोर द्वारा व्यक्त अथवा अव्यक्त सभी समस्याएँ सम्मिलित हैं। इसमें परिचित और अपरिचित सभी किशोरों को समझना आवश्यक है, अन्यथा किशोरों के वैयक्तिक अन्तर को समझ पाना संभव नहीं है। यह अध्ययन यह भी स्पष्ट करता है कि किन बिन्दुओं पर किशोर प्रौढ़ से सहायता की अपेक्षा करते हैं तथा कहाँ उन्हें स्वतंत्र छोड दिया जाना चाहिए। किशोर अपने जीवन के इस परिवर्तनकारी समय को किस प्रकार से व्यतीत करें कि उसका भावी जीवन सुखकारी व सुसमायोजित बन सके। यह ज्ञान भी किशोर मनोविज्ञान के अध्ययन के अर्जित होता है। इस अध्ययन के द्वारा युवक-युवतियों में पाए जाने वाले कुसमायोजन का भी ज्ञान होता है ताकि उन्हें उत्तम विकास हेतु उचित निर्देशन दिया जा सके। इससे यह भी ज्ञात होता है कि किस प्रकार समुदाय किशोर की असफलताओं के लिए उत्तरदायी है और कहाँ पर वह उसे अच्छे जीवन यापन में सहयोग देता है।

किशोर की सहायता हेतु दूर-दृष्टि की आवश्यकता है एक ऐसी दृष्टि जो दिन प्रतिदिन के अनुभवनों के भी पार देख सकें। दो या तीन किशोरों के सन्निध्य से यह दृष्टि प्राप्त नहीं हो सकती है। इसके लिए एक ऐसी अन्तदृष्टि की आवश्यकता है जो अनेक व्यक्तियों के प्रयत्नों से अनेक व्यक्तियों के अध्ययन द्वारा ही प्राप्त हो सकती है। किशोर के सम्बन्ध में बहुत सी बातें हम तभी अच्छी तरह समझ सकते हैं जब उसे माता-पिता, शिक्षकों एवं उसके पर्यावरण में रहने वाले अन्य समझदार लोगों के साथ उसके पारस्परिक सम्बन्धों पर विचार करें।

किशोर के विकास की प्रक्रिया अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं जटिल है अत: गहन अध्ययन के बिना उसे समझना अत्यन्त कठिन है। प्रौढ किशोर के जीवन को अत्यधिक प्रभावित करते हैं अत: यह आवश्यक है कि वे किशोर विकास की प्रक्रिया को तथा उसमें अपनी भूमिका को भली प्रकार समझें।

12.5 किशोर-मनोविज्ञान के अध्ययन की आवश्यकता

अधिकांश प्रौढ़ किशोर को किशोर जैसा जीवन व्यतीत करने में बाधक बन जाते है। वे चाहते हैं कि किशोर अपनी अबाध गति से विकसित नहीं हो बल्कि उनकी इच्छाओं के अनुरूप स्वयं को ढाले। वे किशोर को छोटा वयस्क मानते हैं। यह वृत्ति किशोर विकास के लिए अनुचित ही नहीं हानिकारक भी है। किशोर के समुचित विकास के लिये यह आवश्यक है कि वह किशोर की भांति ही रहे। किशोर के सच्चे अर्थों में सहायक बनने के लिए हमें निम्न तथ्यों से पूर्ण रूपेण अवगत होना चाहिए -

1. किशोर किस प्रकार का होता है।
2. किशोर के लिए अच्छी जीवन पद्धति क्या हो सकती है ?
3. उसके एक अत्युत्तम प्रौढ़ बनने में क्या बातें/कार्य सहायक हो सकते हैं ?
4. हमारी संस्कृति के कौनसे दबाव उसके लिए लाभदायक हैं तथा कौनसे हानिकारक हैं ?
5. किशोर का नेतृत्व करने में हमारी अपनी क्या विशिष्टताएँ है?

किशोर से सम्बन्धित उपर्युक्त एवं अन्य अनेक समस्याओं/प्रश्नों का समाधान हमें किशोर मनोविज्ञान के अध्ययन से प्राप्त होता है। किशोर-मनोविज्ञान किशोर के साथ सामान्य संबंध स्थापित

करने की दिशा में पूर्ण सहयोग प्रदान करता है। यह स्वयं प्रौढ़ एवं किशोर दोनों के लिए ही लाभकारी एवं सुखद है। यहाँ हम संक्षेप में किशोर-मनोविज्ञान के अन्तर्गत आने वाले क्षेत्रों पर चर्चा करते हुए यह देखने का प्रयास करेंगे कि किशोर-मनोविज्ञान के अध्ययन का किस प्रकार और कितना महत्त्व है।

1. किशोरावस्था वय: संधि की अवस्था है। इस अवस्था में वह न तो बालक ही रहता है और न ही प्रौढ़ माना जाता है।
2. शारीरिक एवं गत्यात्मक विकास - यह किस प्रकार होते हैं और ये परिवर्तन उसको किस प्रकार प्रभावित करते हैं ? उसका बौद्धिक, भावात्मक, सामाजिक व नैतिक विकास किस प्रकार होता है ?
3. किशोरावस्था में वैयक्तिक समायोजन किस प्रकार होता है और किस प्रकार किशोर-व्यक्तित्व उभरता है ?
4. वे कौन से सामाजिक घटक हैं जो किशोरावस्था को प्रभावित करते हैं?
5. किशोर अपराधी क्यों बन जाते हैं ? परिवार, विद्यालय व समुदाय इनकी रोकथाम के लिए क्या कर सकता है ?

प्रश्न 1 - किशोरावस्था का अर्थ एवं महत्त्व बता सकेंगे ?

प्रश्न 2 -किशोरावस्था को संघर्ष एवं तनाव का काल क्यों कहा जाता है ?

प्रश्न 3 - किशोरों के अध्ययन की आवश्यकता क्यों होती है ?

प्रश्न 4 -किशोरों को समझने के लिये किशोर मनोविज्ञान के अध्ययन की आवश्यकता पर प्रकाश डालिये ?

12.6 निर्देशन एवं परामर्श हेतु किशोरावस्था के अध्ययन की विधियाँ

किशोरावस्था के अध्ययन की साधारणतया वहीं विधियाँ रही है जो शिक्षा के संदर्भ में सामाजिक व दार्शनिक अध्ययन की रही है। अरस्तू ने किशोरावस्था का अत्यन्त विस्तृत एवं सर्वोत्तम वर्णन किया है। उसके अध्ययन की विधि निरीक्षण विधि थी, यही कारण है कि उसने शारीरिक परिवर्तनों का तो विस्तृत वर्णन किया है परन्तु मानसिक परिवर्तनों के विषय में केवल यही कहा है कि युवक एवं युवतियों की इस अवस्था में सतर्कतापूर्ण देखभाल अनिवार्य है।

किशोर के वैज्ञानिक अध्ययन करने वालों की रुचियों के अनुसार इससे सम्बन्धित अध्ययनों को तीन क्षेत्रों या समूहों में विभक्त किया जा सकता है।

(अ) किशोर की वृद्धि एवं विकास से सम्बन्धित अध्ययन।

(ब) किशोर के व्यवहार, रुचियाँ एवं व्यक्तित्व की विशेषताओं से सम्बन्धित अध्ययन।

(स) किशोर के जीवन पर अनेक संस्थाओं एवं सामाजिक अभिकरणोंके प्रभाव से सम्बन्धित अध्ययन।

किशोर के अध्ययन की विधियाँ अनेक कारकों पर निर्भर करती हैं -

(1) किशोर-सम्बन्धी समस्याओं की अनेकता एवं उनकी प्रकृति।

(2) विभिन्न परिस्थितियाँ, जो किशोर को प्रभावित करती हैं।

(3) अध्ययनकर्त्ता का अनुभव एवं प्रशिक्षण।

उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए तदनुसार ही अध्ययनकर्ता को विधि का चयन करना चाहिए।

1. ऐतिहासिक विधि **-** यह एक लाभदायक विधि है। इसमें किशोर का अध्ययन ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में किया जाता है क्योंकि आज के युवा के जीवन का भूतकाल से भी घनिष्ठ सम्बन्ध होता है।

2. मानव**-**वैज्ञानिक अध्ययन - इसके अन्तर्गत भिन्न-भिन्न समाज में रहने वाले किशोरों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। मारगरेट मीड द्वारा किया गया अध्ययन महत्त्वपूर्ण है। इसमें उन्होंने दक्षिण प्रशान्त सागर के युवा-वर्ग के व्यक्तित्व के विकास का अध्ययन किया था। उनका मानना था कि युवा-वर्ग के व्यक्तित्व के विकास का अध्ययन आवश्यक था। उनका निष्कर्ष था कि युवा वर्ग को निराशा में डालने वाले तनावों को उत्पन्न करने के लिए हमारी सभ्यता उत्तरदायी है। उन्होंने समोआ के युवाओं का उदाहरण देते हुए बताया कि वहाँ किशोरावस्था सहज शान्तिपूर्ण तरीके से व्यतीत हो जाती है, जबकि अमेरिका का युवा बहुधा निर्णयों में ही उलझा रहता है।

(3) अनुदैध्र्य उपागम - इस अध्ययन में निश्चित जनसमूह का अध्ययन निश्चित काल अवधि में किया जाता है तथा निश्चित अन्तरालों पर अनुवर्ती क्रिया-कलापों को दोहराया जाता है। पेसकिन तथा लिबसन 1972 ने जन्म से लेकर 18 वर्ष तक की आयु के बालकों को गहन अध्ययन किया तथा 30 व 40 वर्ष की अवस्था में उनका अनुवर्ती अध्ययन किया।

(4) अन्त**:** सांस्कृतिक अध्ययन - जैसा कि नाम से स्पष्ट है इसके अन्तर्गत जीवन के कुछ क्षेत्र व उनके विकास को दो या अधिक देशों के मध्य या उप-संस्कृतियों के मध्य तुलनात्मक अध्ययन आता है। इसका एक उदाहरण अमेरिका व डेनिश की महिलाओं के विवाह पूर्व सम्बन्धों का 1962 और 1970 में किया गया तुलनात्मक अध्ययन है।

(5) प्रयोगात्मक पद्धति (म्गचमतपउमदजंस) - किशोरों की मानसिक प्रक्रियाओं के अध्ययन के लिए सर्वाधिक उपयोगी और महत्वपूर्ण पद्धति है। आरम्भिक मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में इसका प्रयोग किया जाता था। ताकि मनोविज्ञान का एक विज्ञान के रूप में विकास किया जा सके। इसमें परीक्षणों द्वारा निरीक्षण किया जाता है और निष्कर्ष निकाला जाता है। यद्यपि अनेक ऐसी समस्याएँ है, जिनके लिये यह पद्धति उपयुक्त नहीं है। परन्तु कुछ समस्याओं के समाधान के लिये यह विधि उपयुक्त है।

- किशोर की रुचियों एवं व्यवहार पर यौवनारम्भ का सापेक्ष प्रभाव,
- किशोर की अभिवृत्तियों एवं गतिविधियों पर निरंकुश एवं प्रजातान्त्रिक नेतृत्व के प्रभाव की तुलना।

- किशोर के व्यावसायिक चयन पर निर्देशन कार्यक्रमों का प्रभाव।

6. निदानात्मक पद्धति या व्यक्ति-इतिहास पद्धति - इस पद्धति के अन्तर्गत किशोर व्यक्ति का गहन अध्ययन किया जाता है। इसमें एक व्यक्ति का सभी उपलब्ध साधनों द्वारा अध्ययन किया जाता है। व्यक्ति इतिहास पद्धति में निम्न बातें सम्मिलित रहती हैं -

(1) व्यक्ति के स्तर के सम्बन्ध में निश्चय करना;

(2) व्यक्ति से सम्बन्धित सभी परिस्थितियों के बारे में सामग्री एकत्रित करना;

(3) सभी कारणों को पहचानना;

(4) उपचारात्मक साधनों का प्रयोग;

(5) अनुवर्ती अध्ययन (थ्वससवू.नच)।

7. अन्य विधियाँ - इसके अन्तर्गत डायरी, पत्र लेखन, समूह-चर्चा दिवास्वप्नों का अध्ययन आता है। एक अन्य विधि में प्रश्नावली का प्रयोग किया जाता है। इसमें प्रश्न सहज, स्पष्ट व निश्चित होने चाहिए। साक्षात्कार द्वारा भी अध्ययन किया जाता है।

8. किशोर की डायरियाँ - सर्वप्रथम जी. स्टेनले हॉल ने किशोर की रुचियों, गतिविधियों एवं प्रकृति को समझने के लिए उनकी डायरियों को प्रयोग किया। इससे सम्बन्धित किशोर के संबंधमें जानकारी तो अवश्य प्राप्त हो सकती है, परन्तु सामान्य निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता। इसके दो प्रमुख कारण है, पहल कारण यह है कि डायरियाँ अधिकतर वही किशोर लिखते हैं, जो बुद्धिमान है अत: डायरियाँ समस्त किशोर-वर्ग के संबंधमें विवरण नहीं दे सकतीं। औसतन व मन्दबुद्धि किशोर शेष रह जाते हैं। दूसरा कारण यह है कि डायरियों में लिखी गई सामग्री अत्यधिक चयनित व संवेगपूर्ण होती है तथा वह किशोर की भावनाओं तथा तनावों का ही वर्णन करती हैं। साधारणत: डायरी लिखते समय किशोर उद्वेगों से भरा होता है।

9. वयस्कों से पश्चोन्मुख विवरण - गत कुछ दशाब्दियों से वयस्कों से उनकी किशोरावस्था के सम्बन्ध में सूचना एकत्रित करने का कार्य भी किशोर अध्ययन-कर्ताओं ने किया है। प्रौढ़ से उसकी किशोरावस्था के संबंधमें सोचने को कहा जाता है तथा उससे वांछित सूचना प्राप्त की जाती है। इसमें प्रश्नावली विधि का प्रयोग किया जाता है। इस विधि द्वारा अधिक सत्य सूचना एकत्रित की जा सकती है, क्योंकि प्रौढ़ अपनी किशोरावस्था की सूचना देते समय तथ्यों को छिपाते या तोड़ते मरोड़ते नहीं है। यद्यपि इस विधि में भी दो समस्याएँ रहती है, पहली समस्या विस्मरण की है। बहुत से प्रौढ़ उत्तर देते समय कुछ महत्त्वपूर्ण बातों को भूल जाते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ अनुभव ऐसे भी होते हैं जिनके विवरण में त्रुटियाँ आ जाती है। फिर भी डायरियों की भाँति ही इन सूचनाओं का भी अपना मूल्य है, यदि उन्हें समझ व सावधानी से प्रयोग में लिया जाए।

12.7 किशोरावस्था की बाधाओं को दूर करने हेतु सामान्य निर्देश एवं परामर्श

1. अच्छे प्रतिमान - किशोर के पास स्वयं की खोज के लिए कोई मार्ग-दर्शन नहीं होता है तथा वह अंधेरे में टटोलने वाली स्थिति में रहता है। स्व के सम्बन्ध में कोई धारणा बनाने हेतु वह पर्यावरण के संकेत पाने के प्रयत्न करता है। दूसरों द्वारा उसके प्रति किया गया व्यवहार भी उसे कुछ सहायता देता है। इस आयु में वह अनुकरणशील भी होता है। वह भावी जीवन के निर्देशन हेतु अपने आस-पास प्रतिमान (मॉडल) ढूँढने का प्रयत्न करता है। वह समय उसके लिए वीर पूजा का होता है। वह माता-पिता अध्यापक या किसी भी वयस्क को प्रतिमान मानकर उसी का अनुकरण करने लगता है। अत: इस आयु में उसे प्रतिमान चयन के लिये उचित निर्देशन की आवश्यकता होती है। इसके साथ ही यह भी आवश्यक है कि किसी एक व्यक्ति को प्रतिमान मानने की अपेक्षा उसे विभिन्न व्यक्तियों से गुणों व सिद्धान्तों का चयन करना चाहिए तथा अनुकरण करना चाहिए। त्रुटिपूर्ण चयन के परिणामस्वरूप किशोर हास्यास्पद स्थिति में भी फँस जाता है और इस प्रकार के गुणों का अनुकरण उसे भटका देता है।

   अत: माता-पिता, अध्यापक व समाज के लिए आवश्यक है कि वे स्वयं अच्छे प्रतिमान बनें व बालक के सामने भी सत्साहित्य, अच्छे चल-चित्र अच्छे नाटक आदि प्रस्तुत करें ताकि वह अच्छे प्रतिमान का चयन करे अपने स्व की खोज कर सके।

2. साथियों का प्रभाव - किशोरावस्था में यह सामान्य प्रवृत्ति होती है कि किशोर अपने मानसिक स्तर के अनुसार मित्र ढूंढता है और इस प्रकार एक समूह में रहता है। किशोर की पहचान उसके साथियों द्वारा होती है। इस चयन पर उसके बाल्यावस्था में अर्जित गुण महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अत: प्रौढ़ों को चाहिये कि वे पूर्व-किशोरावस्था में ही इस ओर ध्यान दें तथा किशोर को अपने मित्रों के चयन के सम्बन्ध में निर्देश दें, क्योंकि किशोरावस्था में उसके मित्रों में दोष ढूँढना अथवा उन्हें छोड़ देने के लिए दबाव डालना विद्रोह भी पैदा कर सकता है। किशोर के भावी जीवन की योजना ही उसके स्व का निर्माण करती है और इस योजना निर्माण में उसका समूह भी महत्त्व रखता है।

3. वातावरण में परिवर्तन - ''स्व'' के सम्बन्ध में नए पहलुओं की खोज के लिये यह आवश्यक है कि किशोर को समय-समय पर नया वातावरण प्रदान किया जाए। इसके लिए उसको सम्बन्धियों के पास या अध्यापक के साथ भ्रमण के लिए भेजा जा सकता है। नए वातावरण में उनके कुछ छुपे हुए गुण-अवगुण सामने आएँगे ताकि उन गुणों को बढ़ाया जा सके तथा अवगुणों को समाप्त किया जा सके। उन किशोरों के लिए इस प्रकार के नए वातावरण के अनुभव अधिक सहायक होंगे जो स्वभाव से शर्मीले हैं अथवा उनके पुराने वातावरण में उनका आदर नहीं है। नए वातावरण के चयन में भी माता-पिता द्वारा सावधानी रखी जानी चाहिए। नया वातावरण वैयक्तिक परिस्थितियों व किशोर के स्वभाव के अनुसार ही चुना जाना चाहिए।

4. पृथक्-कक्ष - पृथक कक्ष किशोर को कुछ समय के लिए वातावरण से छुटकारा देता है, बड़ों की चौकसी से छुटकारा देता है और उन्हें ''स्व'' की अनुभूति प्रदान करता है। वह कुछ है, कुछ केवल उसका है, इसकी अनुभूति किशोर को प्रसन्नता प्रदान करती है। किशोर अपने कक्ष में

स्वतन्त्रतापूर्वक अपने छिपे गुणों का प्रदर्शन कर सकता है, जो कि उसके स्व की खोज में अत्यधिक सहायक सिद्ध हो सकते हैं। आजकल बड़े शहरों में आर्थिक परिस्थितियों के कारण माता-पिता किशोर को अलग कमरा न दे सकें तो कम से कम एक अलमारी तो अलग देनी ही चाहिए।

5. डायरी लेखन - किशोरावस्था में डायरी लेखन का भी महत्त्व है। यह इस काल के मनोविज्ञान पर प्रकाश डालता है। स्व की अनुभूति हेतु अपनी भावनाओं और महत्वकांक्षाओं का लिखित आलेख आवश्यक है। डायरी एक प्रकार की मूक विश्वासपात्र है। जिसमें कि किशोर बिना झिझक के अपनी भावनाएँ कह सकता है। यह संवेगों के निरसन हेतु एक उचित माध्यम है। डायरी लिखने की प्रक्रिया में किशोर के अस्पष्ट व धुँधले विचार स्पष्ट शब्द पाते है। अत्यधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि डायरी लेखन से किशोर अपने स्व को अपने साथ बनाए रख सकता है तथा अपने लिखित अनुभवों द्वारा स्व की समालोचना व पुनर्निरीक्षण भी कर सकता है।

6. दिवा स्वप्न - बहुत कम किशोर डायरी लिखते हैं परन्तु लगभग सभी किशोर हवाई किले बनाते रहते हैं और इस प्रकार अपनी इच्छाओं की पूर्ति कल्पनाओं में कर आनन्दित होते हैं। इसके केन्द्र ''स्व'' ही रहता है। और उसके चारों ओर निर्मित काल्पनिक संसार में किशोर उन वस्तुओं की प्राप्ति में लगा रहता है जो कि वास्तविक दुनिया में सम्भवतया नहीं प्राप्त हो सकें। यदि किशोर केवल दिवा-स्वप्नों में खोया रहता है और अपनी चाही गई वस्तुओं के लिए प्रयत्नशील नहीं रहता, तो यह उसके मानसिक स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है, परन्तु यदि उन दिवा-स्वप्नों के साथ ही साथ सक्रियता भी रहती है, वह अपने कार्य व्यवहार से उन्हें सत्य जगत् में ले जाने के प्रयत्न करता है तो वह प्रक्रिया उसके व्यक्तित्व को सार्थकता प्रदान करती है। केवल क्रियाशीलता की स्थिति में ही दिवा-स्वप्न मूल्यवान है।

12.8 किशोरावस्था में निर्देशन एवं परामर्श

घर व स्कूल में बालक के समायोजन में माता-पिता, अध्यापक, निर्देशन कर्ता एवं परामर्शदाता का कार्य बड़ा महत्वपूर्ण है संक्षेप में विद्यालय में शिक्षक को शिक्षार्थियों का मानसिक स्वास्थ्य बनाये रखने, मानसिक अस्वस्थता को रोकने और मानसिक स्वास्थ्य की उन्नति करने के लिए निम्नलिखित कारकों की ओर ध्यान देना चाहिए -

विद्यालय में अनुशासन का बालकों के मानसिक स्वास्थ्य पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। परन्तु वह अनुशासन कभी भी कठोर नहीं होना चाहिए। ऐसा होने पर उससे मानसिक अस्वस्थता बढ़ेगी। अत: अनुशासन दण्ड द्वारा भय दिखलाकर नहीं बल्कि शिक्षार्थियों में नियम-पालन और उत्तरदायित्व की भावना उतपन्न करके स्थापित किया जाना चाहिए। सच्चा अनुशासन आत्मानुशासन है। बालकों में अनुशासन की देखभाल करने के लिए मॉनीटर, फ्रीफेक्ट आदि भी शिक्षार्थियों में से चुने जाने चाहिए। इससे बालकों में उत्तरदायित्व की भावना बढ़ती है।

यह समझना भूल है कि बालकों को घर पर करने के लिए बहुत सा काम देने से उनको व्यर्थ के कार्यों के लिए अवकाश न मिलेगा और वे व्यस्त रहेंगे। बालकों को अत्यधिक गृह-कार्य से लदे रहने से उन्हें

चिन्ता होती है और मन पर बुरा प्रभाव पड़ता है। अत: उन्हें बहुत ही सन्तुलित गृह कार्य दिया जाना चाहिए।

मानसिक स्वास्थ्य बनाये रखने के लिए यह आवश्यक है कि बालकों को उनकी योग्यता के अनुसार विषय दिये जायें और उनकी शिक्षा सम्बन्धी कठिनाईयों को दूर किया जाये। इस संबंधमें मनोवैज्ञानिक की निजी सलाह शैक्षिक निर्देशन कहलाती है।

किशोरावस्था में लड़के-लड़कियों में यौन वासना के कारण नैतिक पतन होता है अथवा उनके दमन से मानसिक अस्वस्थता बढ़ती है शिक्षकों को चाहिए कि वे योवनावस्था से संबंधित बुरी आदतों को किशोरों के मन से निकालने के लिए मनोवैज्ञानिक उपायों से काम लें। इसके लिए सबसे अच्छा उपाय लड़के-लड़कियों को आवश्यक यौन शिक्षा देना है। इससे जहाँ वे यौन प्रवृत्ति की ओर एक स्वस्थ दृष्टिकोण बना सकेंगे और अनेक बुराईयों से बचे रहेंगे, वहाँ उनके शारीरिक, मानसिक और संवेगा ात्मक विकास में भी सहायता मिलेगी और वे आगे चलकर सर्वांगपूर्ण विकसित स्त्री-पुरुष बन सकेंगे।

विद्यालय में पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए जिससे बालक में व्यक्तित्व के सभी पहलुओं का स्वस्थ विकास हो, आवश्यक ज्ञान बढ़े और मस्तिष्क पर अनावश्यक जोर न पड़े। नाना प्रकार की पाठ्यक्रमेत्तर क्रियाओं के द्वारा विद्यालय में शिक्षार्थियों के सर्वांग विकास में योगदान दिया जा सकता है।

बालकों में दमित प्रेरणाएँ मानसिक अस्वस्थता उत्पन्न करती है। इनको स्वस्थ रूप में अभिव्यक्त होने का अवसर खेलों और नाना प्रकार के मनोरंजन से दिया जा सकता है खेल मनोरंजन का काम करते है।

बालक अपनी अनेक समस्याओं को स्वयं नहीं सुलझा पाते और उनको सुलझाने में उन्हें मनोवैज्ञानिक उपायों द्वारा विशेष निर्देशन की आवश्यकता पड़ती है।

प्रेमपूर्ण व्यवहार - शिक्षार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य के लिए परिवार के सदस्यों एवं अध्यापक के प्रेमपूर्ण व्यवहार का बड़ा महत्व है। इससे शिक्षार्थी अध्यापक का कहना मानेगा, उसका आदर करेगा और ऐसे काम नहीं करेगा, जिनकों अध्यापक बुरा समझता हो। शिक्षक को सभी बालकों से एक सा प्रेमपूर्ण व्यवहार रखना चाहिए। इसमें किसी भी प्रकार का भेद-भाव शिक्षार्थियों के हृदय को आघात पहुँचाता है।

प्रत्येक किशोर को शिक्षण कार्य के बाद कोई न कोई व्यवसाय ग्रहण करना होता है। जिसकी चिन्ता अध्ययन के काल में ही उसे सताने लगती है। व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा मनोवैज्ञानिक उन्हें भावी व्यवसाय के चुनाव में सहायता दे सकता है।

12.9 सारांश

मानसिक अस्वस्थता की रोकथाम पूरे समाज की समस्या है, इसके लिए सामाजिक विघटन की परिस्थितियों, शोषण, भ्रष्टाचार, विभिन्न तनावों तथा संघर्षों, अपराध, नशाखोरी, आदि को उखाड़ फेंकने की कोशिश करनी पडेगी। शहरी जीवन के दोष, भीड़-भाड़, गन्दगी, अत्यधिक शोर आदि को दूर करना पडेगा। सभी के लिए उपयुक्त और रुचिकर काम तथा स्वस्थ मनोरंजन का प्रबन्ध करना पड़ेगा। राष्ट्रीय स्तर पर इस प्रकार के प्रयत्नों से ही मानसिक अस्वस्थता की भली प्रकार रोकथाम की जा सकती है, इसके लिए

सरकार, शिक्षकगण, सामाजिक कार्यकर्त्ता और जनता के सभी समझदार लोगों को सहयोग से काम करना पड़ेगा।

मानसिक स्वास्थ्य अच्छी आदतों पर निर्भर है। अत: शिक्षक को चाहिए कि वह शिक्षार्थियों में नियमित जीवन, सन्तुलित व्यायाम और खान-पान, अच्छे व्यवहार और विचार की आदतें डालने में सहायता दें।

निर्देशन एवं परामर्श देना - आधुनिक समय में कुसमायोजन को दूर करने के लिए निर्देशन एवं परामर्श की क्रिया भी की जाती है। प्राय: व्यक्तिगत निर्देशन में व्यक्तिगत समस्याओं का निराकरण करने का सुझाव एवं प्रयत्न होता है। इससे भी किशोर बालकों में कुसमायोजन दूर होता है, क्योंकि ऐसा करने से व्यक्ति को एक सुनिश्चित मार्ग मिल जाता है। संघर्ष भी दूर हो जाता है।

12.10 बोध प्रश्न

1. निर्देशन एवं परामर्श हेतु किशोरावस्था के अध्ययन की प्रमुख विधियों का विश्लेषण कीजिये ?
2. किशोरावस्था की बाधाओं को दूर करने हेतु निर्देशन एवं परामर्श के सामान्य नियमों का विश्लेषण कीजिये?
3. किशोरावस्था में निर्देशन एवं परामर्श के महत्त्व पर एक टिप्पणी लिखिये ?

12.11 संदर्भ सूची

1. पाण्डे, के.पी. (2005) एजूकेशनल एंड वोकेशनल गाईडेन्स इन इंडिया, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
2. सक्सैना, राधारानी (2009) गाइडेन्स एंड काउन्सिलंग इन एजुकेशन, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, रावत प्रिन्टर्स एंड स्टेशनर्स, जयपुर
3. गुप्ता, महावीर प्रसाद (2008) शैक्षिक परामर्श एवं निर्देशन एच.पी. भार्गव, बुक हाउस, आगरा।
4. मिश्रा, महेन्द्र कुमार (2007), किशोर मनोविज्ञान, यूनिवर्सिटी बुक हाउस प्राईवेट लिमिटेड, जयपुर।
5. ओबराय, एस.सी. (2009) ''शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन एवं परामर्श, इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, मेरठ।
6. उपाध्याय राधावल्लभ (2009) ''शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
7. मिश्रा, महेन्द्र कुमार (2006), अधिगम का मनोसामाजिक आधार एवं शिक्षण, नीलकंठ पुस्तक मंदिर, जयपुर।
8. अग्रवाल जे.सी., (2008) एजुकेशनल, वोकेशनल गाइडेन्स एंड काउंसिलिंग, दोआबा हाउस, दिल्ली।
9. नन्दा एस.एल., गाइडेन्स एंड काउंसिलिंग, टन्डन प्रकाशन, लुधियाना।

इकाई - 13

वैवाहिक परामर्श (Marriage Counselling)

इकाई की रूपरेखा

- उद्देश्य
- प्रस्तावना
- विवाह का अर्थ
- वैवाहिक समायोजन की समस्या के कारण
- वैवाहिक जीवन सम्बन्धी समस्याओं के कुछ अन्य कारण
- वैवाहिक समस्याओं पर शोध के आधार पर प्रमुख कारणों की सूची
- वैवाहिक परामर्श के उद्देश्य
- विवाहित पुरूषों और महिलाओं की परामर्श विधि
- वैवाहिक जीवन में परामर्श की भूमिका
- सारांश
- अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची
- निबंधात्मक प्रश्न

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- विवाह के अर्थ को परिभाषित कर बता सकेगें |
- वैवाहिक समायोजन के समस्या के कारणों को स्पष्ट कर सकेंगे |
- वैवाहिक परामर्श के उद्देश्य को स्पष्ट कर सकेंगे |
- विवाहित पुरूषों और महिलायों के परामर्श विधि को बता सकेंगे |
- वैवाहिक जीवन में परामर्श की भूमिका को स्पष्ट कर सकेंगे |

प्रस्तावना (Introduction)

विवाह मानव समाज की सबसे मौलिक एवं प्राचीन सामाजिक संस्थाओं में से एक है। प्राचीन काल से यह समाज में व्यवस्था एवं अनुशासन बनाये रखने का प्रमुख माध्यम रहा है। इसके बिना समाज मुक्त

यौन संबंधों की अराजकता में भटक गया होता। इसका स्वरूप, प्रकृति तथा प्रक्रियाएँ अलगअलग - समाजों में एक जैसी नहीं होतीं। इसके बावजूद इस संस्था के कई सार्वभौमिक सामान्य तत्त्व एवं प्रकार्य हैं। एडवर्ड वैस्टरमार्क के अनुसार "विवाह एक या अधिक पुरूष का एक या अधिक स्त्री के साथ संबंध है जिसे प्रथा या कानून की मान्यता प्राप्त होती है और जिसमें शामिल लोगों तथा इस संबंध से पैदा हुए बच्चों को कुछ अधिकार तथा कर्तव्य प्राप्त होते हैं।" सार रूप में, विवाह का तात्पर्य नियमों तथा रीतियों के समुच्चय से है जो यह निर्धारित करता है कि किस व्यक्ति का विवाह किससे होगा, विवाह किस विधि से होगा तथा किस परिस्थिति में विवाह होगा। विवाह के पश्चात् विवाह संबंध में बंधने वाले व्यक्तियों के अधिकार और कर्तव्य क्या होंगे, तथा आवश्यकता पड़ने पर संबंध विच्छेद कैसे होगा। विवाह के द्वारा पतिपत्नी के शारीरिक-, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक तथा आध्यत्मिक लक्ष्यों और जरूरतों की पूर्ति होती है। विवाह सामाजिक रूप से स्वीकृत तथा मूल्यों की दृष्टि से वांछनीय संबंध है जिसमें एक पक्ष स्त्री एवं दूसरा पक्ष पुरूष होता है। यह वैवाहिक संबंध में बंधे दोनों पक्षों के यौन, आर्थिक एवं अन्य अधिकारों तथा र्कत्तव्यों को परिभाषित तथा स्थापित करता है। विवाह पुरुष तथा स्त्री के पतिपत्नी के रूप में यौन - अधिकारों को सामाजिक तथा कानूनी मान्यता देता है तथा उनके यौन संबंधों का नियमन भी करता है। आधुनिक युग में शिक्षा और अनेक प्रकार के मीडिया के प्रभाव से स्त्रीपुरूषों की विचारधारा-, दृष्टिकोण और अपेक्षाओं में अन्तर आ गया है। अब प्रायः पतिपत्नी भारतीय सांस्कृतिक- और धार्मिक बन्धनों से उतने जकड़े नहीं है जैसे कि वे प्राचीन समय में थे। विवाह की पुरानी मान्यताऐं और परम्पराओं में काफी अन्तर आ गया है। आधुनिक शिक्षा प्रणाली , पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव और आधुनिक मीडिया के कारण वैवाहिक संबंधों की परिभाषा ही बदल गई है। स्त्री अब केवल गृहणी ही नहीं है, बल्कि पुरूष के हर क्षेत्र की साथी है। महिलाओं की शिक्षा के कारण वह पुरूषों के समान प्रत्येक बाह्य क्षेत्र में कार्यरत है। उसकी वह प्राचीन परिभाषा जीवन संगिनी-, अर्धागिंनी, सेविका, दासी आदि बदल गयी है। अब प्रत्येक स्त्री पारिवारिक जीवन के साथसाथ-, पति के साथ उसके बाह्य जीवन और व्यवसाय में समान रूप से भागीदार है इसलिए स्वस्थ् और सुखी वैवाहिक जीवन के लिए स्त्रीपुरूष दोनो को एक दूसरे की - अपेक्षाऐं और धारणाओं को समझना चाहिए। जरा सी चूक के कारण वैवाहिक जीवन में दरार पड़ने की संभावनारहती है।

युवक युवतियां विवाह सूत्र में बंधने के लिए दो विभिन्न परिवारों से आते हैं । दोनों की पारिवारिक पृष्ठभूमि , वंशानुक्रम और वातारवण अलगपोषण-अलग होता है । दोनों के पालन-, अनुभव, विचार मूल्य अभिवृत्तियांअभिरूचियां-, आदि में अन्तर होता है। शिक्षा और बौद्धिक योग्यताओं में भिन्नता होती है । अएव ऐसे दो व्यक्तियों में सामंजस्य बनाने में प्रारम्भिक कठिनाई होती हैविवाहित -दोनों नव , व्यक्तियों को एक दूसरे को समझने, अपेक्षाओं के अनुरूप ढालने और सामान्य व्यवहार, आदतों आदि के बदलने में कुछ समय लगता है । अतएव यह आवश्यक है कि नव वरवधू धैर्य-, सहानुभूति , स्नेह, सहनशीलता और सदभावना से एक दूसरे के अधिक निकट आ सकते हैं । बिलमर का मत है कि नव-पत्नी को समान आधारों को खोज कर जीवन को अर्थपूर्ण बनाने के उद्देश्य से समायोजन -विवाहित पति करना चाहिए ।

पारस्परिक समझ के अभाव में वैवाहिक जीवन के विघटित होने की सम्भावना रहती है। पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव के कारण भारतीय स्त्रियां भी पुरूषों के समान बाह्य और स्वच्छन्द जीवनयापन करना चाहती - है। शिक्षा के प्रसार के कारण प्रायः सभी व्यवसायों और नौकरियों में महिलाओं का बाहुल्य होता जा रहा है इसलिए भारतीय महिलाऐं अपने पति या परिवार पर निर्भर नहीं रहती है। वे स्वयं अर्थोपार्जन , करके आत्मनिर्भर जीवन बिताने के पक्ष में है। इससे बड़ा परिवर्तन तो आया है कि आज की नारी की तिरस्कार, अपमान, उपेक्षा और घुटन की जो स्थिति पूर्व समाज में थी उससे उभर कर स्वतंत्र और आत्म निर्भरता का जीवन जीने लगी है। अब नारी घर की चौखट के भीतर न रहकर पुरूष के कंधे से कंधा लगाकर समाज और राष्ट्र के लिए सृजनात्मक कार्य में लग गई है। अनेक महिलाऐं उच्च शासकीय पदों पर कार्यरत है, अनेक समाज सेवा में लगी है और अनेक राजनीति में उच्च स्थान पर सुशोभित है। आधुनिक पीढी भारतीय प्राचीन मान्यताओं और रूढ़ियों को ध्वस्त कर नये युग में प्रवेश कर रही है।
समस्त विश्व में लोकतंत्र का विस्तार तीव्र गति से हुआ है। लोकतंत्र में सामाजिक और राजनैतिक ढांचों में काफी परिवर्तन आया है। अब नारी को अनेक सामाजिक और राजनैतिक अधिकार मिले है। वह पुरूषों के साथ सामाजिक और राष्ट्रीय उत्थान के लिए समान रूप से भागीदार है। लोकतंत्र की सफलता के लिए यह आवश्यक भी है कि प्रत्येक नारी अपने अधिकारों और कर्तव्यों का निर्वाह करें। राजनैतिक अधिकार और जागरूकता के कारण महिला के व्यक्तित्व अधिकारों, पारिवारिक सम्बन्धों और जिम्मेदारियों में अन्तर आया है। परिवार में महिला का समान अधिकार हो गया है और अब अबला या निरीह व्यक्ति के रूप में न रह कर महत्वपूर्ण व्यक्ति के रूप में जीवन व्यतीत कर रही है। आधुनिक युग में इन कारणों से विवाह पद्धति और वैवाहिक जीवन में अनेक परिवर्तन होते जा रहे है और वैवाहिक सम्बन्धों की परिभाषा बदलती जा रही है।
विवाह प्रत्येक के जीवन की महत्वपूर्ण और सुखद घटना है। विवाह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें अनेक पारिवारिक, सामाजिक, और धार्मिक परम्पराओं का निर्वाह करना पड़ता है। यह दो व्यक्तियों के साथ दो परिवारों का ऐसा बन्धन है जो अनेक रीति रिवाजों-, परम्पराओं और आस्थाओं से जुड़ा रहता है। परिवार का प्रत्येक सदस्य विवाह की सफलता की कामना करता है इसलिए विवाह का सम्पादन पेतृक रीति और परम्पराओं के अनुकूल होता है। आज के कुछ वर्ष पूर्व तक लड़केलड़कियों के विवाह अभिभावक - निश्चित करते थे। वे लड़के लड़की की पारिवारिक, सामाजिक, और आर्थिक स्थिति के साथसाथ - स्वभाव, चरित्र आमदनी और व्यवसाय, आदि का ध्यान रखते थे। अधिकांश विवाह कुंडली मिलने के आधार पर ही होते थे। परन्तु वर्तमान युग में वैवाहिक मूल्य कुछ बदल गये है। शिक्षा मीडिया और पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव के कारण अब लड़केलड़कियां स्वंय आपस में विवाह तय करते है। - -अभिभावकों की जिम्मेदारी केवल आर्शीवाद समारोह के साथ विवाह कर देने की है। इस प्रकार के प्रेम लड़कियां एक दूसरे को अच्छी तरह समझ लेते हैं क्योंकि -विवाह में यह तर्क दिया जाता है कि लड़के दोनों को उनका जीवन साथ व्यतीत करना है इसलिए एक दूसरे के विचार, अभिरूचियां आदि की जानकारी होनी चाहिए। इससे भावी विवाहित जीवन में समायोजन में सुविधा होती है। कुछ सीमा तक यह तर्क उचित है और इस तरह के प्रेमलड़कियां की कम आयु -विवाह सफल भी हुए हैं परन्तु लड़के- विवाह का मूल आधार -और अनुभव हीनता के कारण ऐसे विवाह असफल भी हो जाते है। दूसरे प्रेम

पारस्परिक प्रेम है जो एक दूसरे के प्रति संवेगात्मक आकर्षण से होता है । इससे अनेक भूलें होने की संभावना होती है और कुछ समय बाद ही ऐसे प्रेमविवाह असफल भी हो जाते है। इस विडम्बना के - कारण विवाह के साथ तलाक की भी व्यवस्था की गई है।

विवाह का अर्थ (Meaning Of Marriage)

विवाह दो व्यक्तियों तथा कानूनी रूप से एक साथ रहने के /के धार्मिक या (एक पुरुष और एक स्त्री :प्राय) लिए प्रदान सामाजिक मान्यता है। विवाह मानवसमाज की अत्यंत महत्वपूर्ण प्रथा या समाजशास्त्रीय - संस्था है। यह समाज का निर्माण करने वाली सबसे छोटी इकाई परिवार का मूल है। यह मानव प्रजाति के सातत्य को बनाए रखने का प्रधान जीवशास्त्री माध्यम भी है।

'विवाह' शब्द का प्रयोग मुख्य रूप से दो अर्थों में होता है। इसका पहला अर्थ वह क्रिया, संस्कार, विधि या पद्धति है; जिससे पति पत्नी के-'स्थायी'-संबंध का निर्माण होता है। प्राचीन एवं मध्यकाल के धर्मशास्त्री तथा वर्तमान युग के समाजशास्त्री, समाज द्वारा अनुमोदित, परिवार की स्थापना करनेवाली किसी भी पद्धति को विवाह मानते हैं। मनुस्मृतिः के टीकाकार मेधा तिथि के शब्दों में विवाह एक निश्चित पद्धति से किया जाने वाला, अनेक विधियों से संपन्न होने वाला तथा कन्या को पत्नी बनाने वाला संस्कार है। रघु नंदन के मतानुसार उस विधि को विवाह कहते हैं जिससे कोई स्त्री (किसी की) पत्नी बनती है। वैस्टर मार्क ने इसे एक या अधिक पुरुषों का एक या अधिक स्त्रियों के साथ ऐसा संबंध बताया है, जो इस संबंध को करने वाले दोनों पक्षों को तथा उनकी संतान को कुछ अधिकार एवं कर्तव्य प्रदान करता है।

विवाह का दूसरा अर्थ समाज में प्रचलित एवं स्वीकृत विधियों द्वारा स्थापित किया जानेवाला दांपत्य संबंध और पारिवारिक जीवन भी होता है। इस संबंध से पतिपत्नी को अनेक प्रकार के अधिकार और - पत्नी को कामसुख के उपभोग का अधिकार देता -कर्तव्य प्राप्त होते हैं। इससे जहाँ एक ओर समाज पति है, वहाँ दूसरी ओर पति को पत्नी तथा संतान के पालन एवं भरण पोषण के लिए बाध्य करता है। संस्कृत में पति का शब्दार्थ है : 'पालन ' तथा 'भार्या' का अर्थ है 'भरणपोषण की जाने योग्य नारी'। पति के संतान और बच्चों पर कुछ अधिकार माने जाते हैं। विवाह प्रायणसमाज में नवजात प्रा :ियों की स्थिति का निर्धारण करता है। संपत्ति का उत्तराधिकार अधिकांश समाजों में वैध विवाहों से उत्पन्न संतान को ही दिया जाता है।

विवाह का उद्गम (Origin Of Marriage)

मानव८०-१८१५) वीं शताब्दी में वेखोफन१९समाज में विवाह की संस्था के प्रादुर्भाव के बारे में - ई(., मोर्गन (.ई ८१-१८१८)तथा मैकलीनान ने विभिन्न प्रमाणों के आधार पर इस मत का (८१-१८२७) प्रतिपादन किया था कि मानव समाज की आदिम अवस्था में विवाह का कोई बंधन नहीं था, क्रोपाटकिन व्लाख और ब्रफाल्ट ने प्रतिपादित किया कि प्रारंभिक कामचार की दशा के बाद बहुभार्यता (पोलीजिनी)

या अनेक पत्नियाँ रखने की प्रथा विकसित हुई और इसके बाद अंत में एक ही नारी के साथ पाणिग्रहण का नियम प्रचलित हुआ। (मोनोगेमी) करने

किंतु चार्ल्सडार्विन ने प्राणिशास्त्र के आधार पर विवाह के आदिम रूप की इस कल्पना का प्रबल खंडन किया, वैस्टरमार्क, लौंग ग्रास तथा क्राले प्रभृति समाजशास्त्रियों ने इस मत की पुष्टि की। प्रसिद्ध समाजशास्त्री रिर्क्ख ने लिखा है कि हमारे पास इस कल्पना का कोई पुष्ट प्रमाण नहीं है कि भूतकाल में कभी कामाचार की सामान्य दशा प्रचलित थी। विवाह की संस्था मानव समाज में जीवशास्त्रीय आवश्यकताओं से उत्पन्न हुई है। इसका मूल कारण अपनी जाति को सुरक्षित बनाए रखने की चिंता है। यदि पुरुष यौनसंबंध के बाद पृथक् हो जाए, गर्भावस्था में पत्नी की देखभाल न की जाए, संतान उत्पन्न होने पर उसके समर्थ एवं बड़ा होने तक उसका पोषण न किया जाए तो मानव जाति का अवश्यमेव उन्मूलन हो जाएगा। अतआत्मसंरक्षण की दृष्टि से विवाह की संस्था की उत्पत्ति हुई है। यह केवल मानव : समाज में ही नहीं, अपितु मनुष्य के पूर्वज समझे जानेवाले गोरिल्ला, चिंपाजी आदि में भी पाई जाती हैं।

विवाह के विभिन्न पक्ष (Different Dimensions Of Marriage)

वैयक्तिक दृष्टि से विवाह पतिपत्नी की मैत्री और साझेदारी है। दोनों के सुख-, विकास और पूर्णता के लिए आवश्यक सेवा, सहयोग, प्रेम और निःस्वार्थ त्याग के अनेक गुणों की शिक्षा वैवाहिक जीवन से मिलती है। नरप्राप्ति-नारी की अनेक आकांक्षाएँ विवाह एवं संतान द्वारा पूर्ण होती हैं। उन्हें यह संतोष होता है कि उनके न रहने पर भी संतान उनका नाम और कुल की परंपरा अक्षुण्ण रखेगी, उनकी संपत्ति की उत्तराधिकारिणी बनेगी तथा वृद्धावस्था में उन्हें अवलंब देगी। हिंदू समाज में वैदिक युग से यह विश्वास प्रचलित है कि पत्नी मनुष्य का आधा अंश है, मनुष्य तब तक अधूरा रहता है, जब तक वह पत्नी प्राप्त करके संतान नहीं उत्पन्न कर लेता|

विवाह एक धार्मिक संबंध है : प्राचीन यूनान, रोम, भारत आदि सभी सभ्य देशों में विवाह को धार्मिक बंधन एवं कर्तव्य समझा जाता था। वैदिक युग में यज्ञ करना प्रत्येक व्यक्ति के लिए अनिवार्य था, किंतु यज्ञ पत्नी के बिना पूर्ण नहीं हो सकता, अतविवाह सबके लिए धार्मिक दृष्टि से आवश्यक था। पत्नी : शब्द का अर्थ ही यज्ञ में साथ बैठने वाली स्त्री है। श्री राम का अश्वमेध यज्ञ पत्नी के बिना पूरा नहीं हो सका था, अतसी उन्हें :ता की प्रतिमा स्थापित करनी पड़ी। विवाह का धार्मिक महत्व होने से ही अधिकांश समाजों में विवाह की विधि एक धार्मिक संस्कार मानी जाती रही है।

विवाह का एक **कानूनी या विधिक पक्ष** भी है। परिणय सहवास मात्र नहीं है। किसी भी मानव समाज में नरनारी को उस समय तक दांपत्य जीवन बिताने और संतान उत्पन्न करने का अधिकार नहीं दिया जाता, जब तक इसके लिए समाज की स्वीकृति न हो। यह स्वीकृति धार्मिक कर्मकांड को अथवा कानून द्वारा निश्चित विधियों को पूरा करने से तथा विवाह से उत्पन्न होनेवाले दायित्वों को स्वीकार करने से प्राप्त होती है। अनेक आधुनिक समाजों में विवाह को वरवधू की सहमति से होनेवाला विशुद्ध कानूनी अनुबंध समझा जाता है। किंतु यह स्मरण रखना चाहिए कि यह अन्य सभी प्रकार के अनुबंधों या संविदाओं से भिन्न है क्योंकि उनमें अनुबंध करनेवाले व्यक्ति इसकी शर्तें तय करते हैं, किंतु विवाह के कर्तव्य और

दायित्व वरवधू की इच्छा पर अवलंबित नहीं हैं, वे समाज की रूढ़ि, परंपरा और कानून द्वारा निश्चित होते हैं।

विवाह का **समाजिक और नैतिक पक्ष** भी महत्वपूर्ण है। विवाह से उत्पन्न होनेवाली संतति परिवार में रहते हुए ही समुचित विकास और प्रशिक्षण प्राप्त करके समाज का उपयोगी अंग बनती है, बालक को किसी समाज के आदर्शों के अनुरूप ढालने का तथा उसके चरित्रनिर्माण का प्रधान साधन परिवार है। यद्यपि आजकल शिशुशालाएँ, बालोद्यान, स्कूल और राज्य बच्चों के पालन, शिक्षण और सामाजीकरण के कुछ कार्य अपने ऊपर ले रहे हैं, तथापि यह निर्विवाद है कि बालक का समुचित विकास परिवार में ही संभव है। प्रत्येक समाज विवाह द्वारा मनुष्य की उद्दाम एवं उच्छृंखल यौन भावनाओं पर अंकुश लगाकर उसे नियंत्रित करता है और समाज में नैतिकता की रक्षा करता है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. विवाह का अर्थ लिखिये |
2. विवाह का उद्गम कान्हा से हुआ
3. विवाह के विधिक पक्ष पर अपनी राय लिखिये |

वैवाहिक समायोजन की समस्या के कारण (Reasons Of Marriage Adjustment)

विवाह एक ऐसा पवित्र बन्धन है जिसमें स्त्री और पुरूष एक दूसरे के साथ मिलकर आजीवन साथ निभाने का वादा कर अपने नये पारिवारिक जीवन को प्रारंभ करते है। परन्तु कभीकभी विवाह के कुछ समय -पत्नी के बीच की आस्था ही समाप्त हो जाती है और -बाद ऐसी परिस्थितियां निर्मित होती है कि पति वैवाहिक जीवन में अनेक उलझनें और मतभेद होने से विवाह विच्छेद की स्थिति तक आ जाती है। इसे वैवाहिक कुसमायोजन कहते है।

1. पर्यावरणीय कारक (Environmental Factors)

नव अलग वंश-पुरूष दो अलग-विवाहित स्त्री-, परम्परा और पर्यावरण से आते है। दोनों की जीवन शैली, व्यवहार, विचार आदतें आदि पर उनके पर्यावरण का प्रभाव होता है। अलगअलग परिवार और -पर्यावरण होने के कारण कभी कभी उनके विचार-, आदतें आदि एक दूसरे से मेल नहीं खाते और दोनों एक दूसरे से समायोजन करने में असफल होते हैं इससे विवाह विच्छेद की स्थिति निर्मित होती है।

2. सम्बन्धात्मक कारक (Relational Factors)

सामाजिक, शारिरिक या मानसिक अपरिपक्वता के कारण पतिपत्नी म-ें मधुर संबंध स्थापित नहीं हो पाते। इसका प्रभाव उनके व्यवहार पर पड़ता है और जिससे व्यक्तिगत झगड़े होते रहते है।

3. व्यक्तिगत कारक (Personal factors)

पतिअलग पारिवारिक-पत्नी दो अलग-, आर्थिक और सामाजिक पृष्ठभूमि के होते हैं यदि दोनों के स्तर में अन्तर होता है तो सामंजस्य नहीं बैठ पाता। धनी परिवार की लड़की को सामान्य परिवार में अनेक असुविधाओं का सामना करना पड़ता है। धनाभाव, स्वतंत्रता, सुविधाओं का अभाव परिवार के सदस्यों

की प्रत्येक कार्य में रोकटोक-, रूचि और इच्छानुसार कार्य की मनाही, आदि से पारस्परिक सोहार्द्र और स्नेह कम हो जाता है और वैमनस्य बढ़ जाता है।

वैवाहिक जीवन सम्बन्धी समस्याओं के कुछ अन्य कारण (Reasons Behind Marriage Life Complication)

1. पारिवारिक उत्तरदायित्वों का अभाव (Lack of Family Responsibility)

स्त्रीपुरुष अलग अलग वंश-, परम्परा और वातावरण से निकलकर नया परिवार बनाते है उनके पालन |, पोषण और विचारों में अन्तर होना स्वाभाविक है। यदि वे अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों नहीं समझते और उन्हें मिलकर नहीं निभाते तो पारस्परिक तनाव होने लगता है। दोनों के विचारों में अधिक विरोधाभास होता है, एक दूसरे के विपरीत सोचते , बोलते और कार्य करते है, परिवार की जिम्मेदारी मिलकर नहीं निभाते तो सम्बन्धों में दरार पैदा होने लगती है। परिवार की आवश्यकता यदि पूर्ण नहीं होती तो एक दूसरे पर दोषारोपण होता है और कलह प्रारम्भ हो जाती है। यदि पति अपना उत्तरदायित्व नहीं निभाता और पत्नी अपने पारिवारिक कार्यों को समय पर नहीं करती तो गंभीर मतभेद हो सकते है।

2. स्वभाव में भिन्नता (Difference in Nature)

कुछ व्यक्ति सहनशील, शान्त, धैर्यवान, विनम्र और मृदुल स्वभाव के होते है और कुछ इसके विपरीत, तेजतर्रार, धैर्यहीन, कठोर और मुंहफट होते है। कुछ एकान्तप्रिय, आत्मकेन्द्रित और अन्तःमुखी स्वभाव के होते है। कुछ अधिक मिलनसार, उदार खर्चीले स्वभाव के होते है। दो विपरीत स्वभाव के पुरूष और स्त्री अपना घर बसाते है तब उन्हें आपस में समायोजन करने में कठिनाई होती है। इस स्वभाव की भिन्नता के कारण विवाह के कुछ दिनों बाद से ही वैवाहिक जीवन में मधुरता कम हो जाती है और कटुता बढ़ सकती है।

3. आदतों का प्रभाव (Effect of Habits)

प्रत्येक व्यक्ति की आदतें अलगअलग होती है। ये आदतें उनका स्वभाव बन जाती है। प्रत्येक के - सामान्य जीवन में ये आदतें उसकेव्यवहार का आधार होती है। कुछ आदतें अच्छी होती है जैसे धीरे बोलना, कम बोलना, मुस्कराकर बोलना, शीघ्र काम करना, सुबह शीघ्र उठना, आदि परन्तु कुछ आदतें जैसे जोर से बोलना, बात काटना, बात बढ़ाचढा कर बतलाना-, बात बात में झूठ बोलना, बात छिपाना, विश्वास न करना, रूठना, बड़बडाना, क्रोधित होना, व्यंगात्मक भाषा का उपयोग करना, एक दूसरे की आलोचना करना आदि अच्छी आदतें नहीं है। ये आदतें और इस प्रकार का व्यवहार आपस में झगड़े का कारण बन सकता है।

4. आर्थिक कठिनाईयां (Financial Problems)

कुछ परिवारों में आय कम होने के कारण आर्थिक संकट बना रहता है। घर के आवश्यक खर्च पूरा करने में कठिनाई होती है । पत्नी का घर खर्च चलाना मुश्किल होता है। पति अधिक धन कमाने में असमर्थ होता है, इन कारणें से घर में कलह बनी रहती है। कुछ परिवारों में पुरूष वर्ग अपने ऊपर अधिक खर्च करते है और परिवार की सामान्य प्राथमिकताओं को अनदेखी करते है। कहीं कहीं परिवार में कुछ अन्य

व्यक्ति भी जैसेपिता-माता-, या अन्य सम्बन्धी भी रहते है। इनकी देखरेख आदि में भी अतिरिक्त खर्च होता है इन कारणों से खर्च पूरा करना कठिन होता है इससे पारिवारिक कलह हो सकती है।

5. काम संबन्धी सामंजस्य का अभाव)Lack of Relationship Adjustment)

विवाह के बाद काम संन्तुष्टि एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। यह वैवाहिक एवं पारिवारिक जीवन का आधार है। काम सन्तुष्टि स्त्री और पुरूष के पारस्परिक सम्बन्धों को प्रगाढ़ बनाती है और सुख स्वास्थ्य और उल्लास लाती है। पारस्परिक सोहार्दपूर्ण एवं स्नेह युक्त सम्बन्धों मात्र से सन्तुष्टि आवश्यक नहीं है। काम संन्तुष्टि का अभाव, एक दूसरे की अपेक्षा , सुविधा या रूचि का अभाव, आदि मानसिक तनाव एवं कुण्ठा उत्पन्न करते हैं और धीरे धीरे वैवाहिक सम्बन्ध बिगड़ने लगते है।-

6. भारतीय सभ्यता के मानदण्डों में कमी (Falling Down of Standard of Indian Civilization)

पाश्चात्य भौतिकवादी सभ्यता और विचारधारा के प्रभाव के कारण भारतीय सभ्यता के मानदण्ड धराशायी होते जा रहे हैं। प्रगतिवादी दृष्टिकोण और बढ़ती आधुनिकता की प्रवृत्ति भारतीय सभ्यता के पारिवारिक मानदण्डों में विकृति उत्पन्न कर रहा है। आधुनिक पश्चिमी दिशा, मीडिया, महिलाओं में नौकरी की प्रवृत्ति , परम्परागत भारतीय जीवन शैली में परिवर्तन के कारण बन रहे है । पारिवारिक निष्ठा और संजन की भावना नष्ट हो रही है। परिवार में तनाव और दबाव की स्थिति निर्मित हो जाती है। इसके परिणामस्वरूप पतिबात पर पारस्परिक उत्तेजना दोषारोपण-पत्नी के व्यवहार में बात-, कटु शब्दों का प्रयोग, कलह होने लगते है।

7. पारस्परिक विश्वास का अभाव (Lack of Mutual Trust)

वैवाहिक जीवन में सुख सम्पन्नता और स्थिरता के लिए पतिपत्नी में पारस्परिक विश्वास की - आवश्यकता होती है। आधुनिक समाज में पति और पत्नी के कार्यों में असाधारण परिवर्तन हुए है। पति का कार्य और सीमा का विस्तार बढा है। इसी प्रकार महिलाऐं भी घर की चार दीवारी से बाहर आकर विद्यालयों ,कार्यालयों में, संस्थानों आदि में कार्य करने लगी हैं। इन स्थानों में स्त्रीपुरूष दोनो साथ कार्य - करते है। स्वाभाविक रूप से इनमें मित्रता हो जाती है। इस मित्रता को यदि पति या पत्नी अविश्वास की दृष्टि से देखे तो उनके वैवाहिक जीवन में दरार पड़ जाती है इसलिए एक दूसरे पर विश्वास करना आवश्यकहै ।

8. पारिवारिक ढांचे में परिवर्तन (Change in Family Structure)

आधुनिक समय में पारिवारिक ढांचे में परिवर्तन हुआ है। सम्मिलित परिवार के स्थान पर एकाकी परिवार का चलन बढ गया है। अब एक परिवार में पतिपत्नी और उसके बच्चे ही रहते है। यदि उनके रिश्तेदार - कअधि समय तक रहने आ जाते है तो पतिपत्नी कठिनाई का अनुभव करने लगते है। खर्च और कार्य - बढ़ जाता है। इससे मन मुटाव प्रारम्भ हो जाता है जो आपसी लड़ाई का कारण बन सकता है।

9. संवेगात्मक परिपक्वता का अभाव (Lack of Emotional Maturity)

पति पत्नी दो अलग अलग परिवारों-से आते हैं। उनका लालनपालन अलग प्रकार से होता है। वंश - परम्परा और पारिवारिक वातावरण भिन्न भिन्न होने के कारण संवेगात्मक विकास में अन्तर होता है। इसका प्रभाव उनके विचार व्यवहार और आदतों पर पड़ता है। यदि किसी एक में संवेगात्मक परिपक्वता

च का अभाव होता है तो वहिड़चिड़ाअस्थिर विचार वाला ,, अधिक भावुक, क्रोधी, आतुर ,भयभीत , अनियंत्रित व्यवहार वाला जैसा होता है इससे पारिवारिक शान्ति और मैत्री दोनों नष्ट हो जाती है।

10. शिक्षा का अभाव (Lack of Education)

पति पत्नी में यदि शिक्षा में अधिक अन्तर होता है अथवा शिक्षा-में भिन्नता होती है तो दोनों के चिन्तर-|विचारधारा और तौर तरीके में अन्तर आ जाता है। इसका प्रभाव समायोजन पर पड़ता है

वैवाहिक समस्याओं पर शोध के आधार पर प्रमुख कारणों की सूची (Reasons of Marriage Counselling – On the basis of Research)

वैवाहिक जीवन एवं उनसे संबंधित समस्याओँ को लेकर बहुत से शोध कार्य हमारे देश और देश के बाहर हुए इस तरह के शोध |इन शोधों ने वैवाहिक समस्याओँ के विभिन्न कारणों पर शोध कर निष्कर्ष दिये हैं| -उनकी सूची नीचे दी जा रही है ,सामने आए हैं कार्यों से जो निष्कर्ष उभर कर

1. दो विभिन्न परिवारों से आए स्त्री पुरूष के विचारों, अभिरूचियों अभिवृत्तियों आदि में अन्तर।
2. पारिवारिक पृष्ठभूमि में अन्तर होने के कारण जीवन शैली में भिन्नता।
3. दो परिवारों की आर्थिक स्थिति में असमानता का प्रभाव।
4. स्त्री पुरूष की आयु और शिक्षा में अधिक अन्तर।-
5. पारस्परिक रीतिरिवाजों-, प्रथाओं आदि में अन्तर।
6. अभिभावकों के दबाव का प्रभाव।
7. स्त्री के किसी व्यवसाय या नौकरी में होने के कारण पारिवारिक कठिनाई।
8. स्त्री पुरूष के अलग अलग नौकरी में होने से वैचारिक भिन्नता।
9. सन्तान उत्पन्न न होना अथवा कन्याओं के अधिक जन्म लेने के कारण स्त्री पर दोषारोपण।
10. स्त्री या पुरूष के विवाह पूर्व किसी प्रसंग के कारण पतिपत्नी में अविश्वास।-
11. विवाह पश्चात स्त्री पुरूष एक दूसरे के चरित्र पर शंका करना।
12. पतिपत्नी द्वारा एक दूसरे की यौन संतुष्टि में उपेक्षा।-
13. स्त्री या पुरूष में किसी एक का अति क्रोधित होन का स्वभाव।
14. पति या पत्नी अवांछित आदतों जैसेः पति का जुंआ, नशा, सट्टा आदि में लिप्त होना तथा पत्नी का अधिक फैशन, सिनेमा देखना आदि।
15. पति या पत्नी के व्यवसाय या नौकरी के कारण लम्बे समय तक बाहर रहने से उत्पन्न कठिनाईयां।
17. पतिपत्नी के व्यक्तिगत जीवन में बाहरी व्यक्ति का हस्तक्षेप करना।-
18. पत्नीपति द्वारा परिवार के सदस्यों की उपेक्षा/, अनावश्यक वादविवाद व्यंगात्मक भाषा-, बार बार आयकुछ सदस्यों का पक्षपात व्यय की चर्चा-, बच्चों के झगड़े में अनावश्यक बोलना आदि।
19. परिवार में किसी एक सदस्य की लगातार अस्वस्थता।
20. किसी बाह्य व्यक्ति के परिवार के कार्या और सम्बन्धों में दखल देना।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. वैवाहिक समयोजन में किस प्रकार की कठिनाइयां आती हैं | विस्तार से बताइयें ?
2. शोध किन कारकों को वैवाहिक समस्याओं का प्रमुख कारण बतातें हैं | संक्षिप्त में लिखिये ?

वैवाहिक परामर्श के उद्देश्य / आवश्यकता (Need Of Marriage Counselling)

1. विवाह के बाद उत्पन्न होने वाली कठिनाईयों और समस्याओं के निराकरण के लिए वैवाहिक परामर्श उपयोगी होता है। परामर्श का उद्देश्य है विवाह उपरांत नव वरवधू अपना सुखी जीवन यापन - करें, एक दूसरे के जीवन पर्यन्त दुःख सुख के साथी बने रहें और एक दूसरे के पारस्परिक स्नेह में बंधे रहें - । दोनों के बीच आपसी मनमुटाव, द्वेष ,ईर्ष्या, शंका, चिंता, आदि के कारण विवाह विच्छेद न हो और परिवार टूटने से बचाया जा सके । परामर्शक का मुख्य कार्य दोनों के बीच आपसी समझदारी और मन्तव्य बनाये रखना है ।

2. वैवाहिक परामर्श द्वारा स्त्री पुरुष में अनुरूपता बनाना है जिससे दोनों के बीच में कभी मतभेद - न हो सकेउत्पन्न । दोनों के विचारों, अभिरूचियों अभिवृत्तियों आदि के अन्तर को कम करना और यदि अन्तर है तो एक दूसरे के विचारों आदि से सामंजस्य बनाये रखने की योग्यता विकसित करना है।

3. वर्तमान युग के लड़केदूसरे के लड़कियां का विवाह पूर्ण युवावस्था में होता है। इस आयु के एक- प्रति आकर्षण होना स्वाभाविक है । इस आकर्षण का एक कारण यौन इच्छाऐं भी है इसलिए यदि यौन इच्छाऐं अतृप्त रहती है तो वैवाहिक जीवन में विसंगति आने लगती है । दोनों को इस विषय पर उचित मार्गदर्शन दिया जाना चाहिये हैसे बचाया जा जिससे उनको इस कार्य हेतु बाह्य आकर्षण , सके ।

4. विवाह के उपरांत अनेक समस्याऐं जैसे आर्थिक विषमता, पारिवारिक भिन्नता, व्यक्तित्व गुणों में अंतर, संवाद का अभाव, आदि के कारण भी उत्पन्न हो जाती है । वैवाहिक परामर्श के अन्तर्गत समस्याओं के मूल कारणों का अध्ययन कर समस्या का उपचार किया जाता है ।

वैवाहिक परामर्श का कार्य बहुत नाजुक और जिम्मेदारी का होता हैपरामर्शक को पूर्ण सावधानी से ऐसे , प्रकरण को सुलझाने का प्रयास करना चाहिए । नव वर वधू के पारस्परिक झगड़े और आपसी मनमुटाव यह मानकर के मुख्य कारणों को जानने के लिए उनकी तह में जाना चाहिए । परामर्शक कोचलना चाहिए कि वह निर्णायक की भूमिका नहीं निभा रहा है इसलिए उसे यह कहने का अधिकार नहीं होता कि कौन सही है और कौन गलत है क्योंकि अपनेअपने दृष्टिकोण से स्वंय दोनों सही होते है और दूसरा दोषी - को यह विश् होता है । परामर्शक की भूमिका केवल इतनी है कि वह उन दोनोंवास दिला सके कि वास्तविक समस्या क्या है ? और इसका मुख्य कारण क्या है और फिर दोनों आपस में मिलकर अपनी ? समस्या का किस प्रकार हल कर सकते है । इसके लिए यह आवश्यक है कि दोनों वर वधू अपने सम्बन्ध क मिथ्या जामें सही जानकारी प्राप्त करें और जो अपने सम्बन्ध में एनकारी है इसके भ्रम से मुक्त हो सके । प्रारम्भ में दोनां में से कोई भी अपनी कमजोरियों और गलतियों को स्वीकार करने को तैयार नहीं होता । परामर्शक दोनों को परोक्ष विधि से उनके आत्म सम्मान को ठेस पहुंचाऐ बिना उन्हें वास्तविक धरातल पर लाने में रूचि से प्रयास करता है । प्रार्थी केन्द्रित विधि द्वारा परामर्श दोनों को आत्म मंथन के लिए प्रेरित

करता है और वे स्वयं विश्लेषण से अपने व्यवहार कार्या और स्वभाव की अच्छाईबुराई से अवगत हो - व्यवहार मे जाते है । जब दोनों यह अनुभव करने लगते है कि कुछ दोष उनका भी है तब वे अपने परिवर्तन करने के लिए तैयार हो जाते है ।

परामर्श कार्य की रूपरेखा बनाते समय परामर्श का स्थान और समय का भी ध्यान रखना चाहिए जिससे उन्हें वहां आने और पर्याप्त समय देने में कठिनाई न हो । परामर्शक को यह ध्यान रखना चाहिए कि वह समस्या निदान के लिए कोई हल या उपाय बताने नहीं जा रहा है बल्कि वह उन दोनों की समस्या के प्रमुख कारणों और हल में दोनों की भागीदारी तय करने की सामर्थ्य बताने जा रहा है।

पश्चिमी देशों में अधिकांश प्रेम विवाह होते है। लड़केलड़कियां एक दूसरे को व्यक्तिगत और पारिवारिक - तरह जानते ह रूप से अच्छीै। उनमें निकटता के संबंध होते है। साथ साथ पढने या साथ साथ काम करने के कारण उनमें घनिष्ठता हो जाती है। एक दूसरे के स्वभाव, प्रकृति आदतें, रूचियों , अभिवृत्तियों आदि की जानकारी होती है इसलिए अपनी पसन्द का लड़का या लड़की का चुनाव करना सरल होता है। लड़के लड़की एक-दूसरे को समझने के लिए तिथि निर्धारण की प्रथा काफी हद तक सहायक है। एक निर्धारित तिथि पर दोनों मिलते है और काफी समय तक साथ रहते है। इससे एक दूसरे के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी मिल जाती है और आपसी प्रेम बढ जाता है। ऐसे विवाह मानसिक परिपक्वता से होते है इसलिए सफल होने की संभावना अधिक होती है परन्तु यदि दो अनजान व्यक्तियों को वैवाहिक सूत्र में बांध दिया जावे तो विवाह की सफलता पर सन्देह बना रहता है।

भारतीय परम्पराओं के अनुसार विवाह पूर्व लड़केलड़कियों को मिलने-, साथ रहने एक दूसरे को समझने का अवसर नहीं मिलता। यदि दोनों के स्वभाव, आदतों अभिरूचियों में अंतर होता है और एक दूसरे , पत्नी के संबंधों में तनाव और कटुता आ जाती है ।-से सामजस्य करने की क्षमता का अभाव है तो पति रन्तु प, और एक दूसरे से अलग रहने की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। भारत में तलाक की प्रथा तो कम है स्वंय विवाह विच्छेद हो जाते है ।

विवाह के पूर्व प्रत्येक लड़केलड़की के मन में कुछ अपेक्षाऐं-, धारणाऐं और अभिलाषाऐं होती है। विवाह की वास्तविक स्थिति में नववधू एक दूसरे में अपनी अपेक्षा और धारणाओ को खोजते -विवाहित वर- है। यदि उन्हें ये पूरी होती दिखाई देती हैतो विवाह सफल हो जाता है और यदि इससे बाधाऐं आती है तो मनमुटाव और तनाव प्रारम्भ हो जाता है। वैवाहिक जीवन की सफलता के लिए पति पत्नी एक दूसरे के कार्यों एवं व्यक्तित्व को महत्वपूर्ण और मूल्यवान समझना चाहिये। पारस्परिक समझ सीमाओं और गुणों को सहानुभूति एवं तटस्थता से समझना चाहिये। पारस्परिक समझ और सहनशीलता से समायोजन में सहायता मिलती है और इसके अभाव में वैवाहिक जीवन विघटित हो जाता है।

आधुनिक युग में वैवाहिक जीवन के मूल्य भी बदल रहे हैं। आज अधिकांश स्त्रियों में आधुनिकता का प्रभाव अधिक है। वे सन्तानोत्पत्ति और बच्चों के पालन पोषण में रूचि नहीं लेती। कुछ लोग तो विवाह के स्थायी बंधन के बारे में भी शंका करने लगे हैं। उनका कहना है कि रूढियों के विनाश के इस युग में प्रेम और स्त्री पुरूष के सम्पर्क में भी स्वच्छन्दता होनी चाहिए। इस सिद्धान्त के कारण जिसमें पश्चिमी

सभ्यता और आधुनिक मीडिया का प्रभाव अधिक है, अधिकांश स्त्रीपुरूष अपने निकट के मित्रों से - गते हैंसम्पर्क बना लेते है। उनके विवाहित जीवन में दरार पड़ने लगती है और विवाह टूटने ल

शिक्षा के प्रचार और प्रसार के कारण लडकियां भी अब अनेक प्रकार की नौकरियां और व्यवसाय में जाने लगी हैं। वे विवाह के बाद भी अर्थोपार्जन कर आत्मनिर्भरता का जीवन बिताना चाहती है परन्तु आज के युग में अनेक पुरूष और टकराव की स्थिति बन जाती है और वैवाहिक बंधन टूटने लगते हैं। कई मनोवैज्ञानिकों का मत है की पुरूषों की अपेक्षा महिलाओं का वैवाहिक परामर्श कार्य कुछ अलग और कठिन है । महिलाओं की पारिवारिक शिक्षा परम्परावादी होती है। उन्हें अपना सम्पूर्ण जीवन परिवार और समाज तथा धार्मिक नियमों के अनुकूल व्यतीत करना होता है। उनका सामाजिक दायरा सीमित होता है और बचपन से ही उनका बाहय जगत से सम्पर्क कम होता है इसलिए उन्हें वास्तविकता का यथार्थ ज्ञान नहीं हो पता। पारिवारिक और सामाजिक बंधनों और रीति रिवाजों के कारण वे जो कुछ करना चाहती हैं उन्हें वह करने के लिए उतनी स्वतंत्र नहीं रहती जितनी कि पुरूषों को स्वतंत्रता रहती है। भारतीय संस्कृति और परम्परा में महिलाओं के सम्पूर्ण जीवन दूसरों पर आश्रित रहने की शिक्षा दी जाती है। वे धर्म और स्त्रीत्व से इतनी बंधी होती हैं कि अपने मन के विचार, इच्छाएं, अभिलाषाएं भी प्रकट करने की भी उन्हें अनुमति नहीं होती । महिलाओं में शिक्षा के प्रचार और प्रसार के बाद भी पारिवारिक और वैवाहिक जीवन में उन्हें अपनी परम्पराओं और वैवाहिक जीवन में उन्हें अपनी परम्पराओं और रीति रिवाजों का पालन करना पड़ता है। समाजिक बंधनों के कारणो से उनका सम्पूर्ण जीवन एक सीमित दायरे में ही व्यतीत होता है। अपने विचारों की अभिव्यक्ति और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अभाव में आधुनिक युग में महिलाओं में कुण्ठा उत्पन्न होती है। अपनी इच्छा अनुसार जीवन न जीने की दुविधा के कारण मानसिक तनाव और दबाव की स्थिति बन जाती है। पारिवारिक बंधनों के कारण सदैव वैचारिक संघर्ष होता रहता है। इन कारणों से वैवाहिक जीवन में दरार पड़ने लगती है और विवाह विच्छेद की स्थिति आ जाती है। कई बार विवाहित महिलाएं भय और लोक लज्जा के कारण प्रारम्भ में अपनी समस्या के कारणों को स्पष्ट नहीं बताती और न पूरा सहयोग करती है इसलिए उनका परामर्श चुनौतीपूर्ण कार्य होता है।

विवाहित पुरूषों और महिलाओं की परामर्श विधि (Counselling Method for Married Males and Females)–

सम्बन्ध स्थापन)Rapport Establishment)

विवाहित पुरूषों और महिलाओं की समस्या निवारण एक कठिन कार्य है इसके लिए धैर्य और परिश्रम की आवश्यकता होती है। प्रारम्भ में परामर्शक और प्रार्थी के बीच में सौहार्द्रपूर्ण पारस्परिक संबंध स्थापित करने की आवश्यकता होती है। यह एक प्रकार का मित्रवत् और आत्मीय संबंध है जिससे एक दूसरे पर विश्वास उत्पन्न हो सके। आत्मीय संबंध स्थापित करने से प्राथी स्वेच्छानुरूप उत्साहपूर्वक अपनी समस्या और उसके सम्भवतः कारणों को बताने में सहयोग करने लगता है।

तटस्थता (Concentration)

परामर्शक को एक तटस्थ व्यक्ति के रूप में कार्य करना होता है। प्रार्थी को यह अनुभव न हो कि परामर्शक दूसरे पक्ष का पक्षधर है। उसका व्यवहार हाव भाव विचार, भाषा आदि इतनी संयत होना चाहिए कि प्रार्थी को उस पर विश्वास बढता जाये और ऐसा लगे की वह उसे ही दोषी मान रहा है और दूसरे को निर्दोष समझ रहा है। अतएव परामर्शक की समदृष्टि पूर्वक व्यवहार दर्शाना चाहिए।

सम्प्रेषण (Reinforcement)

मन के भावों को समझने के लिए भाषा और भाव का ज्ञान होना आवश्यक है। प्रार्थी अपनी समस्या अथवा अपने विचार अपनी भाषा में प्रकट करता है उस समय वह इतना भावुक हो जाता है कि उसकी भाषा और भावों के द्वारा अपनी बात कहने का प्रयास करता है।

परामर्शक अपने चातुर्य से उसकी भाषा और भावों के द्वारा समस्या की वास्वविकता समझ लेता है। परामर्शक प्रार्थी की भाषा विशेष शब्द बोली, चेहरे के हाव भाव -, आवा की उत्तेजना, आदि से गूढ़अर्थों को समझने की योग्यता होनी चाहिए। वह स्वयं समय समय पर ऐसी भाषा और भावों को प्रकट करे जिससे प्रार्थी को अपनी आन्तरिक भावों को स्पष्ट करने में सहायता मिले इसलिए संवाद किया जा सकता हो और प्रार्थी की भाषा योग्यता के अनुकूल हो।

वैवाहिक परामर्शन के प्रयोजन)Purpose of Marriage Counseling)

वैवाहिक परामर्शन के निम्न प्रयोजन हैं

१) आत्म मूल्यांकन .Self- Appraisal)

२) प्रोत्साहन .Encouragement)

३) आवश्यक सूचनाओं की पूर्ति .Supply of necessary information

४) नियोजन.Planning)

५) अन्वेषण-आत्म .Introspection)

६) व्याख्या करना .Interpretation)

७) विश्लेषण .Analyses)

८) स्पस्टीकरण.Clarification)

९) स्वीकृति.Approving)

१० प्रवलन)Re-inforcing)

११) मूल्यांकन .Evaluation)

वैवाहिक परामर्श दाता की आवश्यक विशेषताएँ (Essential characteristics of Marriage counsellor)

वैवाहिक में परामर्श देने क लिए परामर्शदाता में कुछ निश्चित विशेषताएं होनी चाहिए जो निम्नलिखित हैं-

१. संवेदनशीलता परामर्शदाता कों परामर्शी की आवश्यकताओं के प्रति उसी प्रकार संवेदनशील : होना चाहिए जिस प्रकार आँखे प्रकाश के प्रति संवेदनशील हैं|

२.	नैतिक व्यवहार परामर्शन प्रक्रिया के दौरान परामर्शदाता परामर्शी से उसकी अत्यंत गुप्त बातें या : करता है सूचनाये प्राप्त| ये बातें बिना परामर्शी के स्वीकृती के किसी अन्य के सामने प्रकट नहीं करनी चाहिए |

३.	लचीलापन परामर्शदाता कों कभी भी कठोर नहीं होना चाहिए :| उसे परामर्शी के प्रति सचेत होना चाहिए और तदनुसार अपने व्यवहार में परिवर्तन करना चाहिए |

४.	अवबोध परामर्शदाता में परामर्शी की समस्याएं समझने की योग्यता होनी चाहिए :| उसमे समस्यायों कों समझने की सूझ होनी चाहिए |

५.	स्वीकृति परामर्शी के पास परामर्श या सहायता प्राप्त करने के लिए आता है :| अतः परामर्शदाता कों उसकी समस्याओं की गंभीरता कों स्वीकार करना चाहिए|

६.	स्वस्थ तथा प्रभावशाली आकृति परामर्शदाता स्वस्थ :, मृदुभाषी, प्रभावशाली व्यक्तित्व वाला, चेतनावान तथा सहनशील होना चाहिए |

७.	बौद्धिक क्षमता परामर्शदाता कों प्रतिभावान तथा कुसग्र बुद्धि वाला होना चाहिए :|

८.	व्याव्सायिक निष्ठा व्यवसाय के प्रति निष्ठावान होना चाहिए परामर्शदाता कों अपने :| उसे समस्याओं के सुनने तथा सुझाव देने के लिए सदैव तत्पर रहना चाहिए |

९.	समायोजित व्यक्तित्व परामर्शदाता कों आत्मज्ञान होना चाहिए :| उसे सदैव अपनी कमजोरियों एवं सीमाओं के प्रति सचेत रहना चाहिए | आलोचना का स्वागत करने वाला तथा आत्म विश्वासी होना चाहिए |

१०.	कुशल मनोवैज्ञानिक परामर्शदाता कों एक कुशल शिक्षा मनोविज्ञानी होना चाहिए :| उसे वैवाहिक मनोविज्ञान का विशेषज्ञ भी होना चाहिए | उसके पास मानव व्यवहार के सिद्धांतों का ज्ञान होना चाहिए|

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. आज के युग में वैवाहिक परामर्श की क्या और क्यों आवश्यकता है ?
2. विवाहित पुरूषों और महिलाओं के लिए किस परामर्श विधि का प्रयोग करना चाहिये|
3. वैवाहिक परामर्श दाता की आवश्यक विशेषताएँ कौन कौन सी हैं | विस्तार से लिखिये ?

सारांश (Summary)

जीवन परामर्श का उद्देश्य पति पत्नी और परिवार में सामंजस्य बनाये रखता है जिससे परिवार विघटन से बचा रहे। भारत में प्राचीन परम्पराओं और मान्यताओं के कारण वैवाहिक परामर्श को अधिक बढ़ावा नहीं मिल पता है क्योंकि अधिक धार्मिक विचारधारा और रूढिवादिता के कारण परिवार के सदस्य अपने विचारे में परिवर्तन लाने के लिए तैयार नहीं होते हैं। परन्तु धीरे धीरे अब पारिवारिक सदस्य परामर्श के महत्व को समझने लगे हैं और सहयोग करने को तैयार भी हो गए हैं। इसकी प्रभाव उनकी पारिवारिक

सुख और शान्ति पर पडा है। अनेक परिवारों की आपसी कलह, शंकाएं, मनमुटाव और झगड़े वैवाहिक परामर्श से निपटाए गए हैं और परिवारो को टूटने से बचाया गया है।

वैवाहिक परामर्श व्यक्तिगत परामर्श के ही समान है। व्यक्तिगत परामर्श में एक व्यक्ति प्रार्थी होता है और उसकी अपनी समस्या होती है। वैवाहिक परामर्श में स्त्री या पुरूष दोनों प्रार्थी होते हैं और समस्या दोनों से संबंधित होती है। समस्या पर मुख्य कारण दोनों के वैवाहिक संबंधों से जुडा होता है। विवाह के प्रारम्भिक समय में पति पत्नी वैवाहिक जीवन में समायोजन की कठिनाई का अनुभव करते है। नव विवाहित जोडे को नया जीवन प्रारम्भ करने में कठिनाई का अनुभव करते हैं। नव विवाहित जोडे को नया जीवन प्रारम्भ करने में कठिनाई होती है। वर्तमान में विवाह के समय लडके लडकी की आयु अधिक होती है। इसलिए शीघ्र ही विचारों, आदतों आदि में परिवर्तन लाना संभव नहीं होता। इसका प्रभाव वैवाहिक जीवन के समयोजन पर पडता है।

मिल्टन का कथन है कि वैवाहिक परामर्श नव विवाहित लडके लडकी के वैवाहिक संबंधो में मधुरता लाने में सबसे अच्छा उपाय है। परामर्श विवाह से उत्पन्न हुई विपदाओं को दूर करने का साधन है । विवाह के शीघ्र उपरान्त परामर्श, विवाह से उत्पन्न होने वाली अनेक कठिनाइयों और समस्याओं से बचाव के लिए आवश्यक है।

वैवाहिक परामर्श के अनुभवी लोगों का मत है कि वैवाहिक संबंधों में विपदा का प्रारम्भ तब शुरू होता है जब नव वर वधू के जीवन में तीसरा व्यक्ति हस्तक्षेप करना प्रारम्भ करता है। वैवाहिक परामर्शक का मत है कि यदि तीसरा व्यक्ति प्रभावशाली है तो विवाहित युवक युवतियों के जीवन में संवेगात्मक विप्लव प्रारम्भ हो जाता है और जिसका परिणाम पारिवारिक संकट है ।

पारिवारिक संकट का एक और कारण पति या पत्नी या किसी एक या अधिक अहंवादी होना है। अपने अपने परिवार की सामाजिक आर्थिक स्थिति के कारण, जो वैवाहिक संबंधों में कटुता उत्पन्न करता है। दोनों परिवारों की संरचना अलग अलग होती है और नव विवाहित लडके लडकियां सरलता से समझौता करने के लिए तैयार नहीं होती है। कभी कभी कुछ परिवारों में बाहय व्यक्तियों के स्थान और भूमिका कष्टदायी होते है। ये बाह्य व्यक्ति अनावश्यक राय सलाह, रोकटोक और उपदेश देते है इससे धीरे - धीरे एक दूसरे के प्रति कटूता बढने लगती है।

अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची (Suggested Readings)

Rogers, C.R. (1942). Counselling and Psychotherapy, Boston, Houghton, Mittlin.

Ray. A. and Asthana, M. (2005). Guidance and Counselling, Concepts, Areas and Approaches, Patna, Motilal Banarsidas Co.Ltd.

सिंह (2001) ,अरूण कुमार ,शिक्षा मनोविज्ञानटर्स।ब्यूपब्लिशर्स एड डिस्ट्री ,भारती भवन ,पटना ,

सिंह (2001) ,अरूण कुमार ,संज्ञानात्मक मनोविज्ञानमोतीलाल बना ,वाराणसी ,रसीदास पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

सिंह (2001) ,अरूण कुमार ,उच्चतर मनोविज्ञानटर्स।ब्यूपब्लिशर्स एड डिस्ट्री ,भारती भवन,पटना ,

Lewis, E.C. (1970). Psychology of Counselling, New York, Holt Rienehant and Winston.

निबंधात्मक प्रश्न:-

1. विवाह के अर्थ को स्पष्ट करते हुए वैवाहिक समायोजन की समस्या के कारणों को लिखें |
2. वैवाहिक जीवन से संबंधित समस्याओं के कारणों को स्पष्ट करें |
3. वैवाहिक समस्याओं पर शोध के आधार पर प्रमुख कारणों को स्पष्ट करतें हुए उनकी सूची बनाए |
4. वैवाहिक परनार्ष के उद्देश्यों को स्पष्ट करें |
5. विवाहित पुरुषों एवं महिलाओं की परामर्श विधि को उदाहरण सहित स्पष्ट करें |

****

इकाई - 14

औद्योगिक परामर्श(Industrial Counselling)

इकाई की रूपरेखा

- प्रस्तावना
- उद्देश्य
- औद्योगिक परामर्श: संप्रत्यय
- कार्य –क्षेत्र में तनाव
- कार्य – क्षेत्र में तनाव प्रबंधन
- कार्य – क्षेत्र में तनाव प्रबंधन में परामर्शक की भूमिका
- कार्य-स्थल पर परमर्शन की आवश्यकता
- कर्मचारी प्रशिक्षण के चरण

- औद्योगिक परामर्श के लक्ष्य
- औद्योगिक परामर्श के प्रयोजन
- औद्योगिक परामर्शदाता की आवश्यक विशेषताएं
- सारांश
- शब्दावली
  अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची
  निबंधात्मक प्रश्न

प्रस्तावना

आज जैसेजैसे हमारी निर्भरता औद्योगीकरण पर बढ़ी है वैसे वैसे औद्योगीकरण के अच्छे एवं बुरे दोनों - औद्योगीकरण ने जहाँ एक तरफ हमारे समाज को सम्पन्नता |तरह के प्रभाव हमारे समाज पर पड़े हैंके नए आयाम दिखाए हैं वहीं दूसरे तरफ इसने विभिन्न तरह के अवसादों एवं तनाव को जन्म दिया है जो कि औद्योगीकरण के दुष्प्रभावों से निपटने के |किसी न किसी तरह से हमारे मनस को प्रभावित करता है, में विभिन्न तरह के परामर्शन के तरीके भी इजाद हुए लिए आज आधुनिक युगहैं परामर्शन के इन | तरीकों के प्रयोग से हम न केवल किसी व्यक्ति विशेष की कार्यक्षमता को बल्कि उस व्यक्ति के |समायोजन क्षमता में भी वृद्धि कर सकते हैंइस सदी के छठे दशक तक आतेआते औद्योगिक परामर्श - काफी हद तक का स्वरूप बदल चुका था। उद्योगपतियों तथा उद्योगों में सेवारत् प्रबंधक तथा औद्योगिक परामर्श के महत्व को अब तक अच्छी तरह समझ लिया था कि औद्योगिक संस्थान अथवा व्यावसायिक संस्थान किसी एक व्यक्ति या चन्द व्यक्तियों के समूह के एकतरफा निर्णय से नहीं चल सकते। उन क्षेत्रों में उद्योगपतियों, प्रबंधक, निरीक्षक, श्रमिक वर्ग तथा उपभोक्ता समूह के पारस्परिक संबंधों के एकसंगठित स्वरूप को पहचाना जा चुका था जिसके अभाव में कोई भी उद्योग या व्यावसायिक प्रतिष्ठान अपने उद्देश्यों की पूर्ति नहीं कर सकता इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए औद्योगिक परामर्श के संप्रत्यय सहित इसके अन्य पहलुओं कों जानना बहुत आवश्यक है इस इकाई में हम आद्योगिक परमर्शन से संबंधित | |अवयवों का अध्ययन करेंगे

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- औद्योगिक परामर्श का अर्थ बता सकेंगे एवं परिभाषित कर सकेंगे।
- औद्योगिक परामर्श के उद्देश्यों को बता सकेंगे।
- औद्योगिक परामर्श के कार्य क्षेत्र को बता सकेंगे।
- औद्योगिक परामर्श के आवश्यकता को बता सकेंगे।

- औद्योगिक परामर्श से होने वाले लाभों को बता सकेंगे।

प्रस्तावना

औद्योगिक परमर्शन मूलतः दो शब्दों से मिल कर बना है | वो दो शब्द है औद्योगिक एवं परामर्शन | परामर्शन के बारे में हमने पूर्व के इकाईयों में पढ़ रखा है इसलिए यंहां पर हम औद्योगिक शब्द को समझने की कोशिश करेंगे | औद्योगिक शब्द मूलतः उद्योग से बना है जो कि एक संज्ञा शब्द है , जिसका तात्पर्य किसी भी प्रकार के उद्यम या व्यवसाय से है | उद्योग शब्द का विशेषण औद्योगिक होता है |उद्योग भी मूलतः दो पदों से मिल कर बना है उत् एवं योग से मिलकर बना है , जिसका शाब्दिक अर्थ जोडना होना चाहिए किन्तु उत् उपसर्ग के लग जाने से योग शब्द विशिष्ट हो जाता है जिसे समझने के लिए वृहद व्याख्या की आवश्यकता हो सकती है| इस शब्द की सामाजिक एवं दार्शनिक पृष्ठभूमि खंगालने पर हम यह पाते हैं कि आवश्यकता, साधन एवं सद्य का योग ही उद्योग है | यदि आज के परिप्रेक्ष्य में हम विचार करें तो हम पायेंगे कि उद्योग जीविका, समृद्धि एवं सत्ता तीनों के लिए आवश्यक बन चूका है | किसी भी संगठन में समायोजित होने के लिए एक निश्चित स्तर की समायोजन क्षमता की आवश्यकता होती है जिसकी अनुपस्थिति में कोई व्यक्ति अपने आपको समाज या किसी भी संगठन में संयोजित नही कर पता है | इन परिस्थितियों में वे तनाव महसूस करते हैं | ऐसे लोगो को तनाव से उबरने के लिए ही औद्योगिक परामर्शन की आवश्यकता होती है| विभिन्न प्रकार के मनोवैज्ञानिक उपचारों का प्रयोग करके ऐसे लोगों को उनके कार्यस्थान पर समायोजित होने एवं बेहतर कार्य सपादित करने की प्रेरणा प्रदान किये जाते हैं| दुनिया भर के विभिन्न औद्योगिक संस्थानों ने अपने कर्मचारियों को तनावों से बचाने के लिए कर्मचारी सहयोग (Employee Assistance)की वकालत की है| मायो (Mayo, 1936) नामक विद्वान ने कर्मचारी सहयोग पर बल देते हुए कहा कि " एक प्रसन्न कर्मचारी एक उपयोगी कर्मचारी होता है *(A happy worker is a productive worker)'* कर्मचारी सहयोग की निम्न प्रमुख विशेषताएं बतायी गयी है

१. उद्देश्य : कर्मचारी नियमन
२. टीम : सामाजिक कार्यकर्ता , व्यावसायिक मनोविज्ञानी, व्यक्तिगत अधिकारी, एवं मनोचिकित्सक
३. कार्य शैली : टीम भावना के साथ सबको सहयोग करते हए समस्या का निदान खोजना |

यदि हमें संक्षेप में यह जानना हो कि औद्योगिक परामर्श क्या है तो हम यह कह सकते हैं कि औद्योगिक परामर्श उद्योगों तथा संस्थानों में कार्यरत व्यक्तियों की अनेकानेक समस्याओं के निदान के लिए विभिन्न सिद्धांतों एवं प्रणालियों को अपनाता है|

निर्देशन कार्य में परामर्श का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है इसलिए इसे निर्देशन सेवाओं का ह्रदय कहा जाता है | वेबस्टर शब्द कोष में परामर्श को पूछताछ , पारस्परिक तर्क-वितर्क या विचारों का पारस्परिक विनमय माना गया है | (Consultation and mutual interchange of ideas in counselling)

रेन ने " परामर्श दो व्यक्तियों के मध्य गत्यात्मक तथा उद्देश्यपूर्ण सम्बन्ध है जिसकी प्रक्रिया छात्र को आवश्यकतानुसर अलग-अलग होती है किन्तु इसमें परामर्शदाता और परामर्शी की समान भागीदारी होती है किन्तु उसका केन्द्र परामर्शी द्वारा स्वयं स्पष्टीकरण और आत्म निश्चित होती है (Counselling is dynamic and purposeful relationship between two people in which procedures vary with the nature of the students need , but in which there is always mutual participation by the counsellor and the counselee with focus upon self-clarification and self-determination by the student.

कार्य क्षेत्र में तनाव (Stress at Workplace)

तनाव (Stress) मूलतः मनःस्थिति से उपजा विकार है जो मनःस्थिति एवं परिस्थिति के बीच असंतुलन एवं असामंजस्य के कारण उत्पन्न होता है। तनाव एक द्वन्द है, जो मन एवं भावनाओं में गहरी दूरी पैदा करता है। तनाव अन्य अनेक मनोविकारों का प्रवेश द्वार है। उससे मन अशान्त, भावना अस्थिर एवं शरीर अस्वस्थता का अनुभव करते हैं। ऐसी स्थिति में हमारी कार्यक्षमता प्रभावित होती है और हमारी शारीरिक व मानसिक विकास यात्रा में व्यवधान आता है। प्रायः यह देखा जाता है कि उद्योग जगत के किसी भी उद्यम क्षेत्र में काम करने वाले लोग चाहे अनचाहे विभिन्न प्रकार के अवसादों से ग्रस्त रहते है | के इसके पीछे विभिन्न प्रकार मनोउस उद्यम क्षेत्र के अधिकारियों |सामाजिक कारण विद्यमान रहते हैं -
कार्य क्षमता में |के तमाम प्रयासों के बावजूद भी उनके कार्य क्षमता में यथोचित वृद्धि नहीं हो पाती है |वृद्धि न होने के पीछे तमाम कारण है

१. आर्थिक स्थिति एवं कार्य क्षमता में सकारात्मक सम्बन्ध होता है |
२. नकारात्मक समूह गतिकी
३. कार्य- संस्कृति का अभाव जिससे कि कार्य करने वाले कर्मचारी भी हतोत्साहित होते है|

तनाव के कारण .२व्यक्तिगत कारण .१ |कार्य क्षेत्र में तनाव के मूलतः तीन प्रकार के कारण होते हैं : संगठनात्मक कारण ३| सामाजिक कारण .

१: व्यक्तिगत कारण. कार्य क्षेत्र में तनाव के बहुत से व्यक्तिगत कारण होते हैं प्रायः यह देखा गया है कि | |विभिन्न प्रकार शारीरिक समस्याओं के चलते व्यक्ति अपने कार्यों पर ठीक से ध्यान नहीं दे पाता है प माईग्रेन से , शारीरिक समस्याओं में सिर में दर्द होना ीड़ित होना पीठ दर्द से पीड़ित होना आदि , |प्रमुख हैं

२इनमे |कार्य क्षेत्र में तनाव के बहुत से मनोवैज्ञानिक कारण भी हो सकते हैं : मनोवैज्ञानिक कारण . |डिप्रेशन से कार्य क्षमता में गिरावट या फिर गम्भीर रूप से मूर्छा आ जाना हैं

३ए आर्थिक : सामाजिक कारण .वं सामाजिक दुष्परिणाम सामाजिक कारणों में प्रमुख हैं जाति | |आधारित व्यवहार या फिर गरीब होना सामाजिक एवं आर्थिक कारणों में प्रमुख है

अभ्यास- प्रश्न

- औद्योगिक परामर्श के संप्रत्यय को स्पष्ट करें ?
- कार्यक्षेत्र में तनाव के कारणों को स्पष्ट करें |

कार्य क्षेत्र में तनाव प्रबंधन (Stress Management at Workplace)

तनाव प्रबंधनका तात्पर्य मानसिक तनाव में कमी लाना जिससे कि व्यक्ति अपने कार्यक्षमता के अनुसार कार्य कर सके यहां तनाव से मुकाबला करने के कई उपाय| हैं। समय प्रबंधन की कुछ तकनीके किसी व्यक्ति के तनाव को नियंत्रित करने में मदद कर सकती हैं। आकृति में जब मांग उच्च हो तो प्रभावी तनाव प्रबंधन सीखने की सीमा तय करने के लिए दूसरों की कुछ मांगों को |कर देना चाहिये "ना" निम्नलिखित तकनीक को हाल ही में कनाडा के मेडिकल एसोसिएशन के जर्नल "डीस्ट्रैसेलाइज़र" द्वारा डब किया गया है। एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा "डीस्ट्रैसेलाइज़र" एक व्यक्ति के तनाव को दूर किया जा सकता है। साधारण तौर पर कार्य क्षेत्र में तनाव प्रबंधन के निम्न लिखित तरीके अपनाये जा सकते हैं|

- औटोजेनिक प्रशिक्षण (Autogenic Training)
- संज्ञानात्मक थेरेपी (Cognitive Therapy)
- संघर्ष का हल निकालना Bringing out the solution of Conflict)
- व्यायाम (Exercise)
- ध्यान (Meditation)
- गहरी सांस (Deep Breath)
- नूट्रौपिक्स (Nutropix)
- विश्राम तकनीक (Rest technique)
- कलात्मक अभिव्यक्ति (Artistic Expression)
- आंशिक विश्राम (Partial Rest)
- प्रगतिशील विश्राम (Developmental Rest)
- स्पा (Spa)
- प्रकृति के साथ बिताया गया समय (Time spend with nature)
- प्राकृतिक चिकित्सा (Natural treatment)
- चिकित्सकीय वैकल्पिक उपचार
- समय प्रबंधन (Time management)
- कुछ प्रकार का आरामदायक संगीत सुनना विशेषत:
  - नए युग का संगीत (Modern Music)
  - शास्त्रीय संगीत (Classical Music)
  - साइकेडेलिक संगीत (Cycedelic Music)

अभ्यास- प्रश्न

- कार्य-क्षेत्र में तनाव प्रबंधन से आपका क्या अभिप्राय है ?
- कार्य-क्षेत्र में तनाव प्रबंधन करने के लिए किन- किन तरीकों को अपनाया जा सकता है ?
- डीस्ट्रैसेलाइज़र से आप क्या समझते हैं?
- तनाव की अवस्था में किसी के मांगों को नकारने के महत्वा को प्रतिपादित करें

कार्य क्षेत्र में तनाव प्रबंधन में परामर्शक की भूमिका (The role of counselors in stress Management at workplace)

बड़े या छोटे दोनों तरह के उद्यम क्षेत्रों में कर्मचारियों के तनाव प्रबंधन हेतु परामर्शक की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है | परामर्शक व्यक्तिगत रूप से तनावग्रस्त कर्मचारियों की समस्यायों को सुनता है एवं उन्हें उस तनाव से निकलने के उपाय भी सुझाता है | परामर्शदाता अधिकारियों एवं मालिकों से भी बात करके उनकी आवश्यकताओं को समझ कर किसी भी समस्या का निदान करने की कोशिश करता है |

कार्य स्थल पर परमर्शन की आवश्यकता (The need of counseling at workplace) : कार्यस्थल पर परमर्शन संगठनात्मक संस्कृति को बेहतर ढंग से समझने में मदद करता है। यह अपनी स्वयं की क्षमता का एहसास और पारस्परिक प्रभाव को बढ़ाने में कर्मचारियों को सक्षम बनाता है। काउंसिलिंग के वजह से ही उनकी कुंठाओं और समस्याओं पर वृहद चर्चा की जाती है जिससे एक स्वस्थ माहौल बनता है। यह विभिन्न प्रकार के समस्यायों से निजात दिला कर हमें एक बेहतर इंसान बनाने के रास्ते को प्रशस्त करती है |

आद्योगिक परामर्श में आने वाली बाधाएं (The hindrances in industrial counseling) : परामर्श के लिए सबसे बड़ी बाधा कर्मचारियों के बीच या तो नहीं या तो बहुत कम बातचीत की अनुमति देने वाला एक कठोर संगठनात्मक संरचना है। समय की कमी होना भी एक बहुत महत्वपूर्ण बाधा है क्योंकि परामर्श क लिए अविभाजित और निर्बाध ध्यान की आवश्यकता होती है । अनुचित और अप्रभावी संचार भी परामर्श में बाधा उत्पन्न करता है| कर्मचारियों की ओर से विश्वास की कमी एक प्रमुख बाधा है। यदि काउंसलर अपने दृष्टिकोण में वास्तविक नहीं है तो कर्मचारी स्वयं को ठगा महसूस महसूस करते हैं , जिससे परामर्शन बुरी तरह विफलहो जाता है।

औद्योगिक परामर्श के लिए अनिवार्य तत्व: (Essential elements of Industrial Counselling) : औद्योगिक परामर्श की सफलता बहुत सारे तत्वों पर निर्भर करती है जो निम्न लिखित हैं |

समस्या को पहचानें (Identify the problems) : स्वयं कुछ भी विश्लेषण करने से पहले कर्मचारी को अपनी समस्या का विस्तृत वर्णन करने के लिए एक मौका देना चाहिए। क्योंकि कोई भी काउंसेलर बिना पूरी बात सुने ठीक निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकता | विश्लेषण समस्या के कारणों में शामिल हैं , कर्मचारी द्वारा किए गए प्रयासों से इसे दूर करने और विभिन्न उपचारात्मक उपाय उपलब्ध करने के लिए।

सम्बन्ध स्थापित करना (Establishing Rapport): सही परामर्श देने के लिए सबसे आवश्यक तत्व है सही जानकारी को इकट्ठा करना |सही जानकारी के अभाव में सटीक परामर्श देना संभव नहीं हो सकता है | कर्मचारी अपने मन के गांठों को परामर्शदाता के सामने खोल सके इसके लिए सबसे आवश्यक है कर्मचारी एवं परामर्शदाता के मध्य सुरुचिपूर्ण सम्बन्ध स्थापित होना | यदि एक बार कर्मचारी को यह विश्वास हो गया कि परामर्शदाता मेरी समस्याओं का हल खोज सकता है तो वह निश्चित रूप से अपने व्यथा सही- सही परामर्शदाता के समक्ष रखेगा |

सुनना और अवलोकन करना (Listening and observing): ध्यान से सुनना और बारीकी से अवलोकन करना ये दो परामर्शन के बहुत ही अनिवार्य एवं महत्वपूर्ण तत्व है| समस्याग्रस्त कर्मचारी की समस्यायों को ध्यान से सुन लेने मात्र से ही कर्मचारी के मनस को शांति मिल जाती है इसके साथ ही साथ परामर्श देने वाले को वास्तविक वस्तुस्थिति का भी पता चलता है | सुनने के दौरान मुख्य ध्यान घटनाओं पर केंद्रित न होकर भावनाओं पर होना चाहिए और कर्मचारी के कथन को अपने ढंग से व्याख्यायित भी किया जाना चाहिए |

समस्या कथन को उद्देश्य कथन में परिवर्तन(Transform problem statements into goal statements) : परामर्शन के अगले कदम पर हमें समस्या कथन को उद्देश्य कथन में परिवर्तित करना चाहिए | इसी समय यह भी ध्यान देना चाहिए की परामर्श दाता किस उपागम से उद्देश्यों को प्राप्त करने की कोशिश करेगा | परामर्श दाता को समस्या से निपटने का एक सुलझा हुआ मार्ग भी सुझाना चाहिए |

प्रगति का मूल्यांकन (Evaluation of improvement) : परमर्शन प्रक्रिया का सबसे आख़िरी कदम समस्याग्रस्त व्यक्ति के प्रगति अर्थात वह अब कितना राहत महसूस कर रहा है से है |

अभ्यास प्रश्न

- कार्यक्षेत्र में तनाव प्रबंधन में परामर्शक की भूमिका को स्पष्ट करें |
- कार्य स्थल पर परमर्शन की आवश्यकता पर प्रकाश डालें |
- औद्योगिक परामर्श के लिए अनिवार्य तत्वों की व्याख्या करें |
- समस्या कथन को उद्देश्य कथन में परिवर्तन से आप क्या समझते हैं ? स्पष्ट करें |
- औद्योगिक परामर्श में "सम्बन्ध स्थापित करना" के महत्व को स्पष्ट करें |

कर्मचारी प्रशिक्षण (Employee Training)

काउंसलिंग करने का दौरान यदि परामर्शदाता को यह लगता है कि उसके अंदर तनाव मूलतः ठीक से कार्य न करने कारण पैदा हो रहा तो वह अधिकारियों को औद्योगिक प्रशिक्षण कि सलाह दे सकता है | यह प्रशिक्षण उन्हें उनके कार्यों में दक्ष बनाने क लिए दिया जाता है | औद्योगिक प्रशिक्षण का तात्पर्य कर्मचारियों के प्रशिक्षण से है जिससे कि उन्हें संगठन या उद्यम- क्षेत्र की मूलभूत आवश्यकताओं से परिचित कराया जाता है | इस तरह के प्रशिक्षणों में आवश्यकतानुसार नवनियुक्तएवं पुरातन दोनों तरह के कर्मचारियों को शामिल किया जा सकता है|

सीगल (Siegel,1969) ने औद्योगिक प्रशिक्षण को परिभाषित करते हुए कहा ही कि " प्रशिक्षण का तात्पर्य उन औद्योगिक प्रयासों से है जिनके माध्यम से कर्मचारियों को संतोषजनक कार्यनिष्पादन के लिए अत्यधिक उपयुक्त मनोवृति , कौशल तथा ज्ञान प्रदान किये जाते हैं |

औद्योगिक प्रशिक्षण के चरण (Steps in industrial training) – आद्योगिक प्रशिक्षण के मूलतः निम्न चार चरण है

१. उत्तेजना (Stimulus)

२.प्रतिक्रिया (Response)

३. प्रेरणा (Motivation)

४. पुरस्कार या प्रोत्साहन (Award or incentive)

१. उत्तेजना (Stimulus): उत्तेजना से तात्पर्य उस सूचना (message) से है जिसके लिए प्रशिक्षण का आयोजन किया जाना है | पशिक्षण के प्रतःम चरण में ही प्रशिक्षण देने वाले एवं प्रशिक्षण लेने वाले कर्मचारी को मुख्य सूचना से अवगत करवाया जाना चाहिए |

२.प्रतिक्रिया (Response): प्रशिक्षण के दुसरे चरण में प्रतिक्रियाओं की गिनती की जाती है| इसका तात्पर्य उन क्रियाओं से है जिन्हें प्रशिक्षण के माध्यम से कर्मचारियों को सीखाना उद्देश्य होता है |

३. प्रेरणा (Motivation):यह प्रशिक्षण का तृतीय चरण है | प्रेरणा का तात्पर्य प्रशिक्षण देने वाला अथवा प्रशिक्षण देने वाली कंपनी ऐसे व्यक्तियों का चयन प्रशिक्षण देने के लिए करती है जिनमें अपेक्षित कार्य के प्रति उपयुक्त प्रेरणा होती है| इसका दूसरा पहलू ये है कि जिसके अंदर उपयुक्त प्रेरणा नहीं होती है उसके अंदर इसके जागृतीकरण का कार्य भी किया जाता है |

४. पुरस्कार या प्रोत्साहन (Award or incentive): प्रशिक्षण के चौथे एवं अंतिम चरण में पुरस्कार का आयोजन किया जाता है जिससे कि कर्मचारियों में मन में उत्साह बना रहे और वे कुंठा से ग्रस्त हुए बिना अपना काम करते रहें |

अभ्यास प्रश्न

- कर्मचारी प्रशिक्षण से आप क्या समझते हैं |
- सीगल (Siegel,1969) ने आद्योगिक प्रशिक्षण को कैसे परिभाषित किया है ?
- औद्योगिक प्रशिक्षण के कितने चरण हैं ?
- औद्योगिक प्रशिक्षण के चारों चरणों की व्याख्या करें ?
- औद्योगिक प्रशिक्षण में प्रेरणा का क्या महत्व है ? स्पष्ट करें |

औद्योगिक परामर्श के लक्ष्य (Goals of Industrial counselling)

औद्योगिक परामर्श के कुछ महत्वपूर्ण लक्ष्य हैं जो निम्नलिखित है |

१. कर्मचारी को अपनी समस्याओं को समझने तथा स्वयं समाधान की योजनाएं बनाने में सहायता करना |

२. कर्मचारी को अपने स्वयं के विकास से सम्बंधित लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायता प्रदान करना |

३. कर्मचारी को अपने परिवेश के साथ सामंजस्य स्थापित करने में सहायता करना |

४. कर्मचारी को स्वयं की रुचियों , योग्यताओं एवं अवसरों आदि को समझकर अपने कों अधिक अच्छी तरह जानने में सहयता प्रदान करना

५. कर्मचारी को अधिक परिपक्व और अधिक क्रियाशील बनाने में सहायता करना |

अभ्यास प्रश्न

- औद्योगिक परामर्श के लक्ष्य का वर्णन कीजिये |

औद्योगिक परामर्शन के प्रयोजन (Purpose of Industrial Counseling)

औद्योगिक परामर्शन के निम्न प्रयोजन हैं

१. आत्म मूल्यांकन (Self- Appraisal)

२. प्रोत्साहन (Encouragement)

३.आवश्यक सूचनाओं की पूर्ति (Supply of necessary information)

४.नियोजन (Planning)

५. आत्म-अन्वेषण (Introspection)

६. व्याख्या करना (Interpretation)

७. विश्लेषण (Analyses)

८.स्पष्टीकरण (Clarification)

९.स्वीकृति (Approving)

१० प्रवलन (Re-inforcing)

११. मूल्यांकन (Evaluation)

१. आत्म- मूल्यांकन (Self-Appraisal): औद्योगिक क्षेत्र में परामर्शन का उद्देश्य उस क्षेत्र में काम करने वाले कर्मचारियों को स्वयं को समझने में सहायता प्रदान करना है| इस हेतु परामर्शदाता विभिन्न प्रकार के प्रश्नों की सहायता से कर्मचारी को उसकी कुंठाओं से उबरने का अवसर प्रदान करता है| ब्राडल का मत है कि परामर्शदाता को आत्म मूल्यांकन के लिए ऐसे प्रश्न बनाने चाहिए जिससे कि कर्मचारी का ध्यान उस ओर खींच सके जो उसके लिए महत्वपूर्ण हैं |

२.प्रोत्साहन (Encouragement):प्रोत्साहन द्वारा कर्मचारियों की मानसिक एवं नैतिक शक्ति को मजबूती प्रदान करने की कोशिश की जाती है | यदि परामर्श के आरम्भ में ही संपर्क अच्छी तरह से स्ताहापित किया जा चूका है तो प्रोत्साहन संबधी कार्य सरलता एवं सुगमतापूर्वक किया जा सकता है |

३.आवश्यक सूचनाओं की पूर्ति (Supply of necessary information): परामर्श प्रक्रिया के समय परामर्शदाता को प्रशिक्षण सुविधा या व्यवसाय के बारे में विशिष्ट सूचना की आवश्यकता अनुभव हो सकती है | परामर्शदाता को इतने प्रभावशाली ढंग से सूचना देनी चाहिए कि परामर्शदाता का उद्देश्य परामर्शी के सोच को विकसित करना तथा अधिकतम विकास के लिए संभावित उपयोगों के बारे में सुझाव देना है |

४.नियोजन (Planning): औद्योगिक परामर्श का मुख्य कार्य कर्मचारियों को स्वयं से संबंधित नियोजन में सहायता देना है| इस नियोजन की रूपरेखा स्व-मूल्यांकन, विशेषज्ञों से एकत्रित सूचनाओं तथा

परामर्शदाता द्वरा प्रदत्त प्रोत्साहन पर आधारित होती है | इस सम्पूर्ण कार्य के लिए अच्छे नियोजन की आवश्यकता होती है|

५. आत्म-अन्वेषण (Introspection):परामर्श प्रक्रिया में परामर्श दाता का यह कतर्व्य है कि वह परामर्शी से अधिक से अधिक सूचनाएं प्राप्त करे | परामर्शी को इस प्रक्रिया में निष्क्रिय श्रोता के रूप में न् रहकर एक क्रियाशील अभिकर्ता के रूप में होना चाहिए | समस्या के समाधान में कर्मचारी का सहयोग अतिआवश्यक है |

६. व्याख्या करना (Interpretation): परामर्शदाता को चाहिए कि वो कर्मचारी का पर्याप्त समय तक अवलोकन करके और आवश्यकतानुसार मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का उपयोग करके कर्मचारी की योग्यताओं और क्षमताओं का निर्धारण करता है तथा परीक्षण काल में उनको इनका ज्ञान भी कराता है |

७. विश्लेषण (Analyses): परामर्श प्रक्रिया का सबसे अधिक महत्वपूर्ण बिंदु विश्लेषण है| कर्मचारी को अपनी योग्यताओं एवं क्षमताओं के ज्ञान के साथ –साथ अपनी विशेषताओं का विश्लेषण करने में सक्षम होना चाहिए | परामर्शदाता इस कार्य के लिए अवलोकन और मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का प्रयोग कर सकता है |

८. स्पष्टीकरण (Clarification): व्याख्या एवं स्पष्टीकरण में अंतर करना कठिन है| स्पष्टीकरण व्याख्या का एक अंग है| परामर्शदाता के लिए प्रत्यय को अधिक बोधगम्य बनाने की क्रिया स्पष्टीकरण है|

९.स्वीकृति (Approving): कुछ मनोवैज्ञानिकों का मत है कि परामर्शदाता कों प्रत्येक कार्य स्वयं करना चाहिए और परामर्शदाता को अपनी स्वीकृति नहीं देनी चाहिए | उनके मतानुसार जब कोई कर्मचारी अपरिवर्तनीय परिस्थितयों के करण अपनी कार्यप्रणाली कों बदलना चाहता है तो उसको उस पर पुनः विचार करने की स्वीकृती देनी चाहिए | परामर्श प्रक्रिया का अंतिम उद्देश्य कर्मचारी की सफलता है |

१० प्रवलन (Re-enforcing): प्रेरणा की उपस्थिति और क्रमिक सफलता का ज्ञान अधिगम प्रक्रिया के महत्वपूर्ण अंग है कुछ मनोवैज्ञानिकों ने प्रवलन के स्थान पर पुरस्कार और दंड शब्द का प्रयोग किया है | परामर्शदाता कों कर्मचारी की सहायता ऐसे कार्य को चुनने के लिए करनी पड़ती है जिसको करने में वह सर्वथा सक्षम हो |

११. मूल्यांकन (Evaluation): कर्मचारियों को ठीक ढंग से कार्य करने के प्रेरणा मिले एवं कमियों को दूर करने के लिए ठीक तरीके से फीडबैक भी दिया जाय| इसके लिए कार्यों का ठीक ढंग से मूल्यांकन भी किया जाना अपेक्षित है |

अभ्यास प्रश्न

औद्योगिक परामर्शन के प्रयोजन की व्याख्या करें |

औद्योगिक परामर्शन में मूल्यांकन के महत्व को स्पष्ट करें |

औद्योगिक परामर्शन में प्रवलन (Re-enforcing) के महत्व को स्पष्ट करें |

औद्योगिक परामर्शन में व्याख्या करना (Interpretation) के महत्व कों प्रतिपादित करें |

औद्योगिक परामर्श की प्रक्रिया में आत्म मूल्यांकन के महत्व को स्पष्ट ?

औद्योगिक परामर्श दाता की आवश्यक विशेषताएँ (Essential characteristics of Industrial counsellor)

औद्योगिक क्षेत्र में परामर्श देने के लिए परामर्शदाता में कुछ निश्चित विशेषताएं होनी चाहिए जो निम्नलिखित हैं

- संवेदनशीलता (Sensitivity): परामर्शदाता कों परामर्शी की आवश्यकताओं के प्रति उसी प्रकार संवेदनशील होना चाहिए जिस प्रकार आँखे प्रकाश के प्रति संवेदनशील हैं|
- नैतिक व्यवहार (Moral Behavior) : परामर्शन प्रक्रिया के दौरान परामर्शदाता परामर्शी से उसकी अत्यंत गुप्त बातें या सूचनाये प्राप्त करता है|ये बातें बिना परामर्शी के स्वीकृती के किसी अन्य के सामने प्रकट नहीं करनी चाहिए|
- लचीलपन (Flexibility) : परामर्शदाता कों कभी भी कठोर नहीं होना चाहिए|उसे परामर्शी के प्रति सचेत होना चाहिए और तदनुसार अपने व्यवहार में परिवर्तन करना चाहिए|
- अवबोध (Understanding): परामर्शदाता में परामर्शी की समस्याएं समझने की योग्यता होनी चाहिए|उसमे समस्यायों कों समझने की सूझ होनी चाहिए|
- स्वीकृति (Acceptance) : परामर्शी के पास परामर्श या सहायता प्राप्त करने के लिए आता है| अतः परामर्शदाता कों उसकी समस्याओं की गंभीरता कों स्वीकार करना चाहिए|
- नेतृत्व (Leadership): परामर्शदाता में नेतृत्वा के भी गुण होने चाहिए | जिससे की वो कर्मचारियों का ठीक ढंग से नेतृत्व भी कर सके|
- स्वस्थ तथा प्रभावशाली आकृति (Healthy and impressive Personality) : परामर्शदाता स्वस्थ , मृदुभाषी, प्रभावशाली व्यक्तित्व वाला, चेतनावान तथा सहनशील होना चाहिए|
- बौद्धिक क्षमता (Intellectual Ability) : परामर्शदाता कों प्रतिभावान तथा कुसग्रबुद्धिवाला होना चाहिए|
- व्याव्सायिक निष्ठा (Professional Dedication): परामर्शदाता कों अपने व्यवसाय के प्रति निष्ठावान होना चाहिए|उसे कर्मचारियों की समस्याओं के सुनने तथा सुझाव देने के लिए सदैव तत्पर रहना चाहिए|
- समायोजित व्यक्तित्व (Adjusted Personality) : परामर्शदाता कों आत्मज्ञान होना चाहिए| उसे सदैव अपनी कमजोरियों आता सीमाओं के प्रति सचेत रहना चाहिए | आलोचना का स्वागत करने वाला तथा आत्म विश्वासी होना चाहिए|

- कुशल मनोवैज्ञानिक (Good psychologist) : परामर्शदाता कों एक कुशल शिक्ष्मनोविग्यानी होना चाहिए | उसे संगठनात्मक मनोविज्ञान का विशेषज्ञ भी होना चाहिए | उसके पास मानव व्यवहार के सिद्धांतों का ज्ञान होना चाहिए|

- कुशल प्रबंधक (Good Manager): परामर्शदाता में कुशल प्रबंधक के गुण होने चाहिए | उसे मीटिंग में अधिकारीयों, मालिकों एवं कर्मचारियों सबका समर्थन प्राप्त करने में कुशल होना चाहिए |

अभ्यास प्रश्न

- औद्योगिक परामर्श दाता में कौन-कौन सी आवश्यक विशेषताएँ होनी चाहिए |
- औद्योगिक परामर्श दाता का व्यवहार लचीला होना चाहिए से आप क्या समझते हैं ?
- "औद्योगिक परामर्श दाता एक कुशल प्रबंधक होना चाहिए" कथन के अभिप्राय कों स्पष्ट करें |
- "औद्योगिक परामर्श दाता के अंदर व्यावसायिक निष्ठा होनी चाहिए" कथन से आप कितने सहमत हैं? अपने शब्दों में उदाहण सहित स्पष्ट करें |
- यदि परामर्शदाता का व्यक्तित्व आकर्षक एवं प्रभावशाली है तो इसका कर्मचारियों पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

सारांश:

आज के तनाव भरे माहौल में औद्योगिक क्षेत्रों में काम करने वाले कर्मचारियों के समायोजन के एक बड़ी समस्या है ही परामस | जिससे निपटने का एक मात्र रास्ता सही परामर्श एवं निर्देशन का ही है|र्श न केवल कर्मचारियों कों तनाव से निकलता है बल्कि ये उनको अंदर आत्मविश्वास भी पैदा करता है जिसके , बस शर्त सिर्फ इतनी है कि |सहारे कर्मचारीयों की कार्यशैली एवं कार्यक्षमता दोनों में ही वृद्धि होती है म्मेदारपरामर्शदाता अपने कार्य में निपुण हो एवं अपनी जिि‍यों का निर्वहन करे |

शब्दावली:

परमर्शन वितर्क या विचारों का पारस्परिक विनिमय माना -पारस्परिक तर्क , परामर्श मूलतः पूछताछ :
|गया है

परामर्शदाता कर्मचारी की समस्याओं कों सुनता है एवं   /परामर्शदाता वह व्यक्ति होता जो परामर्शी :
|समाधान सुझाता है

उद्योग: उद्योग मूलतः दो पदों से मिल कर बना है वो दो पद हैं उत् एवं योग से मिलकर बना है जिसका , |शाब्दिक अर्थ जोडना होना चाहिए किन्तु उत् उपसर्ग के लग जाने से योग शब्द विशिष्ट हो जाता है

अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथसूची

Rogers, C.R. (1942). Counselling and Psychotherapy, Boston, Houghton, Mittlin.
Ray. A. and Asthana, M. (2005). Guidance and Counselling, Concepts, Areas and Approaches, Patna, Motilal Banarsidas Co.Ltd.
सिंह (2001) ,अरूण कुमार ,शिक्षा मनोविज्ञानटर्सlब्यूपब्लिशर्स एड डिस्ट्री ,भारती भवन ,पटना ,
सिंहअर ,ूण कुमार (2001) ,संज्ञानात्मक मनोविज्ञानमोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स ,वाराणसी , टर्सlब्यूएड डिस्ट्री
सिंह (2001) ,अरूण कुमार ,उच्चतर नैदानिक मनोविज्ञान)Advanced Clinical Psychology) , टर्सब्यूमोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स एड डिस्ट्री ,वाराणसी
सिंहअरूण कु ,मार (2001) ,उच्चतर मनोविज्ञानटर्सlब्यूपब्लिशर्स एड डिस्ट्री ,भारती भवन,पटना ,
Lewis, E.C. (1970). Psychology of Counselling, New York, Holt Rienehant and Winston.

निबंधात्मक प्रश्न:-

1. औद्योगिक कार्यक्षेत्र में तनाव प्रबंधन में परामर्शक की भूमिका को उदहारण सहित स्पष्ट करें |
2. औद्योगिक क्षेत्र में परामर्श देने के लिए परामर्शदाता में कौन- कौन सी विशेषताएं होनी चाहिए| विस्तार से लिखें ।
3. औद्योगिक परामर्शन के कौन कौन से प्रयोजन हैं स्पष्ट करें। ,
4. कर्मचारी प्रशिक्षण से आप क्या समझते हैं कर्मचारी ?प्रशिक्षण के महत्वपूर्ण चरणों की विस्तार से व्याख्या करें।
5. कार्यक्षेत्र में तनाव के कौनकार्यक्षेत्र में तनाव प्रबंधन के उपायों की ? कौन से कारक है- विस्तार से चर्चा करें।

इकाई - 15

महाविद्यालय परामर्श (College Counselling)

इकाई की रूपरेखा

- प्रस्तावना
- उद्देश्य
- महाविद्यालय परामर्श का अर्थ और महाविद्यालयों में परामर्श कार्यक्रम
- महाविद्यालयों में विद्यार्थियों की विशेषताएं
- महाविद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की परामर्शक की भूमिका और आवश्यकताएं
- महाविद्यालयों में निर्देशन कार्यक्रम के लक्ष्य एवं उद्देश्य
- महाविद्यालय परामर्शक की विशेषताए
- सारांश
- अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची
- निबंधात्मक प्रश्न

प्रस्तावना (Introduction)

व्यक्तियों और विद्यार्थियों को उनके व्यक्तित्व के विकास हेतु, समायोजनात्मक समस्याओं के समाधान हेतु अथवा लक्ष्यों के चयन हेतु बाहर से किसी अनुभवी व्यक्ति या सामाजिक संस्था, यथा धार्मिक गुरू का सहयोग सदा से ही प्राप्त होता रहा है। किन्तु बींसवीं शताब्दी में निर्देशन प्रक्रिया द्वारा संगठित रूप में निर्देशन प्रदान किया जाने लगा | संगठित रूप में निर्देशन प्रदान किये जाने की प्रक्रिया का आरम्भ व्यावसायिक निर्देशन के रूप में हुआ। कुछ समय पश्चात माध्यमिक स्तर के विद्यालयों में शैक्षिक, व्यावसायिक एवं व्यक्तिगत निर्देशन के कार्यक्रम आरम्भ किये गये। निर्देशन प्रक्रिया तथा तकनीक और संगठनात्मक प्रणालियों के क्षेत्र में विकास के फलस्वरूप प्राथमिक स्तर के विद्यालयों में भी निर्देशन कार्यक्रमों को अपनाया गया। आज विकसित समाज में कार्यरत विद्यालयों में सभी अवस्थाओं पर निर्देशन सेवाऐं प्रदान की जाती है। विभिन्न स्तर के विद्यार्थियों की दशाऐं एक दूसरे से पृथक रूप की होती है अतः प्राथमिक, माध्यमिक एवं कॉलेज स्तरीय शैक्षिक संस्थाओं में निर्देशन कार्यक्रम के प्रकार्य, निर्देशन कार्मिक, संगठनात्मक स्वरूप आदि में अन्तर होता है। अतः तीन स्तरों पर निर्देशन सेवाओं का स्वरूप् का अलगअलग वर्णन वांछित हो जाता है। इस पाठ में हम महाविद्यालय निर्देशन के बारे में -विसृतृत जानकारी प्राप्त करेगे |

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- महाविद्यालय परामर्श का अर्थ एवं महाविद्यालयों में परामर्श कार्यक्रम को समझ सकेंगे |
- महाविद्यालयों में विद्यार्थियों की विशेषताएं को समझ सकेंगे|
- महाविद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की परामर्शक आवश्यकताएं को समझ सकेंगे|
- महाविद्यालयों में परामर्श कार्यक्रम के लक्ष्य एवं उद्देश्य को समझ सकेंगे|
- महाविद्यालय परामर्शदाता की आवश्यकता और गुण को समझ सकेंगे |

महाविद्यालय परामर्श का अर्थ (Meaning of College Counselling)

परामर्श का अर्थ आप पिछली इकाईयों में पढ़ चुके हैं ,महाविद्यालय उच्च शिक्षण संस्थान होता है| वह मुक्त , एक और जन्हाँ | जन्हाँ छात्र अपनी विद्यालय की शिक्षा पूर्ण करने के बाद प्रवेश लेता है वही दूसरी ओर अब उसे सामाज ,वातावरण में प्रवेश लेता हैिकमानसिक आदि समस्याओं का भी , जिन्हे समय समय पर ,नई विभिन्न आवश्यकताए होती हैं-ऐसे में छात्रों की नित | हल खोजना पड़ता है उसके लिए इन आवश्यकताओ की , चूँकि छात्र किशोरावस्था में होता है | परामर्श की ज़रूरत होती है जिससे उसमें किसी भी प्रक ,पूर्ति करनी चाहियोर का भटकाव उत्पन्न ना हो|

महाविद्यालयों में परामर्श कार्यक्रम (Counselling Programme in College)

विगत कुछ दशकों में राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य में व्यापक परिवर्तन घटित हुआ है। जनसंख्या वृद्धि निरन्तर हो रही है। उद्योग जगत में स्वचालित मशीनो और कम्प्यूटरों का उपयोग हो रहा है जिससे रोजगार के अवसर घटे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा तथा माँग में कमी के कारण उद्योग जगत अपने लाभ को संरक्षित करने के उद्देश्य से कर्मचारियों को कार्य मुक्त कर रही हैं। विकास की दर में कमी आयी है, अभिष्ट आर्थिक विकास दर प्राप्त नहीं हो पा रही है। रोजगार के उपलब्ध अवसरो के लिए विशिष्ट शिक्षा, प्रशिक्षण और अनुभव की माँग की जा रही है। आर्थिक, औद्योगिक एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भूमण्डलीकरण का प्रभाव विविध रूपों में देखा जा रहा है।

आज स्नातक और स्नातकोत्तर उपाधि प्रदान करने वाले महाविद्यालयों विश्वविद्यालयों एवं तकनीकी , ,पहुंच गई है। विद्यार्थियों के सामने शैक्षिक संस्थानों में अध्ययनरत छात्रों की संख्या लाखों में समायोजनात्मक और अन्य प्रकार के संकट विकराल रूप् में विद्यमान है। परामर्श ,व्यावसायिक

कार्यक्रम राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर की आर्थिक व्यावसायिक एवं औद्योगिक समस्याओं का समाधान नहीं कर सकता है। उन समस्याओं का समाधान उचित अधिकारी द्वारा ही किया जायेगा | लेकिन जब युवा विद्यार्थियों के सामने अनेक प्रश्न चिन्ह एक साथ प्रकट हो रहे हो तब समस्याओं का सामनाकरनासमाधान करने की दिशा में सक्षम बनाए रखने की प्रतिकूल परिस्थितियों के बीच से , अर्जित करने और समायोजन स्थापित कर पाने संबंधी विद्यार्थी के प्रयत्नों अपना मार्ग खोजने सफलता में परामर्श के स्तर से परामर्श कार्यक्रमों के माध्यम से सहयोग दिया जाना महत्वपूर्ण और वांछनीय हो जाता है। उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे छात्रों की संख्या तथा ऐसी शिक्षा प्रदान करने वाले संस्थानों की संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है। शिक्षा के स्वरूप में बदलाव आया है। शिक्षा के क्षेत्र में विशेषज्ञ और विशिष्टताओं की मांग बढ गई है। अभियांत्रिकीफैशन , पत्रकारिता ,कम्प्यूटर ,स्वास्थ्य शिक्षा , अनेक व्यावसायिक पाठ्यक्रम में रोजगार आकर्षण प्रबंधन और अन्य ,बायोटेक्नोलॉजी ,टेक्नोलोजी होने तथा रोजगार मिलने की संभावना प्रबल होने के कारण प्रवेश पाने की इच्छा अधिकतर विद्यार्थियों और उनके माता पिता में भी प्रबल हो गयी है। उत्तर किशोरवस्था एवं आरम्भिक युवावस्था वाले विद्यार्थी अपने करियर के लिए चिन्तितइसलिए |कुण्ठित और तनावग्रस्त देखे जा सकते है ,परेशान , विश्वविद्यालयों तथा उच्च शिक्षा के संस्थानों में ऐसे परामर्श कार्यक्रम की आव ,महाविद्यालयोंश्यकता होती है जो विद्यार्थियों को उनके अध्ययन काल में तथा अध्ययन समाप्त कर चुकने के कुछ वर्ष बाद तक भी उनकी शैक्षिकसमायोजनात्मक एवं उपव्यावसायिक समस्याओं के समाधान हेतु ,व्यावसायिक , उनके प्रयत्नों में सहयोग प्रदान करे । ऐसे परामर्श कार्यक्रम के लक्ष्योंएवं उद्देश्यों के निर्धारण हेतु यहां इन विद्यार्थियों की विशेषताओं और आवश्यकताओं का वर्णन वांछित है।

महाविद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की विशेषताएं (Characteristics Of College Student)-

महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों एवं संस्थानों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की आवश्यकताएं और विशेषताएं अनेक आयु वर्ग अर्थात उनकी विकासात्मक अवस्था की सामान्य विशेषताओं के अतिरिक्त उनकी शिक्षा अवस्था से भी जुडी होती है।

महाविद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थी उत्तर किशोरवस्था तथा आरम्भिक युवावस्था वाले होते हैं। इन विद्यार्थियों की जिन विशेषताओं को रेखांकित किया जा सकता है उनमें से प्रमुख विशेषताएं अधोवर्णित हैं -

1. इस अवस्था के विद्यार्थियों में सांवेगिक अस्थिरता के स्थान पर सांवेगिक स्थिरता पायी जाती है। इनकी रूचियों, जीवन लक्ष्यों, करियर , मैत्री विषयक वरीयताओं में भी स्थिरता पायी जाती है जिसके फलस्वरूप इससे पूर्व की अवस्था की तुलना में इन विद्यार्थियों में बेहतर जीवन समायोजन पाया जाता है।

2. मातापिता के दबावों से अलग हटकर अपने विकल्पों के बारे में स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता - बढ़ जाती है।
3. इन विद्यार्थियों की प्रमुख समस्याएं व्यक्तिगत आकर्षण, सामाजिक एवं पारिवारिक समायोजन, शैक्षिक सफलता एवं यौनिक संबंधों के बारे मेंहोती हैं लेकिन अधिकतर विद्यार्थी इन | समस्याओं के समाधान के तरीके सफलतापूर्वक सीख लेते है |
4. इस अवस्था के विद्यार्थियों में अपने विस्तृत सामाजिक एवं व्यक्तिगत अनुभवों के कारण स्वयं अपने प्रति तथा परिवार, मित्रों और जीवन लक्ष्यों के प्रति यथार्थवादी दृष्टिकोण विकसित होने लगता है।
5. किशोर विद्यार्थियों की तुलना में उत्तरोत्तर इनका सामान्य स्वास्थ्य अधिक अच्छा होता है
6. उत्तर, किशोरवस्था और आरम्भिक युवा वर्ग के विद्यार्थियों में मित्रों की अधिक संख्या के स्थान पर मित्रों की गुणवत्ता पर अधिक बल देने की प्रवृत्ति देखी जाती है।
7. ज्ञान हेतु उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे विद्यार्थियों में बुद्धि प्रयोग वाले खेल जैसे शतरंज, क्विज के लिए आकर्षण बढ़ रहा है। पर्यटक और अन्वेषी दौरे इन्हें आकर्षक लगते हैं। खाली समय में संगीत आदि के लिए शौक दृष्टिगोचर होता है। विभिन्न प्रकार की सूचनाओं का संकलन करना भी एक शौक बन जाता है।
8. उत्तर किशोर वर्ग के व्यक्तियों में तीन महत्वपूर्ण व्यक्तिगत रूचियां पायी जाती है, रंगरूप्-, स्वतंत्रता और जीवन| वृत्ति-
9. इनका आत्म संप्रत्यय अपेक्षाकृत अधिक स्थायी होता है। आत्म उत्साह का स्तर उच्च होता है तथा अनुपयुक्तता की अनुभूति कम होती है।
10. शिक्षा के उच्च स्तर पर होने के कारण इनमें रोजगार संबंधी चिन्ताएं प्रभावी होने लगती है राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय घटनाएं भी इन्हें प्रभावित करती है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. महाविद्यालय परामर्श का अर्थ स्पष्ट कीजिये और साथ ही बताइयें की महाविद्यालयों में परामर्श कार्यक्रम की क्यों आवश्यकता होती है ?

2. महाविद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की क्या विशेषताएं होती हैं ?

महाविद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के लिए परामर्शक की भूमिका (Role Of Counsellor For College Students)

महाविद्यालय में परामर्शक की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है | परामर्शक व्यक्तिगत रूप से छात्रों की समस्याओ को सुनता है एवं उन्हें उस समस्या से निकलने के उपाय भी सुझाता है | परामर्शदाता अभिभावकों , शिक्षकों एवं छात्रों से भी बात करके उनकी आवश्यकताओं को समझ कर किसी भी

समस्या का निदान करने की कोशिश करता है | ऐसे में परामर्शदाता की भूमिका बहुत ही अहम् हो जाती है |

महाविद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की परामर्शक आवश्यकताएं (Need of Counsellor For College Students)-

महाविद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के परामर्श संबंधी आवश्यकताएं शिक्षा, समायोजन और खाली समय हेतु परामर्श के अतिरिक्त व्यावसायिक क्षेत्र की दिशा में विस्तृत हो जाती है। शिक्षा के प्रथम चरण में होने के कारण विद्यार्थी स्वाभाविक रूप में अगली अवस्थाव्यावसायिक स्थापन के लिए - चिंतित होता है। इन विद्यार्थियों की प्रमुख आवश्यकताओं का संक्षिप्त वर्णन निम्न है -

1. **विद्यार्थियों की शैक्षिक परामर्श संबंधी आवश्यकताएं (For Educational Guidance Of Students)-** उच्च शिक्षा प्रदान करने वाली शिक्षण संस्थाओं की समाज और उद्योग जगत में अपनी अपनी पृथक पहचान होती है। अधिक प्रतिष्ठित संस्थाओं में प्रवेश कठिन होता है जबकि अन्य अनेक में प्रशिक्षण की गुणवत्ता संदिग्ध होती हैइसलिए , के बारे में सही सूचना की आवश्यकता होती है। स्नातक विद्यार्थियों को उच्च शिक्षण संस्थाओं के ल (आदि .ए.बी. ऍम /.ए.सी.जैसे एम) स्तर के विद्यार्थियों को परास्नातक पाठ्यक्रमोंिए उपयुक्त संस्थाओं के चयन, प्रवेश प्रणाली, शुल्क संरचना एवं अन्य शर्तों के बारे में सूचना की आवश्यकता होती है।

   वर्तमान पाठ्यक्रम के अन्तर्गत अनेक विशिष्टताएं भी उपलब्ध होता हैं। ऐसे (स्पेशलाइजेशन) विकल्पों के प्रकट होने पर उपयुक्त विकल्प के चयन में परामर्श की आवश्यकता होती है।

   उच्च शिक्षा प्रदान करने वाले अच्छे संस्थानों की संरचना व्यापक एवं जटिल होती है। विद्यार्थियों को भौतिक संरचनाकार्यरत संकाय सदस्यों के बारे में एवं ,उपलब्ध पाठ्यक्रम , संस्था में प्राप्त सुविधाओं जैसे छात्र वृत्ति, चिकित्सा सहायता, पुस्तकालयी सुविधा, निर्देशन सेवा, स्थापना सेवा से संबंधित जानकारियों की आवश्यकता होती है। पुरानी (प्लेसमेंट सर्विस) स्थापित शिक्षण संस्थाओं के कतिपय मूल्य, परम्पराएं और ऊंचे लक्ष्य होते हैं जिनकी विद्यार्थियों द्वारा पूर्ति होनी चाहिए, अतः विद्यार्थियों को इस संदर्भ में पूर्वाभिमुखीकरण की प्राप्ति की आवश्यकता होती है।

2. **समायोजन के क्षेत्र में परामर्श की आवश्यकताएं (Necessity of Counselling in the field of Adjustment)-**

   विद्यार्थियों के लिए संस्था की भौतिक संरचना और शैक्षिक परिवेश के साथ समायोजित होने अतिरिक्त संस्था के सामाजिक परिवेश के साथ समायोजन स्थापित करना भी महत्वपूर्ण होता है। इस अवस्था के विद्यार्थियों के लिए कॉलेज, घर तथा समाज सभी जगहों पर अपनी स्वीकृति की आवश्यकता प्रबल होती है। यदि व्यक्ति को कही किसी परिवेश में स्वीकार नहीं किया जाता

है तो समायोजनात्मक समस्याएं उत्पन्न होने लगती है। हरलॉक ने उत्तर किशोरवय एवं आरम्भिक युवावस्था वाले लोगों में स्वीकृतिअनुमोदन/, स्नेह और उपलब्धि तीन आवश्यकताओं की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। युवकों की प्रसन्नता की मात्रा इन तीन आवश्यकताओं की पूर्ति द्वारा प्रभावित होती है । आजकल महाविद्यालयों में रैगिंग की समस्या भी आम हो गई हैइस दिशा में परामर्श की | जिसका उचित समाधान करना ज़रुरी हो गया है , आवश्यकता महाविद्यालय के स्तर पर अति आवश्यक हो गई है क्योंकि कुसमयोजन की वजह इसके अतिरिक्त आत्महत्या की ओर भी | से बहुत से नशे जैसी प्रवृति में लिप्त होते जा रहे हैं |कुसमयोजन ले जा रहा है

3 व्यावसायिक तैयारी से संबंधित आवश्यकताएं (Vocational Guidance for Students)-

शिक्षा के सर्वोच्च सोपानों पर अध्ययनरत विद्यार्थियों के लिए व्यवसाय हेतु तैयारी शिक्षा का अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग है। जो विद्यार्थी व्यावसायिक पाठ्यक्रम में अध्ययन कर रहे होते हैं उन्हें भी रोजगार क्षेत्र में प्रविष्ट होने से पहले अनेक प्रकार की तैयारियां करनी होती है जबकि | सामान्य पाठ्यक्रमों में अध्ययनरत विद्यार्थियों को तो व्यापक तैयारियां करनी होती है | विद्यार्थियों को व्यवसाय एवं उद्योग जगत के बारे में यह जानने की आवश्यकता होती है कि किस प्रकार की विशेषज्ञता अथवा अतिरिक्त अध्ययन और प्रशिक्षण की मांग की जा रही है।

विद्यार्थियों को कार्य संबंधी अनुभव की आवश्यकता होती है। जिससे कि विभिन्न प्रकार के कार्यस्थलों में से किसी भी क्षेत्र में प्रविष्ट होने से पूर्व उचित दृष्टिकोण का विकास किया जा सके।

महाविद्यालय के स्तर पर ऐसे कैंप का आयोजन कार्य किया जाना चाहिये जिससे छात्र छात्राओं के लिए देश भर में फैली हुई इकाईयों के साथ सम्पर्क स्थापित हो सके जहां उन्हें नवीन | रोजगार की सूचना व अवसर प्राप्त हो सकें।

महाविद्यालय परामर्श के लिए अनिवार्य तत्व (Necessary Elememts For College Counselling)

समस्या को पहचानें (Identification of Problem) : स्वयं कुछ भी विश्लेषण करने से पहले छात्र को अपनी समस्या का विस्तृत वर्णन करने के लिए एक मौका देना चाहिए । क्योंकि कोई भी परामर्शदाता बिना पूरी बात सुने ठीक निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकता | विश्लेषण समस्या के कारणों में शामिल हैं , द्वारा किए गए प्रयासों से इसे दूर करने और विभिन्न उपचारात्मक उपाय उपलब्ध करने के लिए।

सम्बन्ध स्थापित करना (Establishment of Rapport): सही परामर्श देने के लिए सबसे आवश्यक तत्व है सही जानकारी को इकट्ठा करना |सही जानकारी के आभाव में सटीक परामर्श देना संभव नहीं हो सकता है | छात्र अपने मन के गांठों को परामर्शदाता के सामने खोल सके इसके लिए सबसे आवश्यक है छात्र एवं परामर्शदाता के मध्य सुरुचिपूर्ण सम्बन्ध स्थापित होना | यदि एक बार उसको यह विश्वास हो गया कि परामर्शदाता मेरी समस्याओं का हल खोज सकता है तो वह निश्चित रूप से अपने व्यथा सही- सही परामर्शदाता के समक्ष रखेगा |

सुनना और अवलोकन करना (Listening and Observation): ध्यान से सुनना और बारिकी से अवलोकन करना ये दो परमर्शन के बहुत ही अनिवार्य एवं महत्वपूर्ण तत्व है | समस्याग्रस्त छात्र की समस्यायों को ध्यान से सुन लेने मात्र से ही उस के मनस को शांति मिल जाती है इसके साथ ही साथ परामर्श देने वाले को वास्तविक वस्तुस्थिती का भी पता चलता है | सुनने के दौरान मुख्य ध्यान घटनाओं पर केंद्रित न होकर भावनाओं पर होना चाहिए और छात्र के कथन को अपने ढंग से व्याख्यायित भी किया जाना चाहिए |

समस्या कथन को उद्देश्य कथन में परिवर्तन (Converting Problem Statement Into Aim Statement): परमर्शन के अगले कदम पर हमें समस्या कथन को उद्देश्य कथन में परिवर्तित करना चाहिए | **इसी** समय यह भी ध्यान देना चाहिए की परामर्श दाता किस उपागम से उद्देश्यों को प्राप्त करने की कोशिश करेगा | परामर्श दाता को समस्या से निपटने का एक सुलझा हुआ मार्ग भी सुझाना चाहिए |

प्रगति का मूल्यांकन (Evaluation of Improvement): परमर्शन प्रक्रिया का सबसे आख़िरी कदम समस्याग्रस्त व्यक्ति के प्रगति अर्थात वह अब कितना रहत महसूस कर रहा है से है |
प्रोत्साहन (Encouragement)- इसके अतिरिक्त परामर्शदाता को प्रत्येक छात्र का रिकॉर्ड अवश्य रखना चाहिये कई बार छात्र | समय पर वह उसे उचित मार्गदर्शन एवं परामर्श दे सके-जिससे समय | ऐसे में शिक्षक या अन्य किसी की सहायता से ,अनावश्यक भय के कारण अपनी समस्या नहीं बता पाता उसे परामर्श देनाचाहिये |

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. महाविद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के लिए परामर्शक की क्या भूमिका होती है और उनकी क्या परामर्शक आवश्यकता होती है ?
2. महाविद्यालय परामर्श के लिए क्या अनिवार्य तत्व होते हैं ?

महाविद्यालय परामर्शन के प्रयोजन (Purpose of College Counselling)

महाविद्यालय परामर्शन के निम्न प्रयोजन हैं

१ .आत्म) मूल्यांकन-Self Evaluation): महाविध्यालय में परमर्शन का उद्देश्य छात्रों को स्वयं को समझने में सहायता प्रदान करना है| इस हेतु परामर्शदाता विभिन्न प्रकार के प्रश्नों की सहयता से छात्रों को उसकी कुंठाओं से उबरने का अवसर प्रदान करता है| ब्राडल का मत है कि परामर्शदाता को आत्म मूल्यांकन के लिए ऐसे प्रश्न बनाने चाहिए जिससे की वो छात्र का ध्यान उस उस खींच सके जो उसके लिए महत्वपूर्ण हैं |

२) प्रोत्साहन.Encouragement) : प्रोत्साहन द्वारा छात्रों की मानसिक एवं नैतिक शक्ति को मजबूती प्रदान करने की कोशिश की जाती है | यदि परामर्श के आरम्भ में ही संपर्क सही तरह से स्थापित किया जा चुका है तो प्रोत्साहन संबधी कार्य सरलता एवं सुगमतापूर्वक किया जा सकता है |

३) पूर्ति आवश्यक सूचनाओं की.Supply of Necessary Information): परामर्श प्रक्रिया के समय परामर्शदाता को प्रशिक्षण सुविधा या व्यवसाय के बारे में विशिष्ट सूचना की आवश्यकता अनुभव हो सकती है | परामर्शदाता को इतने प्रभावशाली ढंग से सूचना देनी चाहिए कि परामर्शदाता का उद्देश्य परामर्शी के दृष्टीकोण को विकसित करना तथा अधिकतम विकास के लिए संभावित उपयोगों के बारे में सुझाव देना है |

४) नियोजन.Planning) : महाविद्यालय परामर्श का मुख्य कार्य छात्रों को स्वयं से संबंधित नियोजन में सहायता देना है| इस नियोजन की रूपरेखा स्वमूल्यांकन-, विशेषज्ञों से एकत्रित सूचानाओं तथा परामर्शदाता द्वरा प्रदत्त प्रोत्साहन पर आधारित होती है | इस सम्पूर्ण कार्य के लिए अच्छे नियोजन की आवश्यकता होती है|

५) अन्वेषण-आत्म .Self Introspection)- परामर्श प्रक्रिया में परामर्श दाता का यह कतर्व्य है कि वह परामर्शी से अधिक से अधिक सूचनाएं प्राप्त करे | परामर्शी को इस प्रक्रिया में निष्क्रिय श्रोता के रूप में नहीं रहकर एक क्रियाशील अभिकर्ता के रूप में होना चाहिए | समस्या के समाधान में कर्मचारी का सहयोग अतिआवश्यक है |

६) व्याख्या करना .Explanation) : परामर्शदाता को चाहिए कि वो छात्र का पर्याप्त समय तक अवलोकन करके और आवश्यकतानुसार मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का उपयोग करके उस की योग्यताओं और क्षमताओं का निर्धारण करता है तथा परीक्षण काल में उनको इनका ज्ञान भी करता है |

७) विश्लेषण .Analysis): परामर्श प्रक्रिया का सबसे अधिक महत्वपूर्ण बिंदु विश्लेषण है | छात्र को अपनी योग्यताओं एवं क्षमताओं के ज्ञान के साथ –साथ अपनी विशेषताओं का विश्लेषण करने में सक्षम होना चाहिए | परामर्शदाता इस कार्य के लिए अवलोकन और मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का प्रयोग कर सकता है |

८) करणस्पस्टी.Clarification) : व्याख्या एवं स्पस्टीकरण में अंतर करना कठिन है| स्पस्टीकरण व्याख्या का एक अंग है| परामर्शदाता के लिए प्रत्यय को अधिक बोधगम्य बनाने की क्रिया स्पस्टीकरण है|

९) स्वीकृति.Acceptance): कुछ मनोवैज्ञानिकों का मत है कि परामर्शदाता कों प्रत्येक कार्य स्वयं करना चाहिए और परामर्शदाता कों अपनी स्वीकृती नहीं देनी चाहिए |

१० प्रवलन)Reinforcement): प्रेरणा की उपस्थिति और क्रमिक सफलता का ज्ञान अधिगम प्रक्रिया के महत्वपूर्ण अंग है कुछ मनोवैज्ञानिकों ने प्रवलन के स्थान पर पुरस्कार और दंड शब्द का प्रयोग किया है | परामर्शदाता कों छात्र की सहायता ऐसे कार्य कों चुनने के लिए करनी पड़ती है जिसको करने में वो सर्वथा सक्षम हो |

११) मूल्यांकन.Evaluation) : कर्मचारियों कों ठीक ढंग से कार्य करने के प्रेरणा मिले एवं कमियों कों दूर करने के लिए ठीक तरीके से फीडबैक भी दिया जाय इसके लिए कार्यों का ठीक ढंग से मूल्यांकन भी किया जाना अपेक्षित है |

इसके अतिरिक्त महाविद्यालयों में परामर्श के अन्य उद्देश्य और लक्ष्यों की चर्चा हम आगे करेंगे –

महाविद्यालयों में परामर्श कार्यक्रम के लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives of Counselling Programmes in Colleges)-

महाविद्यालयों में शिक्षा प्राप्त कर रहे विद्यार्थियों की प्रमुख आवश्यकताएं समायोजन तथा व्यावसायिक तैयारी और सफलता से सबंधित होती है। इससे पहले के खण्डों में विद्यालयों में निर्देशन के विभिन्न क्षेत्रों का वर्णन किया गया है। यहां अधिक उपयुक्त यह प्रतीत हो रहा है परामर्श कार्यक्रम की उन विभिन्न सेवाओं का वर्णन किया जाय जिन्हें कॉलेज, विश्वविद्यालय या अन्य संस्थानों में निर्देशन कार्यक्रम से विद्यार्थियों को प्रदान किया जाता है।

महाविद्यालय के स्तर पर विभिन्न सेवाओ का वर्णन किया जा रहा है जो की विद्यार्थी को दिया जाना चाहिये -

1 संस्था के प्रति पूर्वाभिमुखीकरण कार्यक्रम पूर्वाभिमुखीकरण कार्यक्रम का उद्देश्य - विद्यार्थियों को संस्था की भौतिक, शैक्षिक, नैतिक संरचना से अवगत कराना| विद्यार्थियों को संस्था में उपलब्ध सुविधाओं एवं सेवाओं का अधिकतम उपयोग के लिए प्रोत्साहित करना तथा संस्था की व्यवस्था संरचना में विद्यार्थियों को समायोजित होने में सहयोग देना होता है। इस कार्यक्रम के निम्नांकित लक्ष्य और उद्देश्य होते है -

* संस्था में पुस्तकालय, प्रयोगशाला, उपचार केन्द्र, क्रीड़ा क्षेत्र व्यवस्था के बारे में विद्यार्थियों को अवगत कराना।
* संस्था में कार्यरत शिक्षण संकाय से परिचित करवाना (शिक्षणगण)|

(विद्यार्थियों को बताना जिससे कि छात्र यह सुनिश्चित कर सकें कि वे किन अध्यापकों से क्या लाभ प्राप्त सकते है (

* शुल्क मुक्ति ,छात्रवृति-, स्टाइपेन्ड आदि की व्यवस्था के बारे में बताना |
* संस्था के नियमों, उपनियमों और संगठनात्मक संरचना के बारे में विद्यार्थियों को जानकारी देना।
* संस्था के अन्दर प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी हेतु विशेष पाठयक्रम,पत्राचार पाठयक्रम के बारे में जानकारी देना।
* संस्था की परंपराओं,सम्पन्न होने वाले प्रमुख समारोहों,सम्मेलनों ,अपेक्षाओं, आदि के बारे में विद्यार्थियों को सूचित करना।

उपरोक्तानुसार वर्णित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु विवरणिका,छात्र हस्तपुस्तिका-, फिल्म स्लाइड तथा छात्र सम्मेलनों में संकाय द्वारा वार्ता के आयोजन जैसे माध्यमों का उपयोग किया जाता है।

(2) **सतत मूल्याकन कार्याक्रम (Continuous Evaluation Programme)-** यह अपेक्षा की जाती है कि प्राथमिक एंव माध्यमिक स्तर पर निर्देशन कार्यक्रम के माध्यम से छात्रों को अपनी बुद्रि, अभिक्षमता ,रूचियो, अभिवृतियो, योग्यताओं और कमियो की जानकारी प्राप्त हुई होगीगी। यह आवश्यक नहीं किन्तु इससे पहले की सेवाऐं विद्यार्थियो अनिवार्यतः प्राप्त हुई हो , जिन छात्रों को पहले मूल्यांकन सेवा का लाभ ,हैप्राप्त हुआ होउनके लिये भी सतत मूल्यांकन , की आवश्यकता की पूर्ति की जाती है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि छात्र सम्बन्धी के अभिज्ञान अभिलेख संचयी आधार पर तैयार किया जाना चाहिए। अभिलेख में एक छात्र ,योग्यतओं, सीमाओं, कालेज के अन्दर तथा बाहर की संवेगिक एंव सामाजिक समस्याओं, शैक्षिक एवं सहशैक्षिक प्रगति-,स्वास्थ्य,शौक जैसा विवरण सतत अभिलिखित होने चाहिए।

(3) व्यावसायिक पूर्वाभिमुखीकरण सेवा (Vocational Orientation Programme)- इस कार्यक्रम के माध्यम से विद्यार्थियो को व्यावसायिक विकल्पों के चयन और अपनी पंसद के रोजगार के लिये उपयुक्त दृष्टिकोण विकसित करने में सहायता देने के अतिरिक्त विद्यार्थियों को आवश्यक तैयारी करने के लिये प्रशिक्षण आदि के बारे में योजना बनाने में भी सहयोग दिया जाता है। इसके अन्तर्गत निम्न कार्य और गतिविधि सम्मिलित की जाती है।

1 उद्योग एंव व्यवसाय के क्षेत्र में हो रही घटनाओं तथा उपलब्ध होने वाले अवसरों के बारें में सुचना प्राप्त करना।

2 विभिन्न व्यवसायों के लिये आवश्यक योग्यताओं और क्षमताओं का विवरण तैयार करना।

3 विद्यार्थियों का यह निर्धारित करने में सहयोग देना कि उसे किस व्यवसाय को अपनाना है, तथा यह जानने हेतु मदद देना कि विद्यार्थी का इस व्यवसाय को प्राप्् करने हेतु क्या तैयारी करनी होगी।

4 व्यावसायिक सूचना देने के लिये कक्ष की व्यवस्था और देखरेख, सूचना कक्ष में सूचनाओं को प्रदर्शित करना चाहिये |

5 व्यवसाय जगत के बारे में उद्यमियो ,आधिकारियों, उद्योग, जगत के अन्य महत्वपूर्ण एवं अनुभवी व्यक्तियों की वार्ताओं का आयोजन करना जिनसे विभिन्न प्रकार के अवसरों की , जानकारी विद्यार्थियों को प्राप्त हो तथा उस दिश ा में उनके प्रयासों का उत्साहवर्धन हो।

6 करियर सम्मेलनों का आयोजन करना जहां एक ही सम्मेलन स्थल पर विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञ क्षेत्र विशेष में अपने अनुभवों से विद्यार्थियों को परिचित कराते है।

7 व्यावसायिक सूचनाओं के वितरण के लिए चलचित्रो और स्लाइड का प्रदर्शन करना

8 औद्योगिक इकाइयों, वाणिज्यिक इकाइयों तथा अन्य कार्यस्थलों के लिए विद्यार्थियों के लिए भ्रमण आयोजित करनाजिससे कि विद्यार्थियों को कार्य करने की दशाओं के बारे में प्रत्यक्ष जानकारी , प्राप्त हो सके।

महाविद्यालय परामर्श दाता की आवश्यक विशेषताएँ (Necessary Characterstics of College Counsellor)

महाविद्यालय में परामर्श देने के लिए परामर्शदाता में कुछ निश्चित विशेषताएं होनी चाहिए जो निम्नलिखित हैं –

१. **नैतिक व्यवहार (Moral Behaviour) :**परामर्शन प्रक्रिया के दौरान परामर्शदाता परामर्शी से उसकी अत्यंत गुप्त बातें या सूचनाये प्राप्त करता है ये बातें बिना परामर्शी के स्वीकृति के | गोपनीयता का गुण परामर्शदाता में :अत | किसी अन्य के सामने प्रकट नहीं करनी चाहिए तिरिक्त परामर्शदाता को अपने सीमाओं का स्पष्ट ज्ञान इसके अ | आवश्यक रूप से होना चाहिये होना चाह िये | उसे किसी भी परामर्शी के साथ निकट सम्बन्ध स्थापित नहीं करने चाहिये | | यह उसके नैतिक नियमों के खिलाफ होते हैं

२. **लचीला पन (Flexibility):** परामर्शदाता कों कभी भी कठोर नहीं होना चाहिए उसे | के प्रति सचेत होना चाहिए और तदनुसार अपने व्यवहार में परिपरामर्शीवर्तन करना चाहिए |

३. **अवबोध (Understanding):** परामर्शदाता में परामर्शी की समस्याएं समझने की योग्यता होनी चाहिए | उसमे समस्यायों कों समझने की सूझ होनी चाहिए |

४. **स्वीकृति (Acceptance):** परामर्शी के पास परामर्श या सहायता प्राप्त करने के लिए आता है | अतः परामर्शदाता कों उसकी समस्याओं की गंभीरता कों स्वीकार करना चाहिए |

५. **नेतृत्व (Leadership Qualities):** परामर्शदाता में नेतृत्व के भी गुण होने चाहिए जिससे | की वो कर्मचारियों का ठीक ढंग से नेत ृत्व भी कर सके |

६. **स्वस्थ तथा प्रभावशाली आकृति (Healthy and Effective Personality):** परामर्शदाता स्वस्थ प्रभावशाली व्यक्तित्व ,मृदुभाषी , वालाचेतनावान तथा सहनशील होना , |चाहिए

७. **बौद्धिक क्षमता (Intellectual Ability):** परामर्शदाता कों प्रतिभावान तथा कुसग्र बुद्धि वाला होना चाहिए |

८. **व्यावसायिक निष्ठा (Vocational Dedication):** परामर्शदाता कों अपने व्यवसाय के प्रति निष्ठावान होना चाहिए उसे कर्मचारियों की समस्याओं के सुनने तथा सुझाव देने के लिए | |सदैव तत्पर रहना चाहिए

९. **समायोजित व्यक्तित्व (Adjusted Personality):** परामर्शदाता कों आत्मज्ञान होना चाहिएआलोचना |उसे सदैव अपनी कमजोरियों आता सीमाओं के प्रति सचेत रहना चाहिए | |का स्वागत करने वाला तथा आत्म विश्वासी होना चाहिए

१०.**कुशल मनोवैज्ञानिक (Expert Psychologist):** परामर्शदाता कों एक कुशल शिक्षा मनोविज्ञानी होना चाहिए उसके |उसे संगठनात्मक मनोविज्ञान का विशेषज्ञ भी होना चाहिए| |पास मानव व्यवहार के सिद्धांतों का ज्ञान होना चाहिए

११.**कुशल प्रबंधक (Expert Manager):** परामर्शदाता में कुशल प्रबंधक के गुण होने चाहिए |

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. महाविद्यालयों में परामर्श कार्यक्रम के क्या लक्ष्य एवं उद्देश्य होते हैं ?
2. संक्षिप्त में महाविद्यालय परामर्श दाता की आवश्यक विशेषताएँ लिखिये|
3. महाविद्यालय परामर्शन के प्रयोजन का विवरण लिखिये |

सारांश (Summary)

छात्रों इस पाठ को सारांश में पढ़ा जाए तो स्पष्ट है की महाविद्यालय में छात्रों को सही दिशा निर्देशन के लिए परामर्श कि आवश्यकता होती है ऐसे में परामर्श कार्यक्रम का आयोजन करना अति महत्वपूर्ण | उत्तर किशोरावस्था और किशोर अवस्था का प्रारंभ छात्रों के| होता है मन में भटकाव कि स्थिति पैदा कर सकता है उन्हे :अत ,एसी अवस्था में उन्हे विभिन्न प्रकार की समस्याओ का सामना करना पड़ता है | करियर -जैसे |यह समस्या किसी भी प्रकार की हो सकती है | परामर्शदाता की आवश्यकता होती है व्यक् ,स्वतन्त्र निर्णय लेने कि क्षमता ,संबंधिततिगत आकर्षण ,सामाजिक और पारिवारिक समायोजन , यदि ऐसी समस्याओ का निस्तारण समय से नहीं होता तो इनका |रोज़गार या जीवन वृति आदि व अन्य

:अत | इसलिए परामर्शदाता की भूमिका आधिक महत्वपूर्ण हो जाती है | दुष्परिणाम भी हो सकता है महाविद्यालय में समय समय पर परामर्श कार्ःयक्रम का आयोजन होना चाहिये एवम स्थाई परामर्शदाता की नियुक्ति अवश्य होनी चाहिये |

अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची(Suggested Readings)

- Woolfe, R. and Dryden, W (1996) Handbook of Counselling Psycology. New Delhi, Sage Publications
- Ray. A. and Asthana, M. (2005). Guidance and Counselling, Concepts, Areas and Approaches, Patna, Motilal Banarsidas Co.Ltd.
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) शिक्षा मनोविज्ञान, पटना, भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2005)आधुनिक मनोविज्ञान, वाराणसी, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- सिंह, अरूण कुमार, (2001) उच्चतर मनोविज्ञान, पटना,भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- Lewis, E.C. (1970). Psychology of Counselling, New York, Holt Rienehant and Winston.

निबंधात्मक प्रश्न:-

1 महाविद्यालय में परामर्शक के क्या मुख्य कार्य होते हैं ?

2 परामर्श में महाविद्यालयी क्या लक्ष्य होते हैं ? इसमें परामर्शक की क्या भूमिका होती है ?

3 आजकल के युवा तनावग्रस्त हैंजिसके कारण वह नशे जैसी प्रवृति और आत्महत्या की ओर , लिए परामर्शदाता इस स्थिति से बचने के | बढ़ रहे हैं उनकी किस प्रकार मदद कर सकता है ? | विस्तार से लिखिये